भोर की वेला

(सामाजिक उपन्यास)

प्रस्तुत कृति

'भोर की वेला' एक संवेदनशील, यथार्थवादी, मौलिक सामाजिक उपन्यास है। नारी की अन्तः पीड़ा और उसका उत्पीड़न ही इसका प्रमुख आधार है।

नारी जननी है, यहाँ पर वह धरती से भी बड़ी है। उसका आदर्श ही उसका जीवन है, उसकी समाई ही उसकी शक्ति है। उसे व्यथा के घूंट पीने पड़ते हैं। उसे मर्माहत होना पड़ता है। यह उसकी सबसे बड़ी विडम्बना है।

'भोर की वेला' नारी के जागरण की एक कहानी है। यह भाव-प्रधान उपन्यास भावनाओं की धारा में बहकर नारी के चरित्र को गौरवान्वित करता है।

उपन्यास आद्योपान्त रोचक तथा पठनीय है। इसके पात्र कभी भुलाये नहीं जा सकते।

६२/१६१ हरवंश मोहाल,
कानपुर

कमल शुक्ल

"चलो, नीलिमा ! अब हम लोग होटल चलें। बहुत देर हो गई है। देखो, सूरज डूबने जा रहा है।"

"चल रही हूँ। जब से तुम आये हो, तुम्हें जाने की ही जल्दी हो रही है। हम लोग नैनीताल घूमने आये हैं, होटल के कमरे में बन्द होकर बैठने नहीं।"

यह कहने के साथ नीलिमा ने ट्रांजिस्टर बन्द कर दिया। उसने घास पर बिछी चादर उठा ली। उसे एयरबैग में रखते हुए कनखियों से अनूप की ओर देखा। दोनों की आँखें चार हो गईं। दोनों ही मुस्करा दिये। सामने दूरी पर दोनों घोड़े पेड़ों से बँध रहे थे। उनके मालिक पहाड़ी युवक बैठे आपस में बातें कर रहे थे।

अनूप टिफिन में होटल से खाना लाया था। नीलिमा ने थरमस में चाय भरवाई थी। दोनों ने सवेरे से अब तक पिकनिक मनाई। अब उन्हें होटल जाना था। उसी की तैयारी में लगे थे।

एक घोड़े पर नीलिमा बैठी। दूसरे पर सवार था अनूप। पहाड़ी युवक घोड़ों की रस्सी पकड़े आगे-आगे चल रहे थे। उन्हें खुशी हो रही थी। उनके पैर जल्दी-जल्दी उठते। वे सोच रहे थे कि जैसे ही यह बाबू और मेम साहब होटल पहुँचेंगे, वैसे ही उन्हें किराया मिल जायेगा। वे किराये पर घोड़े लाये थे। उनका रोज का धन्धा यही है।

रास्ते में नीलिमा ने अनूप से पूछा—"अब नैनीताल में और क्या देखना बाकी रह गया है ? कल के लिए उसका प्रोग्राम बना लो।"

"नैनीताल में देखना क्या है ? छोटा-सा शहर है। पुराने जमाने में इन झीलों को लोग तल्लीताल और मल्लीताल कहते थे। आजकल इन्हें थैंकवैंग कहा जाता है। पिकनिक पर हम लोग कल ही गये थे और आज भी पिकनिक से ही लौट रहे हैं। यहाँ रहना है, तो बस घूमना-ही-घूमना है। कल भी हम लोग घूमने चलेंगे। घोड़े सवेरे ही मँगा लेंगे।" अनूप ने उत्तर में

कहा।

नीलिमा कुछ क्षणों तक मौन रही। फिर धीरे से बोली—"मेरा मतलब यह है कि नैनीताल आये हम लोगों को लगभग एक सप्ताह हो रहा है। यहाँ जो कुछ देखना था, देख लिया। इसके बाद हमें मंसूरी चलना है। वहाँ हैपीवेली पर मेरी सहेली मनोरमा रहती है।"

"मंसूरी भी चलेंगे, नीलिमा। अभी नैनीताल से मेरा मन भरा नहीं। अरे हाँ, तुमने सुना होगा।"

"क्या ?"

"नैनीताल में नैनादेवी है। पुराने जमाने में इस जगह को लोग नैनागढ़ कहते थे। देवी का मन्दिर यहाँ से दूर है। कल हम लोग वहाँ पर चलेंगे। मैं घोड़े वाले पहाड़ियों से आज ही कह दूंगा। वे कल सवेरे जल्दी आ जायेंगे।"

"नैनादेवी में क्या देखना है! मूर्ति पत्थर की होगी। मन्दिर भी पत्थर का होगा।"

"तो फिर तुम्हारे लिए संगमरमर कहाँ से लाया जाए, नीलिमा? नैनादेवी एकदम सच्ची है। वहाँ जो लोग जाकर मनौती मानते हैं, उनकी कामना अवश्य पूरी होती हैं। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। हम लोग भी कुछ मनौती मानेंगे, नीलिमा। बोलो, तुमने क्या सोचा है?"

"मैंने सोचा है कि देवी से यह वरदान मागूंगी कि हम लोग साथ ही जियें, साथ ही मरें। हमारे प्यार का बन्धन कभी न टूटे। हम जन्म-जन्म तक एक-दूसरे के ही बने रहें।"

"बस, तुमने यही सोचा है, नीलिमा?"

"हाँ, और तुमने क्या सोचा है?"

"मैंने तो एक नई बात सोची है।"

"क्या?"

"मैं देवी से कहूँगा कि वे जल्दी से तुम्हारी गोद भर दें। जब तुम्हारी गोद में नन्हा मुन्ना खेलेगा, तो हम लोग आकर देवी के दर्शन करेंगे, प्रसाद चढ़ायेंगे। हार और फूलों से देवी माता को लाद देंगे।"

"तुम अजीब आदमी हो। मुझे तुम्हारी यह बातें बिलकुल अच्छी नहीं

लगती। अभी हम लोगों की कोर्टशिप चल रही है और तुम...।"

"अच्छा, एक बात बतलाओ, नीलिमा !"

"क्या ?"

"तुम्हें मुझसे प्यार है या नहीं ?"

"यह पूछने की बात नहीं है, अनूप बाबू। प्यार एक ऐसी कहानी है जो बिना सुनाये ही लोगों की समझ में आ जाती है। तुम्हें मुझसे प्यार है और मुझे तुमसे। यह हकीकत है इससे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता।"

अब अनूप हँसने लगा और हँसते-हँसते बोला—"जब हम दोनों को एक-दूसरे से प्यार है, तो फिर हमारा ब्याह होकर रहेगा। इसमें कोई शक नहीं।"

"और क्या कहना चाहते हो, तुम ?"

"और जब शादी हो जायेगी, तो फिर बच्चे जरूर होंगे। इससे भी तुम इन्कार नहीं कर सकती हो।"

"आगे कहो। मैं सुन रही हूँ।"

"फिर जब बच्चा होगा, तो हम उसे लेकर देवी के मन्दिर आयेंगे मुझे यही मनौती माननी है।"

"मैं तुमसे बहस नहीं करूँगी। तुम बेकार की बातें करते हो।"

यह सुनते ही अनूप जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ा। रास्ता तय हो रहा था। घोड़े आगे बढ़ रहे थे। होटल नजदीक आता जा रहा था। अब वह दूर से दिखलाई देने लगा था।

जब भावी दम्पति होटल के पोर्टिको में आये, तब दिशाएँ धूमिल हो चुकी थीं और आसमान में रुपहले दीये जलने लगे थे। अनूप ने दोनों घोड़े वालों को उनकी मजदूरी दी और फिर उनसे सवेरे आने के लिए कह दिया। वह बहुत खुश था। खुशी उसमें समा नहीं रही थी। वह रह-रहकर उसमें से फूटी पड़ रही थी। इसी खुशी के आलम में वह गुनगुनाता हुआ जीने की सीढ़ियाँ चढ़ने लगा।

× × ×

नीलिमा कर्नल की बेटी थी। उसके पिता बंसीलाल मिलिट्री के एक

पेंशन मिलती थी और वे घर पर ही रहते थे। उनके एकमात्र कन्या नीलिमा थी। वे उसकी शादी ऐसे युवक के साथ करना चाहते थे, जिससे उसका मन मिल जाए। यही कारण था कि उन्होंने अनूप के साथ उसे कोर्टशिप के लिए नैनीताल भेजा था।

अनूप पटना का रहने वाला था। कर्नल वंसीलाल भी पटना के ही निवासी थे। अनूप के पिता फाइनेन्सर थे। उनका देन-लेन का काम वहुत ऊँचे पैमाने पर होता था। वे महाजन थे। व्याज की कमाई खाते थे। उन का एकमात्र धन्धा यही था। उन्हें भी ईश्वर ने अकेली ही सन्तान दी थी। अनूप इकलौता था। वह मुँह में चाँदी का चम्मच लेकर पैदा हुआ था। उसके माँ-वाप का कहना था कि जव से अनूप का जन्म हुआ, उनकी आमदनी वढ़ गई। उनके घर में रौनक आ गई। उनका लड़का होनहार है। वह अपने साथ दौलत-ही-दौलत लाया है।

नीलिमा ग्रेजुएट थी और अनूप भी एम० ए० था। दोनों के विचार एक-दूसरे से मिलते थे। वे चंद दिनों में ही एक-दूसरे के स्वभाव से पूर्णतः परिचित हो गये थे।

नीलिमा ने अपने पिता को पत्र लिखा, जिसमें यह स्पष्ट कर दिया था कि अव वह जल्दी ही पटना आने वाली है। नैनीताल से दो-एक दिन में चल देगी। उसके वाद मन्सूरी होती हुई पटना पहुँचेगी। वह वहुत खुश है। अनूप से उसे कोई भी शिकायत नहीं है।

नैनादेवी जाकर भावी दम्पति लौट आये। वे थैंकवेंग पर नित्य जाते। नाव पर वैठते। नौका विहार का आनन्द लेते। इस पार से उस पार जाते। वे देखते कि झील में एक नहीं अनेकों नावें चल रही हैं। सभी पर सैलानी जोड़े वैठे हैं। कोई गीत गाता। कोई गुनगुनाता। किसी के हाथ नाव से नीचे लटक जाते और वे जल-क्रीड़ा करते।

वह दिन भी आ गया, जव अनूप नैनीताल से विदा हुआ। दोनों मन्सूरी आये। वे माल रोड के एक सुन्दर सजे हुए होटल में जाकर ठहरे। होटल वड़ा रंगीन था। वहाँ का वातावरण अपने में एकदम निराला था। आर्केस्ट्रा वजता ही रहता। कोई भी उदास नहीं रह पाता। होटल आलीशान था। उसकी सज्जा-सज्जा अपने में अनोखी थी। मन्सूरी का वह वहुत

यहाँ से देहरादून लगभग चालीस किलोमीटर दूर था। यही कारण था कि नैनीताल से मन्सूरी में भीड़ अधिक थी।

नीलिमा अनूप को लेकर मनोरमा के घर पहुँची। मनोरमा ने उसे देखा तो उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। दोनों ने साथ-ही-साथ कॉलेज छोड़ा था। दोनों ही ग्रेजुएट थीं। नीलिमा कर्नल की बेटी थी और मनोरमा एक व्यापारी की। महुआ टोली में मनोरमा के पिता रामधन की कपड़े की कोठी थी। उन्होंने बेटी का व्याह एक फारेस्ट रेंजर के साथ किया था। जब व्याह हुआ था, तब मनोरमा के पति देहरादून में तैनात थे। उसके बाद तबादला मन्सूरी में हो गया और वे हैपीवैली में रहने लगे।

मनोरमा के पति का नाम दिवाकर था। वह भी ग्रेजुएट था। दोनों की शादी को दो साल हो गये थे, लेकिन अभी तक उनके कोई सन्तान नहीं हुई थी।

जिस समय नीलिमा मनोरमा के घर आई, तब दिवाकर ड्यूटी पर गया हुआ था, वह घर में नहीं था। मनोरमा ने नीलिमा से शिकायत की। वह कहने लगी—"जब यहाँ मेरा घर मौजूद है, तो फिर तुम्हें होटल में ठहरने की क्या जरूरत थी, नीलिमा? चलो, मैं तुम्हारे साथ चलती हूँ। अभी चलकर होटल से सामान उठा लाओ। अरे पगली, तू भूल गई क्या? हमारी लेक्चरर हम लोगों से क्या कहती थी?"

यह कहते-कहते मनोरमा को हँसी आ गई। वह जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ी। तभी नीलिमा के मुँह से निकल गया—"वे पुरानी बातें तुम्हें अब भी याद हैं, मनोरमा। लेक्चरर कहती थी कि नीलिमा और मनोरमा की जोड़ी ऐसी है, जैसे राधा-कृष्ण की। देखने में वे दो शरीर हैं, लेकिन इनकी जान एक ही है।"

नीलिमा की यह बात सुनकर अनूप भी हँसने लगा। तभी मनोरमा ने नीलिमा का हाथ पकड़ा। वह उसे अपनी ओर खींचती हुई बोली—"तुम यहाँ बैठने नहीं आई हो, नीलिमा। चलो, काम करो। देखो, मैं गैस के चूल्हे पर चाय चढ़ाती हूँ। तुम स्टोव जला लो और उस पर पकौड़ियाँ बना लो।"

इस पर नीलिमा हँसने लगी और मीठा गुस्सा दिखाकर वोली—"मैं ही मेहमान हूँ और मैं ही अपने लिए पकौड़ियाँ बनाऊँ। तुम वहुत अच्छी सहेली हो, मनोरमा।"

"अच्छी नहीं, तो क्या खराब हूँ ? मेरे घर में जो आयेगा, उसे काम बरावर करना पड़ेगा।"

इस पर नीलिमा तो वोलते-वोलते ही रह गई। अनूप हँस रहा था। वह मनोरमा की ओर मुखातिव हुआ और प्रसन्न मुद्रा में कहने लगा—"तुम्हारे सिद्धान्त वहुत अच्छे हैं, मनोरमा जी। मैं तुमसे वहुत खुश हूँ। जी चाहता है कि हमेशा तुम्हारे ही पास वैठा रहूँ और तुम्हारी ही वातें सुनता रहूँ। इसका मतलव यह हुआ कि दिवाकर वावू वड़े भाग्यशाली आदमी हैं। जो खुशनसीव होता है, उसे ही मनचाही वीवी मिलती है।"

"यह तुमने कैसे कह दिया, अनूप वावू, कि मैं अपने पति की मनचाही वीवी हूँ ? हम लोगों में तो रोज झगड़ा होता है, कभी नहीं पटती।"

"वह प्यार की लड़ाई होगी। वैसे तुम लोगों में झगड़ा कभी नहीं हो सकता, मैं दावे के साथ कहता हूँ।"

"अच्छा, एक वात पूछूँ, अनूप वावू ?"

"क्या ?"

"तुम कोर्टशिप के लिए आये हो। तुमने नीलिमा के लिए क्या सोचा है ?"

"नीलिमा के लिए सोचना ही क्या है ? सामने वैठी है, खुद उससे पूछ लो।"

फिर जैसे ही मनोरमा नीलिमा की ओर उन्मुख हुई, वैसे ही नीलिमा उठकर चल दी और स्टोव जलाने लगी।

मनोरमा ने अपनी सहेली का वह व्यवहार देखा, तो हँस दी और हँसते-हँसते अनूप से कहने लगी—"नीलिमा वड़ी सयानी है। इसीलिए उठकर चली गई। उसने दूध-का-दूध पी डाला। मट्ठे का झंझट नहीं रखा। तो मैं यह आशा करूँ कि कोर्टशिप पक्की है और अगले महीने ही तुम्हारी शादी हो जायेगी ?"

अनूप ने हाँ-द्योतक सिर हिलाया। उसके होंठों पर मुस्कराहट थी।

उसके काले, चमकीले और रेशमी घुंघराले बाल पंखे की हवा में उड़ते। कोई-कोई बालों का गुच्छा आकर उसका माथा चूमने लगता। वह गोरा-चिट्टा जवान था। उसका बदन कसा हुआ ही नहीं, खूब भरा था। सुरमई रंग की मूंछें चेहरे को और भी आकर्षक बना देतीं। उसने रेशमी बुशर्ट और रेशमी ही पेंट पहन रखा था। सेंट से रुमाल ही नहीं, उसके कपड़े पूरे-के-पूरे तर थे। हवा में सुगन्ध समा रही थी। वह पूरे-के-पूरे वातावरण को महर-महर महका रही थी।

मनोरमा की निगाह अनूप के चेहरे पर टिककर रह गई। उसके अन्तःकरण ने कहा कि यह जवान अपने में अजीब है। यह गोरा है जबकि दिवाकर का रंग काला है। यह हँसमुख है, जबकि दिवाकर हमेशा गम्भीर ही बना रहता है। इसे प्यार करना आता है, यह प्यार का राही है, जबकि दिवाकर अपने में एकदम नीरस है। दिवाकर फारेस्ट रेंजर है, उसे इक्कीस सौ रुपये वेतन मिलता है, जबकि अनूप सौ-दो सौ रुपया रोज खर्च करता है। यह उसके लिए मामूली-सी बात है।

स्टोव पर पकौड़ियाँ बन रही थीं, लेकिन गैस का चूल्हा नहीं जला। मनोरमा एकटक अनूप की ओर देखे जा रही थी। उसे बोध ही नहीं था कि पकौड़ियाँ बन रही हैं और चाय अभी बनाना है।

नीलिमा ने दूर से ही मनोरमा को टोका। वह बोली, "अरे मनोरमा! अब देर क्यों कर रही हो? जल्दी से चाय चढ़ा दो। पकौड़ियाँ तैयार हो गई हैं।"

तब मनोरमा को होश आया और वह जल्दी-जल्दी जाकर गैस का चूल्हा जलाने लगी।

२

यद्यपि नीलिमा और अनूप इस बात के लिए राजी नहीं थे कि वे होटल का कमरा छोड़ दें और मनोरमा के घर में [illegible] रहने लगें; लेकिन मनोरमा नहीं मानी। उसके आगे भावी दम्पति [illegible]। वह

दोनों के साथ गई और होटल से उनका सामान उठा लाई।

रात को दिवाकर जब ड्यूटी से घर आया, तो मेहमानों को देखकर वहुत खुश हुआ। नीलिमा को वह पहचानता था। अनूप का परिचय मनोरमा ने उसे आते ही दे दिया था। उसने दूसरे दिन के लिए यह प्रोग्राम वनाया कि कल सवेरे जीप पर वैठकर सव लोग मन्सूरी घूमने जायेंगे।

मनोरमा खुश थी। वह सोच रही थी कि जव घूमने ही जाना है, तो फिर पिकनिक क्यों न मनाई जाये। मैं टिफिन लेकर जाऊँगी और आग्रह करके अनूप को खिलाऊँगी। वह युवक देखने में ऐसा लगता है जैसे कोई राजकुमार हो।

दिवाकर ने दूसरे दिन की छुट्टी ले ली। टिफिन और थरमस तैयार थे। मनोरमा नीलिमा के साथ आकर जीप में वैठ गई। जीप चल पड़ी। दोनों सहेलियाँ पीछे वैठी थीं। दिवाकर ने अपनी वाँह अनूप के गले में डाल दी। दोनों थोड़े समय में ही एक-दूसरे के विलकुल करीव आ गये थे।

शहर से काफी दूर जाकर जीप रुकी। यहाँ छोटी-सी पहाड़ी थी। उसी के नीचे तराई का मैदान था। जहाँ की जमीन पर हरा मखमली घास का विछौना विछा था। झरना झर रहा था। उसका कलकल निनाद कानों को वहुत प्यारा लगता। सब लोग वहीं पर रुके। झरने पर मुँह-हाथ धोया। उसका ठण्डा पानी पीया। फिर वे प्रकृति का सुहावना दृश्य न जाने कितनी देर तक ललचाई आँखों से देखते रहे।

नीलिमा ने ट्रांजिस्टर खोल दिया। उस पर फिल्मी गाने आने लगे। चारों सैलानी वहुत खुश थे। वे ताश के पत्ते खेलने वैठ गये। उसमें बहुत समय व्यतीत हो गया। उसके वाद लंच लिया, तीसरे पहर की चाय और नाश्ता करने के वाद जाने की योजना वनने लगी।

तभी नीलिमा को प्यास लगी। वह पानी पीने झरने पर गई, लेकिन यह क्या! अचानक उसका पैर फिसल गया और पत्थर पर मुँह के वल गिरी। उसने स्वयं को वहुत सँभाला, मगर चोट फिर भी आ गई। दाहिने पैर में मोच आ गई थी। उससे चला नहीं जा रहा था। किसी तरह उसे जीप में वैठाया गया।

मनोरमा ने घर पर आकर डॉक्टर वुलाया। उसने नीलिमा के पैर

को देखा तो फौरन ही कहने लगा कि इनकी पैर की हड्डी में फ्रैक्चर हो गया है। सबसे पहले एक्स-रे कराओ और मुझे दिखलाओ। अगर फ्रैक्चर है, तो प्लास्टर जरूर चढ़ेगा।

ऐक्स-रे लिया गया। वास्तव में नीलिमा के पैर की हड्डी बीच से फट गई थी। वह डॉक्टर की क्लीनिक में ले जाई गई। वहीं प्लास्टर चढ़ा। उस के वाद मनोरमा उसे घर ले आई। डॉक्टर का कहना था कि प्लास्टर पूरे एक महीने वाद कटेगा। इससे पहले किसी तरह भी ठीक नहीं हो सकती।

नीलिमा ने अपने पिता कर्नल वंसीलाल को लिखा कि वह एक महीने तक विस्तर की वंधनी बन गई है। प्लास्टर कटने के वाद ही पटना आयेगी। अभी वह मजवूर है।

अनूप ने भी अपने पिता ईश्वरलाल को सूचना दे दी कि अभी एक महीने तक उसे मन्सूरी में रहना पड़ेगा। चिन्ता की कोई वात नहीं है। नीलिमा के पैर पर प्लास्टर चढ़ गया है और हड्डी जल्दी ही ठीक हो जायेगी।

सवेरा होते ही दिवाकर काम पर चला जाता, दिन में कभी आता और कभी नहीं।

नीलिमा विस्तर पर पड़ी रहती। मनोरमा उसका मन वहलाने के लिए कुछ भी कसर न उठा रखती। उसने उसके पास पत्र-पत्रिकाओं का ढेर लगा दिया था। फल मेज पर ढेर-के-ढेर रक्खे रहते। वह घण्टों सहेली के पास वैठी उसका मनोरंजन किया करती।

दिवाकर भी नीलिमा का खयाल रखता। वह ड्यूटी पर जाने से पहले उसके पास देर तक वैठता। ऐसे ही जव रात को वापस लौटता, तो भी पहले नीलिमा के पास आता। उसका हाल पूछता, उसे तसल्ली देता।

अनूप सारे दिन नीलिमा के पास वैठा रहता। उसे वहुत ज्यादा अफसोस था कि नीलिमा के पैर में फ्रैक्चर हो गया। वह घूमने-फिरने से वंचित हो गई।

नीलिमा अनूप को प्रतिदिन ही टोकती। उसे जोर देकर कहती कि मेरे कारण तुम सजा क्यों भोग रहे हो। तुम्हें घूमने जाना चाहिए। घर में वैठे-वैठे जी ऊव जाता होगा। यही मनोरमा कहती और यही कहता

दिवाकर भी। मगर अनूप को संकोच लगता। उसका साहस साथ नहीं देता। वह तब मजबूर हो जाता, जब मनोरमा उसे अपने साथ घुमाने ले जाती। या फिर दिवाकर की छुट्टी होती और वह उसे लिए-लिए पूरी मन्सूरी में डोलता।

इस तरह दो सप्ताह बीत गये। एक दिन तीसरे पहर मनोरमा जबरदस्ती अनूप को अपने साथ घुमाने ले गई। दोनों जाकर एक पहाड़ी पर बैठ गये। तब गोरे और भूरे बादल आसमान पर दौड़ लगा रहे थे। मौसम बरसात का था। पानी बरसने की सम्भावना होने लगी।

पहाड़ीपर छोटा-सा तालाब था, जो चारों तरफ पत्थरों से घिरा था। उसमें निर्मल मोती जैसा जल था। कमल खिल रहे थे। सफेद हंसों के दो जोड़े उसमें न जाने कब से तैर रहे थे।

मनोरमा ने पानी में पैर लटका दिये। उसने अंजलि में थोड़ा-सा जल लिया। उसके छींटे अनूप के मुँह पर मार, मन्द-मन्द मुस्कराती हुई धीरे-से बोली—"मैंने कहा जी कि सोओ नहीं। आँखें खोलो और मेरी तरफ देखो।"

इस पर अनूप हँसने लगा और हँसते-हँसते बोला—"तो क्या मैं सो रहा हूँ ?"

"जो बोले न, हँसे न, उसे मैं सोया हुआ ही समझती हूँ।"

अनूप खामोश रहा। मनोरमा ने उसका ध्यान फिर अपनी ओर आकृष्ट किया। वह व्याकुल स्वर में बोली—"मैं तुम्हें देख रही हूँ, अनूप बाबू, तुम भी मुझे देखो।"

अनूप चौंका। बरबस ही उसकी निगाह मनोरमा के चेहरे पर जाकर टिक गई। उसने देखा कि मनोरमा का अंग-प्रत्यंग पुलक रहा था। उसकी आँखें हँस रही थीं। अनूप के मन ने कहा कि वास्तव में मनोरमा की जिन्दगी हँसती हुई है। उसने निगाह हटा ली और फिर तालाब में खिले कमलों की ओर देखने लगा।

तभी अनूप के मुँह पर पानी के छींटे फिर पड़े। इस बार भी वह चौंका। उसने सुना, मनोरमा कह रही थी—"तालाब में क्या देखते हो ? मुझे देखो।"

"तुम्हें क्या देखूँ, मनोरमा ? तुम्हें तो रोज ही देखता हूँ।"

"मैं भी तुम्हें रोज देखती हूँ। मैं झूठ नहीं वोलती अनूप बावू ! जब से तुम्हें देखा है, मैं पागल हो गई हूँ। तुम मेरे मन में बस गये हो। मेरी आँखों में समा गये हो। न जाने मुझे क्या हो गया है ! मैं खुद नहीं सोच पा रही हूँ।"

अब अनूप बुरी तरह चौंक गया। वह आँखें फाड़-फाड़कर मनोरमा की ओर देखने लगा था। उसने सपने में भी नहीं सोचा कि मनोरमा उसपर आसक्त हो जायेगी। वह धर्म-संकट में पड़ गया। उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं।

अभी अनूप सोच-विचार में ही था कि मनोरमा ने अपना सिर उसके दाहिने कन्धे पर टिका दिया। वह अधीर होकर बोली—"तुमने वतलाया नहीं, अनूप बावू, कि मैं तुम्हें कैसी लगती हूँ ?"

"तुम वहुत अच्छी हो, मनोरमा।"

यह कहने के साथ अनूप अलग हटकर बैठ गया। मनोरमा को उसका यह व्यवहार बहुत बुरा लगा। वह चिढ़ गई और असन्तुष्ट होकर बोली—"जब मर्द औरत को प्यार करता है, तो वह उसका मुँह-ही-मुँह देखा करता है; लेकिन जब औरत मर्द को चाहती है, तब मर्द ऐसे ही नखरे दिखलाता है। मैं पूछती हूँ कि मेरी देह में काँटे हैं क्या, जो तुम अलग हटकर बैठ गये ? यह मेरा अपमान नहीं तो और क्या है ?"

"मैं तुमसे क्षमा चाहता हूँ, मनोरमा। मैंने तुम्हारा कोई अपमान नहीं किया। दिवाकर बावू में क्या कमी है, जो तुम मेरी ओर झुक रही हो ? मैं नीलिमा के साथ कोर्टशिप के लिए आया हूँ, मेरा व्याह उसके साथ होगा।"

"तुम कोर्टशिप के लिए आये हो, तुम्हारा व्याह नीलिमा से होगा—इससे मैं इन्कार नहीं करती, लेकिन मेरा भी मन तुम्हारी ओर वरवस ही खिंच गया है। मैं···।"

अभी मनोरमा इतना ही कह पाई थी कि अनूप बीच में बोल उठा—"मैं गलत कदम नहीं उठा सकता, मनोरमा ! मैं पटना में रहता हूँ, तुम मन्सूरी में रहती हो। मेरा और तुम्हारा साथ कभी नहीं हो सकता।"

"नीलिमा के साथ तुम्हारा व्याह नहीं हुआ है, अनूप बाबू। उसे भूल जाओ। मुझसे शादी कर लो। मैं···।"

"तुमसे ?"

"हाँ, मुझसे।"

"लेकिन तुम तो विवाहित हो।"

"मैं दिवाकर बाबू को तलाक दे दूंगी। मैं उनसे सन्तुष्ट नहीं हूँ।"

"मुझे यह सब बिलकुल पसन्द नहीं है, मनोरमा। अगर तुम मुझे ज्यादा तंग करोगी तो मैं कल ही यहाँ से चला जाऊँगा।"

मनोरमा गुस्से से भड़क उठी। वह कुछ नहीं बोली। क्रोध से हाँफने लगी। अनूप उसकी गतिविधि देख रहा था। वह उठकर खड़ा हो गया और जाने का आयोजन कर उससे बोला—"चलो, मनोरमा, घर चलो। हम लोगों को आये बहुत देर हो गई है। तुम्हारे मन में जो दूषित विचार आ गये हैं, उन्हें निकाल दो। मैं किसी से कुछ नहीं कहूँगा। नीलिमा कुछ भी नहीं जानेगी और न समझ पायेंगे दिवाकर बाबू ही।"

मनोरमा ने कुछ भी जवाब नहीं दिया। वह अनूप के साथ चल दी।

यह लोग जब घर पहुँचे, तो दिवाकर आ चुका था। वह बैठा नीलिमा से बातें कर रहा था।

× × ×

मनोरमा की मनःस्थिति में तनिक भी सुधार नहीं हुआ। वह क्रोध से उबलती रही और सोचती रही कि अनूप को बहुत घमंड है। मेरा भी नाम मनोरमा नहीं। जो उसके अहंकार को चूर-चूर न कर दिया। वह जानता होगा कि उसने मेरा अपमान किया, वह जीत गया है। लेकिन मैं बदला जरूर लूंगी। बदले की भावना बहुत बुरी होती है। उसने मुझे पागल बना दिया है।

अभी नीलिमा का प्लास्टर कटने में लगभग दस-बारह दिन बाकी थे। अनूप ने नीलिमा से कहा—"मैं सोचता हूँ, नीलिमा, कि पटना चला जाऊँ। फिर जब तुम्हारा प्लास्टर कट जायेगा, तब आकर तुम्हें यहाँ से ले जाऊँगा।"

नीलिका के अचरज का ठिकाना नहीं रहा। वह विस्मय-विस्फारित

नेत्रों से अनूप की ओर देखने लगी। देर बाद उसके मुंह से निकला—"ऐसी क्या जल्दी है? हम लोग साथ ही चलेंगे। क्या तुम्हें यहाँ अच्छा नहीं लगता?"

"हाँ नीलिमा, अब मेरा जी ऊब गया है। मैं···।"

"अगर मैं बीमार न पड़ जाती, तो हम लोग पटना कब के पहुँच चुके होते। प्लास्टर कटते ही हम चल देंगे। तुम्हारा जी ऊबता है, तुम घूम आया करो। मनोरमा तुम्हें रोज ही घुमाने ले जाती है। छुट्टी वाले दिन दिवाकर बाबू भी जाते है।"

अनूप मन की बात नहीं कह पाया। वह नीलिमा को यह बतलाकर दुःखी नहीं करना चाहता था कि उसकी सहेली मनोरमा उसके होने वाले पति पर डोरे डाल रही है।

बातचीत का विषय बदल गया। अनूप जाने नहीं पाया। वह मन-ही-मन सोचता रह गया।

दो दिन तक मनोरमा अनूप के साथ घूमने नहीं गई। दोनों दिन उसने बहाना कर लिया कि उसके पेट में मीठा-मीठा दर्द है।

तीसरे दिन मनोरमा अनूप के पास आई और उससे व्यस्त स्वर में बोली—"मेरे साथ चलोगे, अनूप बाबू, या फिर अकेले ही घूमने जाओगे?"

"मैं तुम्हारे साथ चलूँगा, मनोरमा।"

"तो फिर चलो।"

दोनों आकर एक होटल में बैठ गये। वहाँ का वातावरण बहुत ही मोहक था। आर्केस्ट्रा चल रहा था। अच्छी-खासी चहलपहल थी। दोनों एक केबिन में बैठे थे। उनके सामने कॉफी के प्याले थे। वे एक-दूसरे की ओर देख रहे थे। अनूप ने पूछा—"तुम मुझसे नाराज हो, मनोरमा?"

"मैं तुमसे नाराज क्यों होने लगी? तुम पर मेरा क्या अधिकार है?"

"मेरा मतलब यह है कि तुम्हारे मन में जो विकार आ गया था, उसे निकालकर दूर फेंक दो। तुम्हारे पति दिवाकर बाबू देवता पुरुष हैं, देवता पुरुष। अगर तुम्हारे कदम बहके या गलत रास्ते पर उठे, तो इसे मैं तुम्हारी नासमझी कहूँगा और यह होना नहीं चाहिए।"

मनोरमा ने कुछ भी जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप अनूप की बातें सुनती रही।

जब कॉफी समाप्त हो गई और दोनों होटल से बाहर आये, तो मनोरमा ने अनूप की ओर ललचाई आँखों से देखा। फिर धीरे से बोली—"मेरी एक बहुत बड़ी इच्छा है, अनूप बाबू।"

"क्या ?"

"तुम परदेशी हो। तुम दूर चले जाओगे। नीलिमा के तो मेरे पास एक नहीं, कई फोटो हैं। मैं चाहती हूँ कि एक तुम्हारा भी फोटो हो। जिसे मैं अपने एलबम में लगाऊँगी।"

"यह तो मामूली-सी बात है। चलो, मैं फोटो अभी खिचवा लेता हूँ।"

मनोरमा ने यह सुना, तो प्रसन्नता से खिल उठी। दोनों स्टूडियो पहुँचे। सबसे पहले अनूप ने अपना अकेला फोटो खिंचवाया। उसके मुँह से हँसी में निकल गया—"मनोरमा, तुम भी अपना छोटा-सा एक फोटो तैयार करवा लो। उसे मैं अपने एलबम में लगाऊँगा।"

जब मनोरमा का भी फोटो उतार लिया गया, तो उसने अपनी असल इच्छा अनूप पर प्रगट की। उसने उसकी ओर सहज दृष्टि से देखा और फिर धीरे-धीरे कहने लगी—"मेरा मन है कि मैं तुम्हारे साथ एक सम्मिलित फोटो खिंचवाऊँ। तुम्हारी यादगार रहेगी। निशानी हो जायेगी कि तुम कभी मंसूरी आये थे और मैंने तुम्हारे साथ फोटो उतरवाया था।"

"तो अपनी यह इच्छा भी पूरी कर लो, मनोरमा। मैं इसके लिए तुम्हें मना नहीं करूँगा।"

बस फिर क्या था, सम्मिलित फोटो भी उतार लिया गया। मनोरमा जब चलने लगी, तो वह फोटोग्रॉफर से बोली—"सभी फोटोग्रॉफ की तीन-तीन कापियाँ बनाना। कल मैं आकर इसी समय ले जाऊँगी।"

मनोरमा ने एडवांस दे दिया, उसकी रसीद ले ली और फिर दूसरे दिन आने के लिए कहकर वहाँ से चल दी।

आज जब मनोरमा अनूप के साथ घर आई, तो वह बहुत खुश थी। दूसरे दिन भी उसकी खुशी ज्यों-की-त्यों बनी रही। तीसरे दिन दोपहर की वेला में जब अनूप सो रहा था, तो उसने अनूप का छोटा फोटोग्रॉफ

नीलिमा को दिखलाया और उससे बोली—"मैंने तुम्हारा हक छीन लिया नीलिमा। उसका सुबूत मेरे पास है।"

नीलिमा की समझ में कुछ भी नहीं आया। वह जानती थी कि मनोरमा हँसोड़ सहेली है। वह हँसना और हँसाना खूब अच्छी तरह जानती है। इसीलिए धीरे से बोली—"क्या कहना चाहती हो, मनोरमा?"

उत्तर में मनोरमा ने अपना और अनूप का फोटो दिखलाया। फिर वह नीलिमा से बोली—"मेरा और अनूप बाबू का समझौता हो गया है।"

"क्या?"

"वे मेरा फोटो अपने एलबम में लगायेंगे और मैं उनकी तस्वीर से अपना एलबम सजाऊँगी। इसीलिए यह आदान-प्रदान हुआ। तुम्हें कोई शिकायत तो नहीं?"

नीलिमा खूब जोर से हँसी और हँसते-हँसते बोली—"सचमुच मनोरमा तुम हँसी का पिटारा हो। तुम्हारे पास अगर रोता हुआ आदमी भेज दिया जाये, तो वह भी जाते ही हँसने लगेगा। तुम्हारा एक्सचेंज मुझे बहुत पसन्द आया। देखो, भूलना मत, एक काम जरूर करना।"

"क्या?"

"जब मेरी शादी हो जाये, तो अनूप बाबू को तुम ले लेना, मैं दिवाकर बाबू की बन जाऊँगी। बोलो, इसमें तुम्हें कोई एतराज है क्या?"

"खूब कहा तुमने, नीलिमा। इसे ही नहले पर दहला कहा जाता है। कहती क्या हो, नीलिमा, शादी होने दो; फिर हम दोनों आपस में अपने-अपने पति बदल लेंगे।"

नीलिमा को अपनी सहेली पर गर्व हो आया। वह मन-ही-मन सोचने लगी कि मनोरमा हँसमुख है। वह कभी उदास नहीं रहती। उसका स्वभाव अच्छा है। वह गैर को बहुत जल्दी अपना बना लेती है।

मनोरमा ने नीलिमा को वह चित्र नहीं दिखलाया और न उसका जिक्र ही किया, जो उसने अनूप के साथ सम्मिलित खिचवाया था। उस फोटो को उसने सँभालकर रख लिया। एलबम में वही लगाया।

एक दिन दिवाकर बाबू ने भी अनूप के साथ जाकर फोटो खिंचवाया।

दूसरी योजना वह थी कि जिस दिन नीलिमा का प्लास्टर काटा जायेगा, उसी दिन फोटोग्रॉफर घर पर बुलवाया जायेगा। चारों लोगों का एक सम्मिलित चित्र उतरेगा।

एक सप्ताह बाद डॉक्टर को दिखलाया गया। उसने नीलिमा की परीक्षा की, प्लास्टर देखा और फिर कहने लगा—"पूरे एक सप्ताह बाद प्लास्टर कटेगा। हड्डी ठीक हो गई है। तभी कोई दर्द नहीं है।"

दिवाकर का मन अनूप से मिल गया था। दोनों में अच्छी पटती। देखने में ऐसा लगता कि वे बहुत गहरे दोस्त हैं। नीलिमा और मनोरमा तो बचपन की सहेलिया थीं। उनका कहना ही क्या? नीलिमा एक-एक दिन गिनती। उसका जी प्लास्टर से ऊब गया था। वह चलने, उठने और बैठने को तरस गई। आखिर वह दिन भी आ गया, जब प्लास्टर काटा जाने वाला था।

नीलिमा ने संतोष की साँस ली। उसे बहुत खुशी हुई। वह मन-ही-मन खुशी से फूली नहीं समा रही थी।

३

बाबू ईश्वरलाल ने पुत्र की बलायें लीं। उसके बाद वे अपनी पत्नी लीला के साथ कर्नल बंसीलाल के घर आये। नीलिमा का पैर अब ठीक था। दम्पति ने उसे आशीर्वाद दिया।

दोनों समधियों में बातें हुईं। उसी समय यह योजना बन गई कि जल्दी ही व्याह सम्पन्न हो जायेगा। अब उसमें देर करने से कोई फायदा नहीं।

लीला नीलिमा की माँ तुलसी से बोली—"अब देर मत करो बहन। अब तक नीलिमा तुम्हारी थी। मगर अब मेरी हो गई है। चार दिन बाद वह मेरी बहू बनेगी। उसकी गोद भरी जायेगी।"

इस पर तुलसी हँसने लगी। उसका कलेजा हाथ भर का हो गया। वह पुलकित कण्ठ से बोली—"हाँ, बहन! अब नीलिमा तुम्हारी है। उस

पर मेरा कोई हक नहीं रहा।"

"यह कैसे कहती हो, नीलिमा की माँ। तुम्हारा हक जो था, वही रहेगा। तुम माँ हो और मैं सास। यह घर नीलिमा का पीहर और मेरा घर ससुराल।"

दोनों समधिनें आपस में मिलकर इतनी खुश थीं कि जिसका नाम नहीं। जब सब लोग विदा हो गये, तो तुलसी बंसीलाल से बोली—"यह रिश्ता मेरा मनचाहा हो रहा है। मैं यहीं चाहती थी कि जैसी मेरी इकलौती बेटी है, वैसे ही दामाद भी इकलौता मिले। लीला बहन कहती थी कि वे आज ही पंडित बुलवायेगी, शादी में वे लोग बिलकुल देर नहीं करेंगे।"

"मैं भी यही चाहता हूँ, नीलिमा की माँ। सयानी लड़की है। अपनी ससुराल जाये। बस फिर हमारी जिम्मेदारी खत्म हो जायेगी।"

"वह सोने का दिन होगा, जब मेरी नीलिमा दुल्हिन बनेगी। वह डोली में बैठकर ससुराल जायेगी। यहाँ मैका, वहाँ ससुराल। अब नीलिमा के दो घर हो गये। वह रानी बनकर रहेगी और राज सुख का भोग करेगी।"

"यही तो सोचा था। इसीलिए तो दोनों को कोर्टशिप के लिए भेजा था। मैं अपनी योजना में सफल हो गया, नीलिमा की माँ। यह लड़की का भाग्य है।"

नीलिमा दीवार की ओट में खड़ी माँ-बाप की बातें सुन रही थी। उसमें हर्ष समा नहीं रहा था। उसके हृदय में गुदगुदी हो रही थी। उसने आँखें मूँद ली। उसके होंठों पर मुस्कराहट थी। ऐसे में वह अपने सम्मुख अनूप को देख रही थी। वह उसका जीवन देवता! वह मन-ही-मन उसके गीत गा रही थी।

दो दिन बाद सगाई की रस्म भी पूरी हो गई। बाबू ईश्वरलाल लीला के साथ कर्नल के घर आये। उन्होंने अपनी होने वाली बहू की गोद भरी। उस अवसर का फोटोग्राफर बुला लिया गया।

अगले महीने ही ब्याह था। दोनों घर

गईं। दोनों पक्ष इस कोशिश में थे कि

शिकायत नहीं होनी चाहिए। ऐसे वर

सन्तुष्ट रहे।

नीलिमा ने मनोरमा को पत्र लिखा। उसमें यह उल्लेख किया था कि अमुक तारीख को उसका व्याह है। शादी में मनोरमा पति के साथ आयेगी। दोनों का आना जरूरी है।

पत्र पाते ही मनोरमा पटना आ गई। वह अपने वाप के घर में आकर ठहरी। उसी दिन नीलिमा से मिली और उसे वतलाया कि वह आ गई है और उसके पति दिवाकर वावू शादी वाले दिन सवेरे आ जायेंगे। उन्होंने वहुत कोशिश की, लेकिन उन्हें लम्वी छुट्टी न मिल सकी।

दोनों सहेलियाँ आपस में मिलकर वहुत मग्न थीं। लगभग एक पहर वीत गया और उनकी वातें ही खत्म नहीं हुईं।

× × ×

अनूप विस्तर पर लेटा एक पुस्तक पढ़ रहा था। रात के नौ वजे थे। वह सोने का उपक्रम कर रहा था। उसकी कोशिश यह थी कि पढ़ते-पढ़ते नींद अपने आप ही आए।

ऐसे में ही अचानक टेलीफोन की घण्टी जोर से घनघनाकर वज उठी। अनूप उठकर वैठ गया। उसने टेलीफोन का चोगा उठाकर कान से लगा लिया। फिर माउथ पीस में वोला—"हैलो ! कौन साहव वोल रहे है ?"

"मैं हूँ, मनोरमा। आज ही मन्सूरी से आई हूँ। वीते दिनों की वातें भी साथ लेती आई हूँ। दिन में नीलिमा के घर गई थी। सोचा था कि तुम्हारे पास भी आऊँ।"

"यह तुमने वहुत अच्छा किया, मनोरमा, जो मेरे घर नहीं आईं। वैसे मैं तुम्हारा परिचय अपने माँ-वाप को क्या देता ?"

इस पर मनोरमा जोर से हँस पड़ी और हँसते-हँसते कहने लगी—"मैं अपना परिचय तुम्हारे माँ-वाप को खुद दे दूँगी। तुम्हें तकलीफ करने की कोई जरूरत नहीं। तुम्हें वतलाना था। तुमसे पूछना था। इसीलिए टेलीफोन कर दिया। कल किस समय घर पर मिलोगे ? मैं उसी समय आऊँ।"

"मेरा कोई ठीक नहीं। मैं तुम्हें मिलने के लिए समय नहीं दे पाऊँगा,

मनोरमा। इसके लिए तुम मुझे क्षमा करो।"

"ठीक है, क्षमा कर दिया। लेकिन यह मत भूलना, अनूप बाबू, कि मैं तुमसे मिलूँगी नहीं। अच्छा, गुड नाइट, अब मैं तुम्हें तंग नहीं करूँगी। जब मिलूँगी, तभी बातें होंगी।"

टेलीफोन बंद हो गया। अनूप लेटा नहीं। वह बैठे का बैठा रह गया। उसकी आँखों के आगे मनोरमा का चेहरा नाचने लगा। पहले एक चेहरा। अब दूसरा नीलिमा का भी उसके सामने आ गया था। वह देख रहा था कि नीलिमा एक मुँह-बन्द कली है। उसमें संकोच-ही-संकोच भरा है। किन्तु मनोरमा एक हँसता हुआ फूल है। उस फूल में खुश्बू है; उसमें रौनक है। मनोरमा बहुत सुन्दर है। नीलिमा खूबसूरती में उससे आगे नहीं, पीछे है।

देर तक अनूप विचारों में उलझा रहा। उसका चित्त अशान्त हो गया था। इसीलिए सिर में मीठा-मीठा दर्द होने लगा। वह लेट गया। फिर जब सोया, तो सपने में न जाने क्या-क्या देखता रहा। सवेरे उठने पर भी वह चिन्तामग्न था और उसका अन्तःकरण कह रहा था कि यह मनोरमा कहाँ से आ गई। मेरे लिए बला है, बला। मैं उससे बहुत घबराता हूँ।

अनूप दैनिक कार्यों से निवृत्त होने के बाद ड्राइंगरूम में आकर बैठ गया। उसने नीलिमा को टेलीफोन किया। उस पर उसे बतलाया कि रात को मनोरमा का टेलीफोन आया था। दोनों में कुछ देर बातें हुईं। अनूप का मनमयूर खुशी से नाच उठा।

अनूप गुनगुनाने लगा। टेलीफोन बन्द करने के बाद वह पुनः कुर्सी पर आकर बैठ गया। तभी उसने देखा कि एक नौकर के साथ मनोरमा कमरे में प्रवेश कर रही है। वह आते ही मुस्करायी और व्यस्त स्वर में बोली—"गुड मार्निंग, अनूप बाबू। मैं अच्छे मुहूर्त में चली थी। तभी तुम्हारे दर्शन हो गये।"

नौकर चला गया। मनोरमा ने दूसरी कुर्सी खींच ली। वह अनूप के पास आकर बैठ गई।

अनूप को ऐसा लग रहा था कि वह किसी बड़ी

है। उसका चेहरा उतर गया। उस पर हवाइयाँ उड़ने लगी।

"क्या सोच रहे हो, अनूप बाबू ?"

"कुछ भी नहीं।"

"शायद मेरा आना तुम्हें अच्छा नहीं लगा ?"

"ऐसा नहीं।"

"तो फिर ?"

"मुझे एक जगह जाना था। टाइम हो रहा है। यही सोच रहा था।"

"कहाँ जाना है ?"

"जाना है, लेकिन अब तुम आ गई हो, तो रुकना ही पड़ेगा।"

"चलो, मैं भी चलती हूँ। तुम काम से चले जाना और मैं अपने घर लौट जाऊँगी।"

अभी दोनों में बातें हो रही थीं कि लीला वहाँ पर आ गई। अनूप ने उसे मनोरमा का परिचय दिया। लीला उससे मिलकर बहुत खुश हुई। उसके लिए जलपान मँगवाया।

इस तरह देर हो गई। न तो अनूप ही कहीं जा पाया और न मनोरमा ही गई।

जिस समय मनोरमा चली, वह पूरे आग्रह के साथ जोर देकर कहने लगी—"मैं जा रही हूँ, अनूप बाबू। आपको निमन्त्रण देने आई थी। कल मेरे घर पर पधारने का कष्ट अवश्य करना। मैं तुम्हारी राह देखूँगी।"

अनूप तो बोलते-बोलते ही रह गया। लीला जल्दी से कहने लगी—"जरूर आयेगा अनूप, बेटी मनोरमा। हम लोग तुम्हारे एहसानों से लदे हुए हैं। अगर मन्सूरी में तुम न होतीं, तो फिर नीलिमा और अनूप कहाँ जाते। अनूप तो आयेगा ही। उसके बाद मैं भी इसके पिता के साथ आऊँगी।"

मनोरमा बाजी जीत गई। वह हँसती हुई वहाँ से चल दी।

दूसरे दिन हालाँकि अनूप मनोरमा के घर जाने के लिए बिलकुल तैयार नहीं था, लेकिन फिर भी उसे जाना पड़ा। वह मजबूर हो गया। उसने सोच लिया था कि वहाँ जायेगा नहीं। माँ से बहाना कर देगा। लेकिन ऐसा मौका ही नहीं आया। जब वह घर से जाने लगा, तभी लीला

ने मनोरमा को टेलीफोन कर दिया कि अनूप तुम्हारे घर आ रहा है बेटी। वह बहुत शर्मीला और संकोची है। आ नहीं रहा था। मैंने उसे जबरदस्ती भेजा है। जब तुम्हारे घर पहुँच जाये, तो मुझे टेलीफोन कर देना।

मनोरमा बड़ी वेसब्री के साथ बैठी अनूप के आने का इन्तजार कर रही थी। आते ही उसने उसे सिर आँखों पर लिया। उसकी माँ सीता ने भी हँसकर अनूप का स्वागत किया। वह बोली—"तुम नीलिमा के होने वाले पति हो। इसीलिए मेरे भी मेहमान हुए। तुम्हें देखकर बहुत खुशी हुई। मनोरमा जब से आई है, तब से तुम्हारी ही तारीफ कर रही है।"

रामधन बाबू दुकान पर थे। सीता देर तक दोनों के पास बैठी रही। फिर जब जलपान समाप्त हो गया, तो वह उठकर अपने कमरे में चली गई।

अब कमरे में मनोरमा थी और अनूप। जैसे ही अनूप जाने का आयोजन करता, मनोरमा आग्रह करके उसे रोक लेती। अब वह एक सोफे पर बैठी थी। उसके पास ही बैठा था अनूप। वह उससे बोली—"नाश्ता तो कर चुके हो। थोड़ा-सा खस का शर्बत पी लो। अभी दिल और दिमाग में तरावट आ जायेगी।"

"मैं शर्बत नहीं पिऊँगा।"

"शर्बत पीना पड़ेगा, अनूप बाबू। यह मेरी जिद्द है; नहीं तो मैं नाराज हो जाऊँगी। मेरे डैडी गर्मियों भर खस का शर्बत बराबर इस्तेमाल करते हैं।"

अनूप ने बहुत मना किया, लेकिन मनोरमा नहीं मानी। वह दूसरे कमरे में गई और दो मिनट बाद ही लौट आई। उसके हाथों में दो गिलास थे, जिनमें हरे रंग का शर्बत था।

अनूप ने जब गिलास होंठों से लगाया, तो उसमें उसे कुछ कड़वाहट मालूम हुई। उसने मुँह बिचकाया और गिलास रख दिया।

मनोरमा भी शर्बत पी रही थी। उसने मुँह से गिलास हटा दिया और चौंककर बोली—"क्यों, क्या बात है, अनूप बाबू ?"

"शर्बत कड़वा है।"

"एँ!"

"हाँ।"

"खस में कुछ कड़वाहट जरूर होती है। मुझे कड़वा नहीं लगा। आँखें बन्द करके पी जाओ। शर्वत बहुत अच्छा है।"

पहले अनूप ने सोचा कि शर्वत न पिये; लेकिन फिर उसे कुछ झेंप-सी लगी और उसने एक साँस में ही पूरा गिलास खाली कर दिया। उस बेचारे को क्या पता कि शर्वत की जगह उसे शराब पिलाई गई है।

मनोरमा अपने लिए जो गिलास लाई थी, उसमें खस का हरा शर्वत था। अनूप वाले गिलास में शराब ही शराब थी। उसमें खस का सैण्ट पड़ा था और थोड़ा-सा शर्वत।

जब अनूप शर्वत पी चुका, तो मनोरमा ने सिगरेट केस खोला। उसमें से एक सिगरेट निकाली। वह अनूप के होंठों में दबाती हुई फिर लाइटर जलाकर बोली—"लीजिए साहब, अब सिगरेट का शौक फरमाइये।"

अनूप को सब-कुछ अजीब-अजीब-सा लग रहा था। उसने सिगरेट सुलगाई और फिर उसके कश खींचने लगा। उसे सुरूर-सा आने लगा था। उसका चिन्तित मन प्रसन्न हो गया। अब उसे मनोरमा बहुत ज्यादा खूबसूरत लग रही थी।

मनोरमा अनूप के पास उससे सटकर बैठ गई। उसने अपनी गोरी-गोरी बाँहें उसके गले में डाल दीं।

अनूप चौंका। वह अलग हटकर बैठने लगा। तभी मनोरमा ने उसके कन्धे पर सिर रख दिया और एक नये अन्दाज के साथ बोली—"डियर! मुझसे दूर मत जाओ। मुझे तुम बहुत अच्छे लगते हो। जी चाहता है कि हमेशा मेरे सामने ही बैठे रहो और मैं तुम्हें ही देखा करूँ।"

सिगरेट जल रही थी। नशा चढ़ रहा था। अनूप यह भूल गया कि उसे आये देर हो गई है और अब जल्दी जाना है। उसने कोई विरोध नहीं किया। मनोरमा ने कन्धे से सिर हटा उसके घुटने पर रख दिया। उसकी बाँहें अब भी उसके गले में पड़ी थीं। वह बोली—"डियर! प्यार किया नहीं जाता, वह अपने आप ही हो जाता है। तुमने मुझे पागल बना दिया है। मैं तुम्हारी दीवानी हूँ। अच्छा, थोड़ा-सा शर्वत और चलेगा?"

"जरूर चलेगा।"

और यह कहने के साथ अनूप मनोरमा के वालों से खेलने लगा। वह उठी और अपने वाप के कमरे में गई। रेफ्रीजेरेटर में व्रान्डी की कई बोतलें पड़ी थीं। उसने एक वोतल खोली, पूरा गिलास भरा। फिर उसमें खस का सैण्ट और शर्वत डाला।

जव अनूप ने दूसरा गिलास भी खाली कर दिया, तो फिर नशा उस पर हावी होने लगा। उसे परिस्थिति और समय का तनिक भी वोध नहीं हुआ। वह तीसरे पहर आया था और अव रात हो रही थी। जवअपने घर पहुँचा, तो पूरे दस वजे थे। उसके कपड़े अस्त-व्यस्त थे। वह नशे में जरूर था, लेकिन अव पछता रहा था कि नशे की हालत में उसने यह क्या किया। वह मनोरमा की देह से खेला। मनोरमा ने उसे डियर और उसने उसे डार्लिंग कहा।

रात-भर अनूप को नींद नहीं आई। वह प्रायश्चित्त की आग में जलता रहा। उसका अन्त:करण कह रहा था कि यह उसने सरासर नीलिमा के साथ अन्याय किया है। वह पाप का भागी है। उसने गुनाह कर डाला। इसके लिए ईश्वर उसे कभी माफ न करेगा।

अभी सवेरे का पहला पहर वीता भी नहीं था कि हँसती हुई मनोरमा लीला के सामने आकर खड़ी हो गई। वह कह रही थी कि मैं अनूप वावू को लेने आई हूँ। मैंने पिक्चर का प्रोग्राम बना लिया है। इन्हें अभी मेरे साथ चलना होगा। नहीं तो टिकट वेकार हो जायेंगे।

परिस्थिति ऐसी थी कि अनूप कुछ भी नहीं कह पाया। उसे विवश होकर मनोरमा के साथ जाना पड़ा। क्योंकि लीला आग्रह करके उसे भेज रही थी।

जव मनोरमा आकर एक होटल में वैठ गई, तो अनूप चौंका। उसने कहा—"तुम तो कह रही थीं कि तुम्हें नौ से वारह पिक्चर चलना है। फिर यहाँ कैसे आ गईं ?"

"यह तो वहाना था, अनूप वावू। सच वात यह है कि अव मैं तुम्हारे वगैर एक क्षण भी जिन्दा नहीं रह सकती। यहाँ वार भी है। यहीं पियें। यहीं मैं कमरा वुक करवाती हूँ। कह दूँगी कि पिक्चर देखने के वाद हम लोग घूमने चले गये थे।"

"यह सब मुझसे नहीं हो पायेगा, मनोरमा। मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ। मुझे जाने दो। मैं पिऊँगा नहीं।"

"तुम पियोगे कैसे नहीं ? तुम्हें पीनी होगी। मैं भी तुम्हारा साथ दूंगी।"

"तो क्या तुम भी पीती हो, मनोरमा ?"

"पीना तोआजकल का फैशन हो गया है। मेरे पति फारेस्ट रेंजर हैं। मैं उनके साथ बैठकर पीती हूँ। मेरी पीने की आदत उन्होंने हीडाली है।"

"लेकिन मैं आज नहीं पीऊँगा।"

"क्यों ?"

"मेरा मन।"

"अब तुम अपनी मर्जी के मालिक नहीं हो, अनूप बाबू।"

"ऐसा क्यों ?"

"अगर तुम पीयोगे नहीं, तो मैं अभी तुम्हारे घर पहुंचती हूँ और जाकर तुम्हारी माँ से कहूँगी कि तुमने मेरी लाज लूट ली। तुम मेरे शरीर से खेले। बोलो, यह सच है या नहीं ?"

अब अनूप हक्का-बक्का-सा रह गया। वह बगलें झाँकने लगा। उसकी परेशानी बढ़ गई और वह अपने में पूरी तरह उलझ गया।

"बोलो क्या कहते हो ? बेयरा को आर्डर दूं ?" मनोरमा ही पुनः बोली।

इस पर अनूप ने मुंह से एक शब्द भी नहीं बोला। उसने केवल सिर हिला दिया। जो इस बात का प्रतीक था कि मुझे तुम्हारा प्रस्ताव स्वीकार है।

बस फिर क्या था ? पैग आये। जाम चलने लगे।

दोनों में खुशियों का दौर चलता रहा। मनोरमा ने कमरा बुक करवा लिया था। अनूप ने वहीं जाकर आराम किया। फिर जब तीसरे पहर वह चलने लगा, तो मनोरमा से बोला—"तुमने मुझे पतित कर दिया, मनोरमा। इसका नतीजा क्या होगा, मेरी समझ में नहीं आता।"

"इसका नतीजा जल्दी ही सामने आ जायेगा।"

"कैसे ?"

"मैं तुम्हारी वन जाऊँगी और तुम मेरे।"

"लेकिन यह सव मुमकिन कैसे हो जायेगा ? मेरी तो बुद्धि हैरान है।"

"सव वतला दूँगी। सव समझा दूँगी। समय आने दो। मेरे पास ऐसा जादू है, अनूप वावू, कि वही जादू तुम्हारे सिर पर चढ़कर बोलेगा। मैं सव ठीक कर लूँगी, तुम विलकुल चिन्ता मत करो।"

अनूप चल दिया। वह घर की ओर जा रहा था। उसकी हैरानी बढ़ती जा रही थी और वह सोच रहा था कि मनोरमा उसकी जिन्दगी में जहर वनकर आई है। नागिन ने उसको डस लिया है। उस पर जहर चढ़ रहा है। उसकी अकाल मृत्यु हो जायेगी और वह जिन्दा नहीं रहेगा।

४

अनूप रात को पूरी नींद नहीं सो पाया। वह सोचता ही रहा कि मनोरमा के लिये उसे क्या करना चाहिये। यह तो एक ऐसी वला है, जो जवरदस्ती आकर मेरे गले वँध गई। अगर नीलिमा को यह भेद मालूम हो गया तो फिर हमारा दाम्पत्य जीवन दुःखी हो जायेगा।

वहुत सोचा, अनूप ने किन्तु किसी भी निश्चय पर नहीं पहुंच पाया। उसने सोच लिया था कि अब मनोरमा के साथ कहीं भी नहीं जायेगा। उसकी कोई भी वात नहीं मानेगा।

दोपहर से पहले ही पहले मनोरमा का टेलीफोन आया। उसने उसे अजन्ता होटल में बुलाया। अनूप ने साफ इन्कार कर दिया। वह झुँझलाया हुआ था, इसीलिए उसने टेलीफोन फौरन ही काट दिया।

लेकिन यह क्या ? थोड़ी देर वाद टेलीफोन की घंटी फिर वजी। उस पर मनोरमा कह रही थी—"अगर तुम होटल नहीं आते हो, तो मैं थोड़ी देर वाद तुम्हारे घर आऊँगी। मैं तुम्हारे घर आकर माँ से कहूँगी, तुम्हारे वाप से कहूँगी। मेरे पास तुम्हारी फोटो है। तुम्हें आना पड़ेगा, अनूप, मैं तुम्हारा इन्तजार कर रही हूँ।"

"तुम मुझे धमकी देकर मजबूर कर रही हो, मनोरमा ! यह अच्छी बात नहीं। मैं······।"

अभी अनूप इतना ही कह पाया था कि फौरन ही उधर से जवाब मिला—"मैं नीलिमा के घर जाती हूँ। अभी उसको लेकर तुम्हारे घर आती हूँ। तुमने मुझे समझ क्या रखा है, अनूप वाबू ?"

"मैंने तुम्हें अच्छी तरह समझ लिया है, मनोरमा। तुम मेरे लिये एक वला हो।"

"ठीक है, मुझे वला ही समझो; लेकिन मेरा नाम भी मनोरमा है, मनोरमा। मैं तुम्हारी शादी में वाधा डालूँगी। मैं यह व्याह कभी नहीं होने दूँगी। यही सोचकर मंसूरी से आई हूँ। अगर अपना भला चाहते हो, तो फौरन ही होटल चले आओ।"

अनूप परेशान हो गया था। इसीलिये उसके मुँह से निकल गया—"अच्छा, अभी आ रहा हूँ।"

फिर जब अनूप होटल आया, तो मनोरमा ने अपने को एकदम वदल दिया। वह धीरे से हँसकर वोली—"मुझसे वहुत ज्यादा नाराज हो, अनूप वाबू। जो वातें तुम मेरे सामने नहीं कह सकते, वह फोन पर कह डालीं।"

अनूप कुछ नहीं वोला। वह खामोश रहा। उसके सामने पैग आ गये। नाश्ते के लिये कटलेट पीस भी रखे थे। उसने इंकार कर दिया। वह मनोरमा से वोला—"मैं पैग नहीं लूँगा। मुझे यह वतलाओ कि तुमने मुझे यहाँ क्यों वुलाया।"

"जव तक पैग नहीं लोगे, मैं कुछ भी नहीं वतलाऊँगी।"

"यह कोई जवरदस्ती है क्या ?"

"हाँ, जवरदस्ती ही समझ लो। जब आदमी का मन अच्छा होता है, तभी उससे कोई वात कही जाती है।"

अनूप किसी तरह मनोरमा से पीछा छुड़ाना चाहता था। उसने पैग ले लिया और सिगरेट भी जलाई। तभी उसने सुना, उसके सामने वैठी मनोरमा अपनी वात कह रही थी—"मैंने तुमको यह वताने के लिए वुलाया है, अनूप, कि तुम नीलिमा के साथ व्याह नहीं करोगे।"

"ऐसा क्यों ?"

"मैं यह शादी नहीं होने दूँगी। तुम मेरे साथ यहाँ से कहीं दूर चलो। मैं दिवाकर बाबू को तलाक दे दूँगी। वे दूसरी शादी कर लेंगे। नीलिमा की भी शादी हो जायेगी। मैं शादी तुमसे करूँगी। और अगर तुमने मेरा साथ नहीं दिया, तो मैं तुम्हें भी चैन से बैठने नहीं दूँगी।"

अनूप ने मनोरमा की ये बातें सुनीं, तो वह सन्नाटे में आ गया। न जाने कितनी देर तक वह उसका मुँह देखता रहा। एक पैग खत्म हो चुका था। दूसरा उसके सामने फिर आ गया। उसे नशा चढ़ने लगा। होटल में कमरा पहले से बुक हो चुका था। मनोरमा उसे वहाँ ले गई। उसने कागजों का एक बड़ा सा पुलिन्दा निकाला। वह खोलकर अनूप के सामने रख दिया और फिर व्यस्त स्वर में कहने लगी—"ये कुछ कागज हैं, इन पर अपने हस्ताक्षर कर दो।"

यद्यपि अनूप नशे में था, लेकिन फिर भी उसे इतना ज्ञान तो था। उसने फौरन ही सवाल कर दिया—"ये कागज कैसे हैं ?"

"यह हमारी शादी का एग्रीमेंट है। व्याह हम दोनों की राजी से हो रहा है।"

अनूप दस्तखत करने के लिये तैयार नहीं था; लेकिन मनोरमा निराश नहीं हुई। उसने तरकीब से काम लिया। उसने बातचीत का प्रसंग बदल दिया और उसने यह सोच लिया कि जब अनूप खूब नशे में हो जायेगा, तो वह हस्ताक्षर करवा लेगी। इस तरह यह काम पक्का हो जायेगा।

मनोरमा ने जो सोचा था, वही किया। इसके बाद उसने अनूप को घर नहीं जाने दिया। उसे उसी हालत में अपने साथ स्टेशन लाई। किसी को भी नहीं पता चला कि वह पटना से देहली के लिये रवाना हो गई।

× × ×

जब अनूप घर नहीं आया और रात आधी से अधिक बढ़ी, तो लीला की चिन्ता बढ़ी। उसने ईश्वरलाल से कहा—"मनोरमा के घर इस समय टेलीफोन करना ठीक नहीं रहेगा। मेरा तो विचार यह है कि चलो, गाड़ी में बैठकर हम दोनों उसके घर चलते हैं। वह कहाँ रहा. अब तक आया क्यों नहीं, मेरा मन न जाने कैसा-कैसा हो रहा है

ईश्वरलाल वाबू खुद चिन्तित थे। वे फौरन ही कार पर बैठकर चल दिये। फिर जब रामधन वाबू के घर आये, तो वहाँ मालूम हुआ कि मनोरमा जब से घर से गई है, लौटकर ही नहीं आई है। वे लोग यह अनुमान लगा रहे थे कि शायद मनोरमा अनूप के साथ चलचित्र देखने गई है; लेकिन जब रात के दो बज गये और कोई नहीं लौटा, तो सबकी चिन्ता बढ़ी। वावू रामधन परेशान हुए। वे ईश्वरलाल वावू से कहने लगे—"समझ में नहीं आता है कि ये लोग कहाँ गये हैं, जो अब तक नहीं लौटे।"

वावू रामधन बहुत दु:खी थे। सीता हाय-हाय कर रही थी। मनोरमा कहाँ चली गई। लीला निराश हो गई। वह पति के साथ घर लौट आई।

सवेरे नीलिमा के घर पर पता किया गया। वहाँ पर कोई नहीं पहुँचा था। सारा खेल खराब हो गया। रंग में भंग हो गया। दोनों घरों में व्याह की तैयारियाँ चल रही थीं। कोई नहीं जानता था कि अनूप इस तरह अचानक गायब हो जायेगा।

नीलिमा हैरान थी। कर्नल वंसीलाल की चिन्ता का ओर-छोर नहीं था। तुलसी ने रो-रोकर घर भर दिया। वह मनोरमा को बुरा-भला कहने लगी। उसका कहना था कि मनोरमा ही अनूप को ले गई। लीला बहन वतलाती थी कि वह रोज अनूप को टेलीफोन करती। उसे लेने वह घर पर आती। वावू रामधन ने दिवाकर को तार दिया। उसमें यह स्पष्ट कर दिया था कि मनोरमा यहाँ से कहीं चली गई है। उसका कुछ भी पता नहीं। अगर मन्सूरी आई हो, तो फौरन ही खबर दो।

इस तरह तीनों परिवार उदासी में डूब गये। सभी चिन्तित थे कि मनोरमा और अनूप दोनों कहाँ चले गये।

× × ×

दिवाकर को जब ससुर का तार मिला, तो वह चौंक गया। उसने उसी समय छुट्टी का अप्लीकेशन दिया और फौरन ही पटना के लिए रवाना हो गया।

पटना आकर दिवाकर की समझ में कुछ भी नहीं आया। वह अपने में बुरी तरह चिन्तित और परेशान था। उसकी बुद्धि काम नहीं करती थी। वह सोच नहीं पा रहा था कि आखिर यह सब क्या हो गया।

रामधन और सीता का बुरा हाल था। दम्पति अब रुककर साँसें लेते। वे दिवाकर से कहते कि हम लोग दोषी हैं। हमने ही मनोरमा को कहीं खो दिया। ऐसा लगता है कि वह अनूप के साथ घूमने गयी थी। या तो दोनों का एक्सीडेंट हो गया या कोई और अनहोनी घटना जरूर घटी है।

लेकिन दिवाकर को किसी तरह भी संतोष नहीं होता था। जब उसकी समझ में कुछ नहीं आया, तो उसने जाकर ससुर के साथ पुलिस थाने में रिपोर्ट लिखवा दी।

दिवाकर बाबू ईश्वरलाल के घर आया। उसने उन्हें भी मजबूर किया कि वे भी जाकर अपने लड़के के गायब हो जाने की सूचना पुलिस को दे दें।

जब बाबू ईश्वरलाल की भी रिपोर्ट लिख ली गई, तब दिवाकर नीलिमा के पास आया और उससे क्षमा-याचना करने लगा।

नीलिमा का चेहरा आँसुओं से डूब गया। उसने एक दीर्घ उच्छ्वास ली और फिर धीरे-धीरे दिवाकर से कहने लगी—"दिवाकर बाबू, कोई दोषी नहीं है, किसी का भी अपराध नहीं हैं। यह भाग्य आदमी से चार कदम आगे चलता है। यही मेरा दुश्मन है। इसी ने मुझे गुड़ दिखलाकर ईंट मार दी। क्या हुआ? मनोरमा और अनूप बाबू कहाँ गये? मेरा नसीब फूट गया।"

जब नीलिमा रो-रोकर दिवाकर से यह कह रही थी, तब तुलसी पास ही खड़ी थी। उसने बेटी के आँसू पोंछे और उसे दिलासा देती हुई मृदु स्वर में कहने लगी—"अब यह मुहूर्त तो निकल गया। इस पर मेरा कोई जोर नहीं। अनूप कहीं गया हो। अगर वह कुछ दिन नहीं आता है, तो मैं तेरा दूसरा व्याह करूँगी, नीलिमा! तू रोती क्यों है?"

नीलिमा तत्क्षण ही बोल उठी—"माँ, मैंने अनूप को ही अपना वर चुना है। तुम लोगों ने भी मुझे इसीलिए कोर्टशिप के लिए भेजा था। अगर अनूप बाबू नहीं आते हैं, वे नहीं मिलते हैं, तो मैं दूसरी शादी नहीं करूँगी। मैंने सकल्प कर लिया है। मन और वचन से यह तय कर लिया है कि अनूप के अलावा दूसरा व्यक्ति मेरा पति नहीं हो सकता।"

"तुम पागल हो, नीलिमा। तुमने अभी दुनिया नहीं देखी। तुम्हारी

उम्र ही क्या है ? जवानी का जोश अन्धा होता है। उसमें युवक और युवतियाँ ऐसी ही बातें करते है।"

दोनों माँ-बेटी में अच्छी-खासी बहस होने लगी। तुलसी अपनी कह रही थी कि वह नीलिमा का दूसरा ब्याह करेगी। नीलिमा अपनी जिद्द पर अड़ी थी कि अनूप ही उसका पति होगा, अन्यथा वह ब्याह नहीं करेगी।

दिवाकर ने जब यह देखा तो वह बीच में आ गया। दोनों को समझाता हुआ कहने लगा—"अभी धीरज से काम लो। आपस में उलझने से कोई फ़ायदा नहीं है। मेरा कहना यह है कि पहले तेल देखो, फिर तेल की धार। बहुत समय पड़ा है। आगे सोच लिया जायेगा कि हम लोगों को क्या करना है।"

दिवाकर लगभग एक सप्ताह पटना में रहा। इस बीच वह फुरसत में नहीं बैठा। निरन्तर मनोरमा की तलाश करता रहा। अनूप का भी पता लगाने में उसने कुछ भी उठा नहीं रक्खा।

अन्त में जब दिवाकर निराश हो गया, तो वह मंसूरी लौट आया। उसे ताज्जुब ही नहीं, बहुत ज्यादा अफसोस भी था कि मनोरमा कहाँ चली गई, उसका क्या हुआ।

दिवाकर ने नियम बना लिया था। वह पटना के लिए एक पत्र नित्य लिखता। वहाँ से बाबू रामधन का भी जवाब आता कि अभी तक न तो अनूप लौटा है और न मनोरमा का ही कुछ पता चला।

इस तरह धीरे-धीरे एक महीना बीत गया। नीलिमा की शादी रुक गई। उसका भी पत्र दिवाकर को मिला। जिसमें लिखा था कि अब मैं ना उम्मीद हो गई हूँ। मुझे कोई आशा नहीं रही कि जाने वाले लोग लौट कर फिर आयेंगे।

इधर दिवाकर की यह स्थिति थी। उधर कर्नल बंसीलाल और उनकी पत्नी तुलसी दोनों को ऐसा लग रहा था कि उनकी जिन्दा ही मौत हो गई है। वे किसी से भी नहीं बोलते। अपना दुख किसी से भी नहीं कहते। केवल ऊब-ऊबकर साँसें लेते। दम्पति सोच रहे थे कि कुछ दिन और बीत जायें, फिर वे अपनी बेटी के लिए दूसरा वर तलाश करें।

बाबू ईश्वरलाल ने कर्नल बंसीलाल से कह दिया था कि अगर वे चाहें, तो अपनी लड़की का दूसरा व्याह कर दें। वे खुद दुखी हैं। उनके एक ही लड़का था। अगर वह लौटकर नहीं आया, तो उनका घर अन्धेरा हो जायेगा।

लीला सूखकर काँटा हो गई। देखने में ऐसा लगता कि उसके बदन में खून ही नहीं रह गया है। उसे इतना गहरा सदमा पहुँचा था कि जिसका नाम नहीं। कुछ लोग तो तह कहते कि लीला पागल हो जायेगी। अगर उसकी यही हालत रही, तो उसकी हृदय-गति किसी भी समय रुक सकती है।

५

रात के गहरे अन्धकार को चीरती हुई तूफान एक्सप्रेस हवा की रफ्तार से आगे वढ़ी चली जा रही थी। पटना के बाद वक्सर आया। वहाँ अनूप ने आँखें खोलीं। उसने पानी माँगा। फिर जब गाड़ी मुगलसराय जंक्शन पर आकर रुकी, तो अनूप उठकर बैठ गया। उसका नशा उतर चुका था। सिर में जोरों का दर्द था। अपने को ट्रेन में बैठा देखा, तो चौंका। उसने व्यस्त स्वर में मनोरमा से पूछा—"मैं तो होटल में था। फिर ट्रेन पर कैसे आ गया?"

इस पर मनोरमा खूब जोर से हँसी और हँसते-हँसते कहने लगी—"इस समय तुम तूफान एक्सप्रेस में बैठे हो यह मुगलसराय जंक्शन है। हम लोग देहली चल रहे हैं। मैंने टिकट वहां के लिये हैं।"

प्रथम श्रेणी के कम्पार्टमेंट में दोनों वैठे थे। उस डब्बे में और कोई तीसरा नहीं था। अनूप एकदम झुँझला उठा। वह रोष में भरकर मनोरमा से बोला—"यह तुमने क्या किया, मनोरमा? मुझे यहाँ क्यों ले आई? घर के सब लोग मेरी राह देख रहे होंगे। तुम वैठो, मैं जाता हूँ मैं यहाँ एक मिनट भी नहीं रुकूँगा।"

यह कहकर अनूप खड़ा हो गया। उसने जाने के लिये कदम आगे

बढ़ाया। तभी मनोरमा ने आगे बढ़कर उसका दामन पकड़ लिया। वह व्यस्त स्वर में बोली—"कहाँ जा रहे हो ?"

"मुझे मत रोको। मुझे जाना पड़ेगा। मैं···।"

अभी अनूप इतना ही कह पाया था कि ट्रेन चल दी। वह चौंककर रह गया। ऐसे में मनोरमा मुस्कराई। उसने अनूप का दामन छोड़ दिया और धीरे से बोली—"तुम जाओगे कहाँ ? अब कहीं भी नहीं जा सकते। तुमने मेरे साथ शादी का एग्रीमेंट किया है।"

"कैसा एग्रीमेंट ?"

"तुम यह भी भूल गये !"

यह कहने के साथ मनोरमा ने अटैची खोली। चलते समय उसने एक सूटकेस और एक अटैची खरीद ली थी ताकि सफर में उसे सुविधा रहे, कोई तकलीफ न हो।

मनोरमा ने एग्रीमेंट निकालकर अनूप को दिखलाया, जिसपर उसके हस्ताक्षर थे। वह चौंका। उसने कागज हाथ में लेने चाहे; किन्तु मनोरमा पहले से ही सतर्क थी। उसने अनूप को मौका नहीं दिया और कागज पुनः अटैची में बन्द कर दिये।

ट्रेन चल रही थी। छोटे-छोटे स्टेशन छोड़ती हुई वह आगे बढ़ रही थी। मिर्जापुर में जब गाड़ी रुकी, तो अनूप ने एक बार फिर उतरने की कोशिश की, लेकिन वह ऐसा नहीं कर पाया। मनोरमा ने आगे जाकर उसकी राह रोक ली।

यहाँ स्टाप केवल एक मिनट का था; क्योंकि आगे इलाहाबाद जंक्शन था।

गाड़ी फिर चल दी थी। अनूप का गुस्सा सीमा को पार कर रहा था। वह जोर से हाँफने लगा और तेज गले से बोला—"मुझे तुमसे यह आशा नहीं थी कि तुम इतनी गई-बीती हो। मेरे पीछे अपने पति को तलाक दोगी। मेरी शादी होने वाली थी। तुमने उसमें रंग में भंग कर दिया। सच बात तो यह है कि तुमने अपनी सहेली नीलिमा पर तनिक भी तरस नहीं खाया।"

अनूप की बातें सुनकर मनोरमा को तनिक भी गुस्सा नहीं आया। वह

मुस्कराती रही। फिर धीरे से वोली—"तुम्हारी सारी वातें मैंने सुन ली। अव तुम बीच में वोलोगे नहीं। अव मेरी सुन लो कि मैं क्या करने जा रही हूँ।"

यह कहने के वाद मनोरमा ने एक गिलास ठण्डा पानी अनूप को दिया और उससे आग्रह करके वोली—"पानी पी लो, थोड़ी-सी दिमाग की गर्मी ठंडी हो जायेगी।"

अनूप को प्यास लगी थी। उसकी जवान सूख रही थी। इसीलिये उस ने गिलास एक साँस में खाली कर दिया और माथे पर दोनों हाथ रख वर्थ पर वैठ गया। वह सुन रहा था, मनोरमा कह रही थी—"देखो, देहली चल कर हम लोग सवसे पहले किसी होटल में ठहरेंगे। उसी दिन मैं तलाक की दरखास्त दे दूँगी। मैं दिवाकर को धोखे में नहीं रखना चाहती। वह अपनी दूसरी शादी कर ले। रुपया मेरे पास वहुत है। वह दिवाकर की कमाई नहीं, मेरे वाप की दी हुई दौलत है, जिसमें जेवर भी शामिल है। तलाक की एप्लीकेशन देने के वाद फिर कोई अच्छा-सा फ्लैट ले लिया जायेगा। उसके वाद फिर हमारी सिविल मैरिज होगी।"

अनूप को ऐसा लग रहा था कि वह कोई सपना देख रहा है। उसे आश्चर्य पर आश्चर्य होता चला जा रहा था कि मनोरमा कैसी औरत है जिसे न तो अपने माँ-वाप का लिहाज है, न ससुराल वालों का उसने ध्यान रखा। सभी के मुँह पर कालिख पोत दी।

मनोरमा का कहना वरावर जारी था—"यों तो तुम्हें कोई भी धन्धा करने की जरूरत नहीं, क्योंकि तुम लक्ष्मी-पुत्र हो। तुम जैसे ही खवर दोगे, तुम्हारे माँ-वाप तुम्हारे पास दौड़े चले आयेंगे। तुम चाहे जितना रूठो, वह तुम्हें मनाकर ले जायेंगे। तुम वड़े वाप के वेटे हो, अनूप। मुँह में चाँदी का चम्मच लेकर पैदा हुए हो। पैसा तुम्हारा गुलाम है। वह तुम्हारे पीछे-पीछे दौड़ेगा। लेकिन······।"

"लेकिन क्या?"

"लेकिन दुनिया को दिखलाने के लिये तुम अपने पैरों पर खड़े होगे। यह हरसाओगे कि तुम्हें वाप की दौलत की कोई जरूरत नहीं। इसलिये मैंने जो सोचा है वह नाटक तुम्हें खेलना पड़ेगा।"

"क्या ?"

"देखो ! तुम एक लाख रुपया खर्च कर दो, इसमें तुम्हारी स्टैनलैस-स्टील के वर्तनों की अच्छी-खासी दुकान खुल जायेगी। देहली में कोई भी दुकान पच्चीस हजार से कम पगड़ी पर नहीं मिलेगी। बाकी रहा पचहत्तर हजार, उसमें से दस हजार फर्नीचर में लग जायेगा। शेप में स्टाक भर जायेगा। इसके अलावा एक एम्वेस्डर या फीयेट कार खरीद लो। मेरे जेवर ही कम-से-कम डेढ़ लाख के होंगे। मैं चाहती हूँ कि तुम खूब ऊँचे स्टैण्डर्ड से रहो, ताकि घर वाले और वाहर वाले सभी की आँखें खुल जायें कि तुम कुछ कर सकते हो और तुम कुछ कहो।"

"तुम्हारी सारी वातें मैंने सुन ली हैं, मनोरमा ! अब आगे और क्या कहना चाहती हो ?"

"आगे अभी वहुत कुछ कहना है।"

"अच्छा, कुछ मेरी भी सुन लो; फिर मैं तुम्हारी सुनूँगा।"

"क्या ?"

"मेरे पिताजी यही कहेंगे कि मैं घर से रकम लाया। उसी में यह शानोशौकत बनाकर वैठा हूँ।"

"जब वे ऐसा कहेंगे, तो मैं फौरन ही उनको जवाब दूँगी।"

"क्या ?"

"मैं कहूँगी कि आप फाइनेन्सर हैं, ससुर साहव। आप पैसे का व्यापार करते हैं। मेरा वाप कपड़े का व्यापारी है और मैं उनकी इकलौती वेटी हूँ। यह दौलत वह है, जो मेरे माँ-वाप ने मेरे व्याह में संकल्प की थी। मेरे माँ-वाप कभी इन्कार नहीं कर सकते कि यह सव मेरा नहीं है। और पूछो, तुम्हें कोई और शंका है ?"

"और क्या पूछूँ, मनोरमा ! दुनिया की सारी समझ का ठेका तो तुम ने ले रखा है। हाँ, अब तुम सुनाओ कि आगे तुम्हें क्या करना है।"

"देखो जव यह सारा प्रवन्ध हो जायेगा, तो फिर हम लोग निमन्त्रण-पत्र छपवायेंगे। वे पटना भेजे जायेंगे और मन्सूरी भी। हमारी शादी की दावत होटल इम्पीरियल में होगी, उसी में शामिल होने के लिए सबको बुलाया जायेगा। नीलिमा आयेगी। मैं उससे क्षमा माँग लूँगी और उ

ी कि तुम दूसरा ब्याह कर लो। मुझे अनूप बाबू पसन्द आ गये,
ये मैंने सिविल मैरिज कर ली।"

"मैं देख रहा हूँ, मनोरमा, कि तुम्हारे अन्दर बहुत हिम्मत है?"

"तुम बिलकुल ठीक कहते हो। हिम्मत ही इन्सान की पूँजी होती है।
समें हिम्मत नहीं, वह कुछ नहीं। और सुनो कि आगे के लिये मैंने क्या
चा है।"

"क्या?"

"दिवाकर बाबू को भी मैं नाराज नहीं करूँगी। उन्हें समझाऊँगी कि
वे भी अपनी शादी कर लें। मैं मजबूर हूँ। मेरा दिल अनूप पर आ गया।
इसीलिये मैंने उन्हें तलाक दे दी।"

"और क्या सोचा है तुमने?"

"अपने माँ-बाप को समझाना मेरे लिये बहुत आसान है। वे मान
जायेंगे और मैं उन्हें मना लूँगी। हाँ, तुम्हारे माता-पिता तुम्हें देहली में
नहीं रहने देंगे। वे तुम्हें ले जायेंगे। वे तुमसे कुछ भी नहीं कहेंगे। क्योंकि
तब हमारी शादी हो चुकी होगी। ऐसी स्थिति में जो फैलाव देहली में
फैलाओगे, वह तुम्हें समेटना पड़ जायेगा। इस तरह सब लोग खुश हो
जायेंगे, कोई भी नाराज नहीं रहेगा। बोलो, इसमें क्या गलत सोचा है?"

अनूप मौन हो गया। वह खिड़की से बाहर देखने लगा। बिजली की
बत्तियाँ दिखलाई पड़ रही थीं। इलाहाबाद आ रहा था। देखते-ही-देखते
जमुना के पुल पर से गुजरने लगी। ईंटों के भारी खम्भे काँपने लगे।
मुना का श्याम जल अंधेरी रात में काला-काला लग रहा था।

× × ×

इलाहाबाद स्टेशन पर मनोरमा बोगी से नीचे उतरी। वह प्लेट
पर आई। उसके हाथ में अनूप का हाथ था। उसे अब भी डर
अनूप रूठकर जा सकता है।

और अनूप सोच रहा था कि मनोरमा ने नशे की हालत
शादी के एग्रीमेन्ट पर दस्तखत करवा लिये हैं। उसने उसके साथ
लित फोटो भी खिचवा रखा है। उससे सहज ही पीछा नहीं
सकता। वह अपने में पूरी एक बला है।

यही कारण था कि अनूप असमंजस में था और उसे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। उसने सोच लिया था कि आगे कानपुर जंकशन आयेगा। वह वहाँ से गाड़ी वदल सकता है।

मनोरमा ने कॉफी और फुलप्वाइल अंडे लिये फिर वह पोपकार्न के दो पैकट खरीद, डिव्वे की ओर चल दी। इस वार जव ट्रेन चली, तो अनूप आँखें वन्द करके वर्थ पर लेट गया। उसने न तो कुछ कहा और न कुछ सुनना ही चाहता था।

मनोरमा के चित्त को भी शान्ति मिली। उसने संतोष की साँस ली। वह दूसरी वर्थ पर लेट गई। दोनों सुन रहे थे। ट्रेन छकपक-छकपक करती हुई हवा की रफ्तार से आगे वढ़ रही थी।

जव गाड़ी कानपुर पहुँची, तो सवेरा हो चुका था। अव मनोरमा को पूरा यकीन हो गया कि अनूप रास्ते में उसका साथ नहीं छोड़ेगा। उसने उसे तौल लिया था। इसीलिए पूरी तरह निश्चिन्त हो गई।

इस यात्री-ट्रेन का सफर वहुत लम्वा था। यह आगरा और मथुरा होती हुई देहलीपहुँचती थी। दोपहर वीत गई। गाड़ी ने पूरा आगरा शहर घूम डाला। पहले जव आगरा फोर्ट स्टेशन पर रुकी थी, तो वहा से ताज-महल के पीछे का हिस्सा दिखलाई पड़ता था। फिर जव ईदगाह स्टेशन पहुँची, तव ताजमहल ठीक सामने था।

तीसरे पहर गाड़ी मथुरा आई। उसके वाद अंधेरा झुकने लगा और देहली आने लगी।

जव ट्रेन निजामुद्दीन का स्टेशन पार कर चुकी, तो मनोरमा के मुँह से निकला—"हम लोग नई देहली उतरेंगे, ट्रेन पहले वहीं रुकेगी।"

अनूप ने कुछ भी जवाव नहीं दिया। वह नई देहली स्टेशन के आने की प्रतीक्षा करने लगा। नई देहली स्टेशन पर जव दोनों उतरे, तो वे एक टैक्सी में आकर वैठे और होटल टूरिस्ट की ओर चल दिये।

यह होटल नई देहली स्टेशन के पास ही था। इसका ठाठ निराला था। उच्च श्रेणी के लोग ही इसमें आकर ठहरते थे। यह महँगा होटल था। मनोरमा ने इसकी तनिक परवाह नहीं की। उसने पैंतालिस रुपये रोज किराये का कमरा लिया। उसे महान् खुशी थी। व अपनी महान्

...क रही थी कि वह जो सोचकर पटना गई थी, वह योजना
... अब शादी भी हो जायेगी और दिवाकर को तलाक भी दे

...के मन में बार-बार आता कि वह मनोरमा को न बतलाये
...मा को तार दे दे कि वह यहाँ है। वह नीलिमा से प्यार करता
...ह उसे जीवन-देवता मान चुकी है। उसे मनोरमा से तनिक भी
...हीं है। उसका अन्त:करण कह रहा था कि जो औरत अपने मर्द
... दे सकती है, वह किसी की भी नहीं हो सकती। मनोरमा बेवकूफ
...सीलिये दिवाकर को तलाक दे रही है।

× × ×

अनूप देख रहा था कि मनोरमा अपने में पूरी तरह गतिशील है।
...के वदन में फुर्ती ही फुर्ती है। उसने तलाक की दरखास्त दे दी। अपनी
...विल मैरिज के लिये एप्लीकेशन लगा दिया। उसके सारे के सारे कार्य
...तनी तेजी के साथ हो रहे थे कि जिसका नाम नहीं।

जब भी अनूप मनोरमा को टोकता और उससे कहता कि घर में सब
लोग उसके लिये परेशान हो रहे होंगे, तब मनोरमा हँसकर टाल देती,
धीरे से उसे समझा देती कि सभी लोग समझ गये होंगे कोई भी दूध-
पीता बच्चा नहीं है। जब हम लोग साथ ही गायब हुए हैं, तो फिर इसका
मतलब क्या हुआ। जवान लड़की जब जवान लड़के के साथ गायब हो,
तब फौरन समझ लेना चाहिये कि दाल में कुछ काला जरूर है।

इसके अलावा मनोरमा अनूप को समझाती भी रहती। वह कहती कि
मैं वही कर रही हूँ, जो तुम चाहते हो। सबसे पहले तलाक और सिविल
...रिज वाला काम होगा। उसके बाद फ्लैट लिया जायेगा और दुकान
होगी। तब कहीं नम्बर आयेगा निमन्त्रण-पत्र छपने का। फिर जब हमारी
शादी की दावत होगी, तो उसमें पटना के सभी लोग आयेंगे।"

अनूप की समझ में कुछ नहीं आता था कि क्या करे—उससे कुछ
गलतियाँ ऐसी हो गई थीं, जिनके लिये वह पछता रहा था। एक तो उस...
शादी के एग्रीमेन्ट पर दस्तखत कर दिये। दूसरे मनोरमा के साथ मन्सू...
में सम्मिलित फोटो खिचवा लिया।

ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा था, अनूप भयभीत होता जा रहा था। धीरे-धीरे यह नौवत आ गई कि अब उसकी विलकुल हिम्मत नहीं पड़ती कि वह माँ-बाप के सामने जाय और उनके सवालों का जवाव दे।"

तलाक वाला मामला अभी चल ही रहा था। उसके लिये ऐसा था कि जब तक दिवाकर अदालत में हाजिर नहीं होगा, दोनों के आमने-सामने वयान नहीं होंगे, तव तक तलाक मन्जूर नहीं हो सकता था। इसी-लिये मनोरमा ने अनूप को समझाया और उसने सिविल मैरिज कर ली।

कनाट प्लेस में दूसरी मंजिल पर एक फ्लैट ले लिया गया, उसका किराया पाँच सौ रुपये मासिक था। दुकान गोल मार्केट में ली गई, जिस की पगड़ी में तीस हजार लगे। आधुनिक ढंग का फर्नीचर वना; फिर उस में सामान भरा गया। नई फीयेट गाड़ी विलकुल नये मॉडल की कार खरीदी गई। उसमें पच्चीस हजार लग गये।

अव मनोरमा वहुत खुश थी। उसकी सारी की सारी योजनायें कार्य रूप में परिणत होती चली जा रही थीं। अव वह सोच रही थी कि निमन्त्रण-पत्र छपवाये जायें और उन्हें पटना रवाना कर दिया जाय।

निमन्त्रण-पत्र छप गये। वे वुक पोस्ट द्वारा वावू ईश्वरलाल के घर, रामधन की कोठी और कर्नल वंसीलाल के घर भेज दिये गये।

दिवाकर के पास भी निमंत्रण आया। संयोग की वात, जिस दिन उसे मनोरमा का निमंत्रण मिला, ठीक उसी दिन देहली की अदालत से उसके पास सम्मन पहुँचा, जिसमें उसे कचहरी में वुलाया गया था।

उससे साफ जाहिर हो गया कि मनोरमा ने उसे तलाक दे दी थी। उसी ने अपना प्रार्थना-पत्र कचहरी में लगाया है।

वंसीलाल को जव निमन्त्रण-पत्र मिला, तो वे रोने लगे और तुलसी से वोले—"मनोरमा ने नीलिमा के साथ विश्वासघात किया। उसने अनूप के साथ शादी कर ली और हम लोगों को निमंत्रण भेजा है। यह निमंत्रण उसकी शादी की दावत का है। दावत देहली में हो रही है।"

तुलसी ने पति की वातें सुनीं और निमंत्रण-पत्र देखा, तो उसकी भी आँखों में आँसू आ गये। उसने एक लम्वी साँस ली और उसके मुँह से निकल गया—"ईश्वर को यही मन्जूर था, कोई वात नहीं। हम लोग

के लिये दूसरा वर खोज लेंगे।"

नीलिमा की स्थिति अच्छी नहीं थी। जब से अनूप मनोरमा के लापता हो गया, उसने रो-रोकर घर भर दिया था। उसकी तन्दुरुस्ती पर बहुत ज्यादा असर पड़ा। वह जरूरत से ज्यादा दुबली हो गई। के चेहरे की हँसी विलीन हो गई। जब देखो, तब मुँह पर उदासी के बादल छाये रहते।

वह ऊब-ऊबकर साँसें लेती। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। उसने सोच लिया था कि वह देहली जरूर जायेगी और मनोरमा की शादी की दावत में शामिल होगी।

इसके लिये नीलिमा ने जब माँ-बाप से कहा, तो वे लोग राजी नहीं हुए। उनका कहना था कि जिस रास्ते पर चलना नहीं, हम उधर देखेंगे भी नहीं। देहली जाने की कोई जरूरत नहीं है। मैं मनोरमा से कोई सम्बन्ध नहीं रखूंगा।"

किन्तु नीलिमा ने जाने की योजना बना ली थी। उस पर माँ-बाप की बातों का तनिक भी असर नहीं पड़ा। उसने सोच लिया कि वह चुपके से देहली के लिये रवाना हो जायेगी। जाने से पहले एक पत्र लिखकर रख देगी ताकि ये लोग परेशान न हों।

इधर नीलिमा की यह स्थिति थी और उधर रामधन सीता से कह रहे थे कि इस लड़की ने मेरी नाक कटवा दी। इसने मुझे बदनाम कर दिया। इसका साहस देखो कि इसने अनूप से शादी कर ली। जमाना बहुत खराब आ गया है। आजकल के लड़के और लड़कियों का कोई भरोसा नहीं। बेचारे दिवाकर में क्या कमी थी, जो मनोरमा ने उसे तलाक दे दी ! हम लोग देहली चलेंगे और चलकर मनोरमा को खूब धिक्कारेंगे। ऐसी औलाद पैदा होते ही मर जाती, तो बहुत अच्छा होता।

सीता हाय-हाय करती, रामधन अपनी छाती पीट रहे थे। दम्पति को ऐसा लग रहा था कि उन्होंने कोई बहुत बड़ा गुनाह किया है। जिसके लिये वे बहुत शर्मिन्दा हैं, जिसके लिये उनकी निगाह किसी के भी ऊपर नहीं उठती।

दम्पति देहली जाने की तैयारी करने लगे। उन्होंने किसी को

वतलाया कि उनकी लड़की ने दूसरी शादी कर ली है। वे वहुत ज्यादा शर्मिन्दा थे।

इधर रामधन के घर की यह परिस्थिति थी और उधर जव वावू ईश्वरलाल को मनोरमा का निमंत्रण मिला, तो वे आग ववूला हो गये। पत्नी लीला से कहने लगे—"अनूप की माँ, अभी मेरे साथ रामधन के घर चलो। उनकी लड़की तो वहुत अच्छी निकली। उसने अपने ग्रादमी को छोड़ दिया और ग्रनूप के साथ शादी कर ली।"

"ग्रभी चलती हूँ। मैं मनोरमा को ग्रपनी वहू नहीं वनाऊँगी। वह लड़की अच्छी नहीं है।"

दम्पति रामधन के घर के लिये रवाना हो गये। रास्ते में भी उनमें वातें होती जा रही थीं कि वे कल ही सवेरे देहली के लिये रवाना हो जायेंगे। ग्रनूप की खूव कसकर खवर लेंगे। उसके साथ तनिक भी रिया-यत नहीं करेंगे कि उसने ऐसा गलत काम क्यों किया।

जव तक दम्पति रामधन की कोठी पहुँच नहीं गये, उनमें इसी तरह की वातें होती रहीं। वावू ईश्वरलाल क्रोध से झुलसे जा रहे थे। लीला की ग्राँखें अँगारों की वरसात कर रही थीं। उसके नथुने जोर-जोर से चलते। वह गुस्से से काँप रही थी।

६

वावू रामधन वहुत शर्मिन्दा थे। उन्होंने ईश्वरलाल से क्षमा माँगी। उनका कहना था कि जव लड़के और लड़कियाँ जवान हो जाते हैं, तो फिर उनपर माँ-वाप का जोर नहीं चलता। वे अपने मन की करते हैं। मनोरमा ने जो भी किया, उसके लिए मैं वहुत लज्जित हूँ।

रामधन सीता के साथ देहली के लिए रवाना हो गये। इधर जव नीलिमा ने देहली जाने के लिए कहा, तो कर्नल वंसीलाल ने उसे मना कर दिया। तुलसी का भी यही कहना था कि ग्रव अनूप के साथ नीलिमा का व्याह किसी तरह भी नहीं हो सकता। मनोरमा उसकी सहेली नहीं, दुश्मन

है। उसने उसका हक छीना है। उसकी शादी की पार्टी में जाने की को
जरूरत नहीं।

नीलिमा ने यह सुना, तो वह खामोश हो गई। उसने माँ-वाप से वहस
नहीं की।

नीलिमा गहरे सोच में डूब गई। उसकी समझ में नहीं आ रहा था
कि क्या करे। अनूप को वह अपना समझ वैठी थी। उसे उस पर अव भी
क्रोध नहीं था। उसे मनोरमा की हरकत पर ताज्जुब हो रहा था कि विवा-
हिता होते हुए भी वह इतनी गिर गई कि अपने पति को तलाक दे दिया
और अनूप के साथ व्याह कर लिया। तभी कहा जाता है कि स्त्री चरित्रम्
पुरुषस्य भाग्यम् देवो न जानाति कुतो मनुष्यः।

नीलिमा ने सुना था कि वावू रामधन और उनकी पत्नी सीता दोनों
देहली के लिए प्रस्थान कर चुके हैं। ऐसे ही उसने यह भी सुन रक्खा था
कि ईश्वरलाल और लीला भी देहली चले गये हैं।

नीलिमा सोचती रही। उसने वहुत विचार किया। अन्त में उसकी
समझ में यहीं आया कि वह भी देहली जायेगी। उसे चोरी-चोरी जाना
पड़ेगा। वह मौके पर पहुँचेगी और भरी महफिल में मनोरमा को जाकर
खूब धिक्कारेगी।

इधर पटना में सब लोग अपनी-अपनी परिस्थितियों से गुजर रहे थे,
उधर देहली में मनोरमा खुशी से फूली नहीं समाती थी। पार्टी का आयो-
जन चल रहा था। होटल के प्रवेश-द्वार पर अंग्रेजी में वेलकम और हिन्दी
में स्वागतम् विजली के रंगीन वल्वों से सजाया गया था। आर्केष्ट्रा वज रहा
था। वातावरण मुखर-मुखर उठता। मनोरमा कभी इधर जाती, कभी
उधर जाती। वह आये-गयों का स्वागत करती और उन्हें यथास्थान लाकर
वैठाती।

अनूप भी मेहमानों का स्वागत कर रहा था। उसके देहली के जो
अभी-अभी के नये इष्ट-मित्र थे। उसने सवको निमन्त्रित किया। इस तरह
इस दावत में उस बिल्डिंग के सभी लोग आये थे, जिसमें मनोरमा ने फ्लैट
ले रखा था। जहाँ गोल मार्केट में अनूप ने दुकान खोली थी, वहाँ के भी
पड़ोसी दुकानदार दावत में आये थे।

दावत का दौर शुरू हो गया। मनोरमा प्रतीक्षा ही करती रह गई। उसका अपना कोई भी नहीं आया था। सहसा उसकी दृष्टि सामने की ओर गई। उसने देखा, दिवाकर चला आ रहा है। उसने निगाह झुका ली और ऐसी बन गई, मानो जैसे उसने उसे देखा ही न हो।

दिवाकर मनोरमा के पास आकर रुका, उसने उसे एक तोहफा दिया। यह एक सफेद लिफाफा था, जो बंद था।

मनोरमा ने बहुत कुछ सोचा था कि जब दिवाकर आयेगा, तो वह उससे यह कहेगी, वह कहेगी। उसे अच्छी तरह समझा देगी। उसकी नाराजगी दूर कर देगी। लेकिन अब उसके साहस के देवता कूच कर गये थे। उसकी स्थिति अजीब थी। वह अपने में बहुत ज्यादा परेशान थी।

मनोरमा के हृदय की धड़कन इतनी तीव्र हो गई थी कि जिसका नाम नहीं। एक तो उसकी निगाह ही ऊपर नहीं उठती थी। दूसरे माथे पर पसीने की बूंदें आ रही थीं। वह चुपचाप खड़ी थी। दिवाकर लिफाफा देकर चल दिया। उसने बहुत कोशिश की, लेकिन जाने वाले को रोक नहीं पाई। उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला और दिवाकर हाल के प्रवेश-द्वार पर पहुँच गया।

अनूप ने दिवाकर को देखा था। वह भी बहुत ज्यादा शर्मिन्दा था। आखिर उसका मन नहीं माना, वह उसके पास लपककर पहुँच गया। उसने उसकी राह रोक ली और धीरे से हँसकर बोला—"कहाँ जा रहे हो, दिवाकर बाबू ?"

"शादी मुबारक हो, अनूप बाबू। माफ करना, दोस्त ! मैं तुम्हें बधाई देना भूल गया था।"

अनूप पर घड़ों पानी पड़ गया। अभी उसने कुछ कहने के लिए मुँह खोला ही था, तब तक दिवाकर हॉल से बाहर निकल गया। अनूप अपनी जगह पर ठगा-सा खड़ा रह गया। उसकी समझ में कुछ भी नहीं आया। वह मूक और बधिर हो गया था।

मौका पाकर मनोरमा ने लिफाफा खोला। इससे पहले वह अनुमान लगाकर सोच रही थी कि लिफाफे में चेक होगा। अक्सर लोग तोहफे में चेक प्रेजेण्ट करते हैं। लेकिन यह क्या ? उसमें एक पत्र था, जो शायद

लाल रंग से लिखा गया था और अब उस पर स्याही दौड़ रही थी।

पत्र में लिखा था—"शादी के लिए मैं तुम्हें मुबारकवाद देता हूँ, मनोरमा। तुमने तलाक का प्रार्थना-पत्र दे रखा है। मैंने भी तलाक की अर्जी लगा दी। अब हम दोनों एक-दूसरे के लिए गैर और अजनवी हैं। मुझे तुमसे कोई शिकायत नहीं है। मैं बहुत खुश हूँ। हाँ, यह आशा जरूर करूँगा कि जिस तरह तुमने मेरे साथ विश्वासघात किया, वैसे अनूप को मत छलना। वह बहुत भोला है। यह पत्र मैंने अपने खून से लिखा है। इसे हमेशा अपने पास रखना। यह तुम्हें याद दिलाता रहेगा कि तुमने अनूप के साथ कैसा व्यवहार करना है।"

पत्र के नीचे लिखा था—तुम्हारा एक अजनबी दिवाकर।

मनोरमा के हाथ में पत्र काँपने लगा। उसने जल्दी से उसे अपने ब्लाउज की जेब में रख लिया। आर्केस्ट्रा बज रहा था, दावत चल रही थी। कहीं हँसी के कहकहे गूँजते, कहीं बातों का दौर चल रहा था। चम्मच जब प्लेटों में बजते, तो वे मधुर स्वर-लहर उत्पन्न करते। गिलास खटकते। वैयरे डोलते। मनोरमा सिर झुकाये खड़ी थी। उसे बोध ही नहीं हो पाया कि नीलिमा उसके पास आकर कब खड़ी हो गई है।

नीलिमा भी अपने साथ एक छोटा-सा तोहफा लाई थी। वह था प्लास्टिक का एक खूबसूरत हरे रंग का डिब्बा। उसमें छोटी-सी कैंची थी। मनोरमा ने तोहफा देखा, उसने नीलिमा की सूरत निहारी। तभी नीलिमा व्यस्त स्वर में कहने लगी—"मैं शादी की बधाई देने आई हूँ, मनोरमा। भेंट में कैंची लाई हूँ। क्योंकि तुम्हें दिल जोड़ने की जरूरत नहीं। तुम्हें तो दिल तोड़ना आता है। जितने भी तुम्हारे प्यार के बंधन हों, उन्हें इस कैंची से काट डालना। तुम्हारा जब मन भर जाय, तो अनूप बाबू को भी तलाक़ दे देना। तुम···।"

अभी नीलिमा इतना ही कह पाई थी कि उसके दाहिने गाल पर मनोरमा का एक भरपूर थप्पड़ पड़ा। वह दाँत पीसकर बोली—"गेट आउट नॉनसेन्स ! अरे वेटर, इनको बाहर निकाल दो। यह यहाँ झगड़ा करने आई हैं।"

कुछ वेटरों ने मनोरमा की बात सुनी। मगर वे सुनी-अनसुनी कर गये।

कोई भी पास नहीं आया। लोग चौंक गये। कुछ लोग घटना-स्थल पर पहुंच गये। अनूप हड़वड़ा गया। वह मनोरमा को आकर डाँटने लगा।

अव पूरे हॉल में चख-चख मच गई थी। कोई कुछ कहता और कोई कुछ।

जव कोई वेटर पास नहीं आया, तो मनोरमा बुरी तरह खिसिया गई। वह नीलिमा से वोली—"तुम जा सकती हो, नीलिमा। अव हम आपस में सहेलियाँ नहीं, एक-दूसरे की दुश्मन वन गई हैं।"

"जव तक वेटर मुझे धक्के देकर यहाँ से नहीं निकालेंगे, मैं नहीं जाऊँगी। मैं चाहती हूँ कि तुम्हारी हर इच्छा पूरी हो। मुझे वहुत दुःख है कि तुमने एक औरत होकर औरतों के नाम पर कलंक लगा दिया। धिक्कार है तुम्हें! ऐसी औरतों को तो चुल्लू-भर पानी में डूवकर मर जाना चाहिए।"

जैसे ही नीलिमा की वात पूरी हुई, ठीक तभी उसके दूसरे गाल पर मनोरमा का एक थप्पड़ फिर पड़ा।

नीलिमा मुस्कराने लगी। उसने फिर वही गाल सामने कर दिया और व्यंग-भरे स्वर में वोली—"लगातार एक दर्जन थप्पड़ लगाओ। तव शायद तुम्हारा गुस्सा कुछ ठण्डा हो जायेगा। चोर की दाढ़ी में तिनका होता है। चोर को चोर कह दो, तो उसे वहुत वुरा लगता है। अव नया जमाना आया है। तुम नई रोशनी की औरत हो। तुम्हें मर्द पसन्द है। तुम मर्द वदलने का व्यापार करती हो। तुम···।"

अव मनोरमा सहन नहीं कर पाई। वह वाज-सी नीलिमा पर टूट पड़ी और दोनों हाथों से उसकी मरम्मत करने लगी। दावत में आये सभी लोग उठ-उठकर खड़े हो गये। कोई कहता—"व्हाट हैपेन ?" किसी के मुँह से निकलता कि क्या हुआ ? क्या हुआ ? भीड़ लग गई। लोगों ने नीलिमा और मनोरमा को घेर लिया। अनूप दोनों को छुड़ाने की कोशिश कर रहा था। नीलिमा पिट रही थी और मनोरमा पर शैतान सवार था।

लोगों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि न तो नीलिमा ने मनोरमा पर हाथ उठाया और न रोई-चिल्लाई ही। वह हँस रही थी, मुस्करा रही थी। ऐसे लगता कि मानो मनोरमा को चुनौती दे रही हो कि और पीटो, शायद तुम्हारे हाथों में ताकत नहीं है।

कुछ क्षण वाद नीलिमा बदल गई। उसने भीड़ की ओर उन्मुख होकर ...हा—"देख लो, भाई और वहनो। यह मनोरमा कुलीन वाप की वेटी ...। इसका यह धन्धा है कि पुराने मर्द को तलाक देना और नये से शादी ...रना। मेरा मंगेतर इसे पसन्द आ गया और इसने अपने मर्द को तलाक ...दे दिया। आप लोग इसे शरीफ औरत समझते होंगे, लेकिन यह हरजाई है, इसका चाल-चलन अच्छा नहीं। यह···।"

अभी नीलिमा इतना ही कह पाई थी कि मनोरमा ने उसे खड़े से धकेल दिया। वह औंधे मुँह फर्श पर गिरी। लेकिन तत्क्षण ही संभली और उठ-कर खड़ी हो गई। उसने मनोरमा के पेट पर एक लात दी और उसे पीठ के वल गिरा दिया। फिर उसकी छाती पर चढ़ वैठी और दोनों हाथों गला दवाती हुई वोली—"अव तुम्हारी खैर नहीं, मनोरमा। मैं तुम्हारी और अपनी जान एक कर दूंगी।"

मनोरमा का दम घुटने लगा। उसका चेहरा लाल हो गया। अनूप पसीने-पसीने हो गया था। और भी लोग दोनों को अलग-अलग करने की कोशिश में लगे थे। ऐसे अवसर पर आगे-आगे वावू रामधन और उनके पीछे सीता ने हॉल में प्रवेश किया। वहाँ का दृश्य देखकर दम्पति अवाक् रह गये। वे बुरी तरह सन्नाटे में आ गये।

सीता मनोरमा को नीलिमा से अलग करने लगी। ठीक तभी ली... के साथ वावू ईश्वरलाल भी आ गये। सबने मिलकर वड़ी मुश्किल से द... छुड़ाया। वावू रामधन लज्जित थे। उनके मुंह से निराशा-भरा ...कला—"दुनिया में आदमी अपनी औलाद से ही हारता है। मैं ...पी हूँ, मैंने एक नालायक लड़की को जन्म दिया। ईश्वर मुझे मौत ...रे पापों का प्रायश्चित्त तभी होगा।"

इधर रामधन वावू यह कह रहे थे और उधर ईश्वरलाल ... के मुँह पर जोर का एक थप्पड़ दिया। वे क्रोध से आग ववूला ... वोले—"तू इस मनोरमा के चक्कर में कैसे आ गया? मैं तुझसे ... लव नहीं रखूंगा। अपना सव कुछ ट्रस्ट को दे जाऊँगा। तुझे ... आई। जिस औरत ने अपने मर्द को तलाक दे दी, तू उसी के ... कर वैठा। आज से तू मेरे लिए मर गया, अनूप। न तू वेटा ...

वाप।"

अनूप चुपचाप सिर झुकाये खड़ा था। उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला। लीला ने भी उस पर हाथ छोड़ा। उसे खूब धिक्कारा।

इस तरह रंग में भंग हो गया। वावू रामधन पत्नी के साथ मनोरमा को धिक्कार कर चल दिये। ईश्वरलाल और लीला ने भी पुत्र का मोह छोड़ दिया। वे भी वहाँ से रवाना हो गये।

नीलिमा भी हॉल से वाहर आ गई। उसे किसी ने भी न तो टोका और न रोका। अनूप हॉल में खड़ा था और मनोरमा को वुरा-भला कह रहा था।

× × ×

मनोरमा ने जो सोचा था और जैसी योजना वनाई थी, उसके अनुसार उसकी शादी हो गई। उसने तलाक भी दे दी। लेकिन वद-नामी वहुत ज्यादा हो गई। इसके लिए दम्पति वेहद शर्मिन्दा थे।

मनोरमा ने अनूप को सब्जवाग दिखलाये थे। उसने कहा था कि वह दिवाकर को मना लेगी, उसे राजी करके भेजेगी। मगर ऐसा नहीं हो पाया। इसका उसे दुःख था।

मनोरमा यह सपना देख रही थी कि वह नीलिमा को भी हँसकर विदा करेगी। किन्तु परिस्थिति विपरीत हो गई। वह चौंककर रह गई।

ऐसे ही मनोरमा को विश्वास था कि अनूप के माँ-वाप आकर उसे जरूर ले जायेंगे, मगर वे लोग भी नाराज हो गये। अपने माता-पिता को भी वह समझा नहीं पाई। यही कारण था कि अनूप उससे असन्तुष्ट हो गया और अव सामने-सामने मुँह पर उसकी वुराई करने लगा।

दावत वाले दिन होटल में जो घटना घटी थी, उसका अनूप पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह कई दिन तक फ्लैट से वाहर नहीं निकला। उसने सोच लिया था कि जो प्रतिष्ठा उसकी पहले थी, अव वैसा सम्मान नहीं मिल सकता।

धीरे-धीरे एक महीना वीत गया। इस वीच में यह हुआ कि अनूप मनोरमा से दूर होता चला गया। दोनों का मन नहीं मिलता। छोटी-छोटी वात पर झगड़ा हो जाता। मनोरमा पछता रही थी कि उसने जिन्दगी में

यह सबसे बड़ी भूल की है, जो दिवाकर को तलाक दी और अनूप के साथ व्याह कर लिया। उसका जीवन किसी तरह भी सुखी नहीं रह सकता। यह उसने भलीभाँति सोच लिया है।

अनूप पश्चात्ताप की आग में जल रहा था कि वह मनोरमा के चक्कर में आ गया। उसके जाल में फँसता ही चला गया। नतीजा सामने है। बाप ने उसे ठुकरा दिया। अब वह न घर का रहा और न घाट का। उसकी हालत धोबी के कुत्ते जैसी हो गई है। यही कारण था कि अनूप हमेशा उदास रहता। वह ऊब-ऊबकर साँसें लेता। मनोरमा की गति-विधि उसे तनिक भी अच्छी नहीं लगती। वह हमेशा उसे हेय दृष्टि से देखता।

मनोरमा अलग हैरान थी कि आखिर भविष्य में ऊँट किस करवट बैठेगा। शादी के अभी चन्द दिन भी नहीं हुए और हम लोगों में अनबन हो गई। अगर यही परिस्थिति रही, तो फिर भविष्य साथ नहीं देगा। वह कोई न कोई नया कारनामा जरूर सामने लायेगा।

अनूप का चित्त उचाट हो रहा था। अब देहली शहर उसे बिलकुल अच्छा नहीं लगता था। वह जब दुकान पर जाकर बैठता, तो सिर झुकाये ही रहता। उसे लगता कि लोग उसकी ओर उँगली उठा रहे हैं। वे आपस में उसकी बुराई कर रहे हैं। उन्हें सारा भेद मालूम हो गया कि मनोरमा अपने पहले पति को तलाक दे चुकी है। वह अच्छी औरत नहीं है।

मनोरमा जब अनूप से घूमने जाने के लिए कहती, तो उसका जवाब होता कि मेरा मन नहीं है, तुम अकेली चली जाओ। ऐसी बातें सुनकर मनोरमा को बहुत दुःख होता। वह अपने किये पर पछता रही थी। उसके माँ-बाप भी उससे छूट गये।

एक महीना और बीता, दम्पति की दूरी बढ़ती ही गई। उनके विचार आपस में नहीं मिलते। वे एक-दूसरे को दोषी ठहराया करते। पहले झगड़ा ही होता था, लेकिन अब मार-पीट की नौबत आ जाती। अनूप मनोरमा की बातें सहन नहीं कर पाता। उस पर हाथ छोड़ देता। पड़ोसी सुनते। उन्हें ताज्जुब होता और वे आपस में चख-चख करते कि अभी शादी को थोड़े दिन नहीं हुए और मियाँ-बीबी में ऐसा झगड़ा होता है, जो सुना नहीं

जाता। अगर दोनों की कुछ दिन आपस में यही हालत रही, तो एक दिन इनमें तलाक हो जायेगा। लक्षण ऐसे ही लग रहे हैं।

७

दिवाकर का मन विरक्त हो गया था। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि मनोरमा उसे तलाक दे देगी। उसे अपनी पत्नी पर गर्व था। वह लोगों से उसकी तारीफ करता, सवसे कहता कि मेरी मनोरमा लाखों में एक है।

अव दिवाकर की गर्दन शर्म से झुकी की झुकी ही रहती। वह यही सोचा करता कि कहीं कोई उसे टोक न दे।

वावू रामधन मंसूरी आये। उनके साथ सीता भी थी। उन्होंने दामाद को समझाया। उनका कहना था कि तुम अपना दूसरा व्याह कर लो दिवाकर। मनोरमा ने जो कुछ किया, हम लोग उसके लिये वहुत ज्यादा शर्मिन्दा हैं।

किन्तु दिवाकर की समझ में कुछ भी नहीं आया। वह अकेले में सोचा करता, जिधर भी नजर उठाता, उसे अंधेरा ही अंधेरा दिखलाई पड़ता। वह अक्सर सोचता कि लोग कहते हैं कि मर्द की जात वेवफा है। वह औरत के साथ कभी वफा नहीं करता। लेकिन मैंने मनोरमा को सिर आँखों पर रखा, उसके साथ कभी दुर्व्यवहार नहीं किया। उसने मुझे धोखा दिया। उसने मेरे साथ विश्वासघात किया। इसीलिये अव यह कहना पड़ेगा कि मर्द नहीं, औरत वेवफा होती है और वह तभी विगड़ती है, जव उसे जरूरत से ज्यादा आजादी मिलती है।

पटना से नीलिमा का पत्र आया था। उसमें लिखा था, "दिवाकर वावू, मेरी सहेली ने तुम्हारे साथ जो कुछ किया, उसके लिये मैं उसकी ओर से क्षमा माँगती हूँ। मैं तो यही कहूँगी कि मनोरमा का दिमाग खराव हो गया है, तभी उसने ऐसा कदम उठाया। इसमें सभी की वदनामी हुई। मेरा होता हुआ व्याह रुक गया। अव मेरी तुमसे यही विनती है कि मनोरमा

को भूल जाओ और अपनी शादी कर लो। मैंने अब अपने लिये सोच लिया है कि मैं अब इस जिन्दगी में ब्याह नहीं करूँगी। मैंने अनूप बाबू को अपना जीवन-देवता मान लिया था। अब इस हृदय-मन्दिर में दूसरे को स्थान नहीं दूँगी।"

दिवाकर पत्र पढ़ते-पढ़ते रुक गया। उसकी आँखों में आँसू आ गये। वह सोचने लगा। उसकी आँखों के आगे नीलिमा का चेहरा नाचने लगा। कुछ देर तक वह अस्त-व्यस्त रहा। फिर पत्र पढ़ने लगा—"तुम्हें मेरी कसम, दिवाकर बाबू ! तुम शादी जरूर कर लेना। जिन्दगी का सफर बहुत लम्बा है, उसे अकेले तय नहीं कर पाओगे। मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो, मेरी चिन्ता बिलकुल मत करो। मुझे तुमसे हमदर्दी है और मैं तुम्हें खुशहाल देखना चाहती हूँ। इसीलिये जोर देकर लिख रही हूँ। मैं इन्तजार करूँगी कि तुम्हारे ब्याह का निमंत्रण मुझे कब मिलेगा।"

दिवाकर ने पत्र रख दिया। वह फिर विचारों की दुनिया में खो गया। उसे ऐसा लग रहा था कि नीलिमा मानवी है। वह देवी है। उसे उसकी पूजा करनी चाहिये। वह उसी समय पत्र लिखने बैठ गया, जिसमें समझाकर नीलिमा को यह लिखा था कि तुम पागल हो, नीलिमा ! अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है, जो तुमने यह सोच लिया कि शादी नहीं करूँगी। मैं इसके बहुत खिलाफ हूँ और मैं यह सुनना नहीं चाहता। जिस तरह तुमने मुझे कसम खिलाई है, वैसे मैं भी तुम्हें कसम की डोर में बाँध रहा हूँ। तुम्हें भी मेरी सौगन्ध है, नीलिमा, कि तुम शादी कर लो। अगर तुमने ऐसा नहीं किया, तो मुझे महान् दुःख होगा। मैं भी प्रतीक्षा करूँगा कि मुझे तुम्हारे ब्याह का निमंत्रण कब मिल रहा है। मैं तुम्हारे ब्याह में जरूर आऊँगा, नीलिमा। मुझे तुमसे पूरी-पूरी सहानुभूति है।

पत्र लिखकर दिवाकर ने लेटर बाक्स में छोड़ दिया। फिर उसने संतोष की साँस ली।

दिवाकर का मन मन्सूरी से हट गया था। उसे वहाँ अच्छा नहीं लगता था। इसीलिये उसने अपने तबादले का प्रार्थना-पत्र लगा दिया। उस समय कोई सुनवाई नहीं हुई। मामला आगे के लिये टल गया।

इस तरह दिवाकर का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था। उसके हरे-

भरे संसार में आग लग चुकी थी। उसकी खुशियाँ गम में बदल गई थीं। उसकी शान्ति का स्थान उलझन ने ले लिया था। सब कुछ मिलाकर उसे लग रहा था कि उसने पिछले जन्म में कोई बहुत बड़ा गुनाह किया था और यह उसी की सजा भोग रहा था। अब उसकी जिन्दगी में रौनक कभी नहीं आ सकती। हमेशा पतझड़ का ही मौसम बना रहेगा।

× × ×

दिवाकर के पास रिश्ते आते; लेकिन वह हर नाता ठुकरा देता, कोई भी रिश्ता मन्जूर नहीं करता। पहले तो वह लोगों से कहा करता था कि मैं जिन्दगी-भर व्याह नहीं करूँगा; लेकिन जब सबने उसे बहुत समझाया तो ऐसा कहने लगा—"अभी मुझे जल्दी नहीं है। अभी मेरा चित्त ठीक नहीं है। जब दिल को कुछ तसल्ली मिलेगी, शादी के लिये तभी सोचूंगा, अभी मजबूरी है। मैं क्षमा चाहता हूँ।

रामधन के पत्र पर पत्र आते। हर चिट्ठी में यही आग्रह होता कि तुम्हें ईश्वर की शपथ है, दिवाकर, व्याह कर लो।

बाबू ईश्वरलाल का भी पत्र दिवाकर के पास आया था। उसमें लिखा था कि दिवाकर, मैं अपने लड़के से बहुत नाराज हूँ, उसने जो कुछ भी किया, वह न तो उसके हित में अच्छा है और न किसी दूसरे के लिये। उसने जो गलती की है, उसके लिये जिन्दगी भर पछतायेगा। अपने पैरों पर खुद आप कुल्हाड़ी मारने वाला व्यक्ति जिन्दगी में कभी सफल नहीं होता। उसके चित्त को शान्ति नहीं मिलेगी। तुम शादी कर लो, अपना घर बसाओ। मेरी शुभ कामनाएँ तुम्हारे साथ है।

दिवाकर ने बाबू ईश्वरलाल का पत्र पढ़ा, तो वह सन्नाटे में आ गया। वह सोचने लगा कि बाबू ईश्वरलाल अनूप से नाराज हैं। उन्होंने दुःखी होकर यह पत्र लिखा है। उनका भी चित्त उलझन में होगा। क्योंकि उनके पत्र में यह लिखा कि, दिवाकर, तुम्हारे माँ-बाप नहीं है, तुम बिलकुल अकेले हो। तुम व्याह पक्का करो, मुझे उसकी सूचना दो। मैं अनूप की माँ को लेकर तुम्हारी शादी में आऊँगा। बहुत दिन रहूँगा। सगाई की रस्म भी हम लोगों के द्वारा ही सम्पन्न होगी। हम समझेंगे कि तुम दिवाकर नहीं, अनूप हो, मेरे धर्म-बेटे। तुम खुशखबरी-भरा पत्र कब लिखोगे। इस

की हम लोगों को प्रतीक्षा रहेगी।

इस तरह दिवाकर चारों ओर से घिर गया था। हर आदमी उसे मजबूर करता और जोर देता और सबका यही कहना था कि दिवाकर, तुम्हें जल्दी से जल्दी शादी कर लेनी चाहिये।

दिवाकर की मनःस्थित अच्छी नहीं थी। इसीलिये उसने एक महीने की छुट्टी ले ली और वहाँ से देहली चला आया। उसने सोचा था कि कुछ दिन देहली में रहेगा। वह राजधानी है। वहाँ रौनक ही रौनक है। उसका मन वहला रहेगा।

देहली आकर दिवाकर ने एक होटल में किराये का कमरा ले लिया। उसने किसी को भी नहीं वतलाया कि आजकल वह देहली में प्रवास कर रहा है।

सवेरे दिवाकर देर तक सोता। वह लगभग नौ वजे उठता। उसके वाद दैनिक कार्यों से निवृत्त हो, जलपान कर, घूमने निकल जाता। वह सैलानी हो रहा था, सैलानी। पर्यटक लोग जिस तरह राजधानी का भ्रमण किया करते हैं, उसी तरह वह भी घूम रहा था।

हालाँकि दिवाकर के लिये देहली नई नहीं थी; लेकिन वह जहाँ भी जाता, उसका मन लग जाता।

धीरे-धीरे दो सप्ताह वीत गये और दिवाकर का मन देहली से नहीं ऊवा। वह अगर कुतुवमीनार जाता, तो पूरा दिन वहीं व्यतीत कर देता। होटल आते-आते उसे रात हो जाती। ऐसे ही कोई दिन टैगोर गार्डन में गुजारता, कभी-कभी वह चिड़िया घर चला जाता। वहाँ उसका मन वहुत परेशान रहता। वहाँ भी दिन वीत जाता और वह खुशी-खुशी लौटता।

एक दिन दिवाकर चलचित्र देखने गया। मध्यान्तर में अचानक उसकी निगाह मनोरमा पर पड़ गई। उसने देखा कि वह अकेली थी। उसके साथ अनूप नहीं था।

दिवाकर ने यह अनुमान लगाया कि मनोरमा अपनी किसी पड़ोसिन या सहेली के साथ पिक्चर देखने आई होगी तभी अनूप उसके साथ नहीं आया होगा। मगर उसका यह खयाल गलत था। खेल खत्म होने के वाद

मनोरमा अकेली ही हाल से बाहर आई। उसके साथ कोई भी नहीं था। वह जाकर फीयेट कार में बैठ गई। उसने गाड़ी स्टार्ट की और अपने फ्लैट की ओर चल दी।

दिवाकर ने मनोरमा को अच्छी तरह देख लिया था। किन्तु वह उसे नहीं देख पाई। उसे सपने में भी यह आभास नहीं था कि दिवाकर आजकल देहली में ही रह रहा है। वह पूरी तरह निश्चिन्त थी। दिवाकर ने देखा कि उसके चेहरे पर बेफिक्री के नहीं, परेशानी के भाव थे। वह उसे जाते देखता रहा। उसके मुँह से एक लम्बी साँस निकल गई और वह आसमान की ओर देखने लगा।

होटल आकर दिवाकर की उलझन बहुत ज्यादा बढ़ गई। लाख कोशिश करने के बावजूद भी उसके चित्त को शान्ति नहीं मिल रही थी। वह आँखें मूंदता, सोने का उपक्रम करता; लेकिन नींद उससे रूठी थी। यह पास ही नहीं आती थी।

दिवाकर मनोरमा को भुलाने के प्रयत्न में लगा था। मगर कुछ ऐसा हो गया था कि उसे भुला ही नहीं पाता था। जितनी भूलने की कोशिश करता, वह उतनी ही याद आती। उसका चेहरा सामने से हटता ही नहीं। तभी दिवाकर को अपनी पलकें बन्द करनी पड़तीं।

सवेरे दिवाकर ने पाया कि उसके सिर में तेजी का दर्द था। उस दिन वह कहीं नहीं गया। होटल में ही पड़ा रहा। सवेरे हाकर से कुछ पत्र और पत्रिकाएँ ले ली थीं। उनसे ही मन बहलाने लगा।

जब साँझ हो आई और दिवाकर का दिल ऊब गया, तो होटल के बाहर निकला। उसने एक टैक्सी पकड़ी और कनाट प्लेस पहुँच गया। पहले कुछ देर कनाट सर्कस में बैठा; फिर उठकर धीरे-धीरे टहलने लगा।

दिवाकर को यह नहीं मालूम था कि अनूप ने दुकान गोल मार्केट में खोल रखी है। वह घूमता-फिरता उसी ओर निकल गया।

दाढ़ी बनाने के लिये ब्लेड का एक पैकेट लेना था। अतः एक दुकान पर रुक गया और ब्लेड खरीदने लगा तभी सहसा उसकी निगाह अनूप पर पड़ गई। वह बगल की दुकान पर बैठा था। दुकान स्टेनलैस स्टील के बर्तनों की थी। उस पर बोर्ड लग रहा था, जिस पर लिखा था—मनोरमा

वर्तन स्टोर।

कहीं अनूप की निगाह मुझ पर न पड़ जाय, यह सोचकर दिवाकर जल्दी से वहाँ से हट गया। आज उसकी उलझन कल से ज्यादा बढ़ गई। आज भी उसे नींद नहीं आई और वह निरन्तर सोचता ही रहा।

दूसरे दिन दिवाकर कहीं घूमने नहीं गया। उसने गुप्त सूत्रों से इस बात का पता किया कि मनोरमा और अनूप का दाम्पत्य जीवन किस तरह और कैसा-कैसा व्यतीत हो रहा है। वह अजनबी था। उसे कोई भी पहचान नहीं पाया। पड़ोसियों को यह आभास मिल गया कि मनोरमा ने अपने पति को तलाक देकर अनूप के साथ ब्याह किया है। न जाने दोनों ने शादी क्यों कर ली है! आजकल उनमें खूब झगड़ा होता है, कभी-कभी मार-पीट भी हो जाती है। दम्पति के विचार आपस में मिलते नहीं। वे एक-दूसरे के खिलाफ रहते हैं।

दिवाकर ने यह सुना, तो उसके कान खड़े हो गये। उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि सिर मुँडाते ही ओले पड़ने लगेंगे। ब्याह को अभी जुम्मा-जुम्मा आठ दिन भी नहीं हुए और झगड़ा शुरू हो गया।

दिवाकर ने अजनबी का लिवास पहना। उसने नकली दाढ़ी लगाई और अनजान बनकर अनूप की दुकान पर गया। उसने टिफिन बाक्स खरीदा और फिर बातों ही बातों में अनूप से कहने लगा—"लगता है, जनाब कुछ गर्दिश के चक्कर में हैं? माथे की लकीरें यही कह रही हैं। आई एम पामिस्ट (मैं हस्तरेखा का ज्ञान रखता हूँ)।"

अनूप ने यह सुना तो वह चौंक गया और वह उस अपरिचित को घूर-घूरकर देखने लगा। तभी उसने सुना, आगन्तुक फिर कह रहा था—"लाइये, दिखलाइये अपना दाहिना हाथ। आप चिन्ता मत कीजिये, मैं फीस एक पैसा भी नहीं लूंगा। भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों समय की बातें आपको बतला दूंगा।"

दिवाकर एक कुर्सी पर बैठ गया। अनूप ने अपना दाहिना हाथ उसके सामने कर दिया। दिवाकर कई क्षण तक उसे देर तक देखता रहा। फिर धीरे से बोला—"तुम्हारी एक शादी होते-होते रुक गई। दूसरी तुमने सब लोगों की मर्जी के खिलाफ की है। यह औरत तुम्हें दगा देगी। इसने

सावधान रहना। और यही तुम्हारी परेशानी का सबसे बड़ा कारण है। इस समय तुम पर शनि की दृष्टि चल रही है। तुम देश छोड़कर परदेश में आये हो। बोलो, यह सही है या नहीं ?"

अनूप चौंककर रह गया। वह भौंचक्का-सा हो, दिवाकर का मुँह देखने लगा। उसने हाँ-द्योतक सिर हिलाया और धीरे से कहा—"बिलकुल ठीक कहते हैं आप। इसमें तनिक संदेह नहीं।"

दिवाकर ने पुनः हाथ देखा और आगे फिर कहने लगा—"तुम अकेले हो। तुम्हारे कोई भाई और बहन नहीं। जब तक तुम पर शनि की दशा चल रही है, तब तक तुम ऐसे ही भटकते रहोगे। तुम्हें दूसरी शादी करनी पड़ेगी। तुम्हारे हाथ में ऐसी रेखा पड़ी है।"

"एं ! यह क्या कह रहे हैं आप ?"

"मैं सही कह रहा हूँ। आगे आने वाला समय तुम्हें यह स्वयं बतला देगा।"

"तो क्या मनोरमा मेरे साथ नहीं रहेगी ?"

"मुझे यकीन नहीं, क्योंकि तुम्हारी हस्तरेखाएँ यही बतला रही हैं।"

"अच्छा, और क्या बतला रहे हैं आप ?"

"और ?"

"हाँ।"

"एक दिन तुम्हें देहली छोड़कर अपने घर जाना पड़ेगा। तुम यहाँ नहीं रह सकते। तुम यहाँ नहीं टिक सकते। तुम्हारा आबदाना यहाँ बहुत थोड़े दिनों का है।"

"मगर पिताजी मुझसे नाराज हैं और अब वे मुझे घर में नहीं रखेंगे।"

"यह तुम्हारी भूल है।"

"कैसे ?"

"तुमने माँ-बाप का दिल दुखाया है। तुमने उन्हें नाराज किया है। यह उसी की सजा है जो तुम भोग रहे हो। अभी तुम्हारे ठोकर नहीं लगी, जैसे ही ठोकर लगेगी, तुम्हारी आँखें अपने आप ही खुल जायेंगी। तुम्हें शरण अपने घर में ही मिलेगी। जब तुम माफी माँगोगे, तो माँ-बाप तुम्हें

क्षमा कर देंगे।"

अनूप की दिलचस्पी बढ़ती जा रही थी। वह सवाल पर सवाल करता जिसका जवाब उसे फौरन ही मिल जाता। इससे उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहता। उसका हाथ दिवाकर के हाथ में था। वह प्रश्न पर प्रश्न कर रहा था। जब कोई ग्राहक आ जाता, तो यह हाथ देखने-दिखाने का काम रुक जाता। उसके चले जाने पर पुनः चालू हो जाता।

× × ×

जब दिवाकर चला गया, तो अनूप गहरे सोच में डूब गया। उसका मन कहता कि ज्योतिषी जो कुछ भी कह गया है, वह बिलकुल सही ही है। वैसा ही होगा। मनोरमा के विचार अब मुझसे बिलकुल नहीं मिलते। ये लक्षण इस बात के साफ प्रतीक हैं कि वह मुझे भी तलाक देकर किसी दूसरे युवक को पसन्द कर लेगी और उसके साथ उसका व्याह हो जायेगा।

वह हस्तरेखा-विशेषज्ञ अनूप से कह गया था कि मैं फिर कभी आऊँगा। पता पूछने पर उसने जवाब दिया था कि मैं किसी एक जगह पर टिककर नहीं रहता। मैं चलता फिरता रहता हूँ, मेरा यही काम है। भ्रमण करते-करते इतनी उम्र हो गई और अब घूमना एक आदत बन गई है। इसे मैं कभी छोड़ नहीं सकता। फिर जब कभी देहली आऊँगा, तुमसे जरूर मिलूँगा, तुम्हारे हाल-चाल पूछूँगा। मेरी एक आदत और है कि मुझसे किसी की भी परेशानी देखी नहीं जाती। तुम्हारे मामले में मुझे तुमसे पूरी-पूरी हमदर्दी है। इसके साथ दिलचस्पी भी है। मैं जरूर आऊँगा।

अनूप ने घर आकर मनोरमा को कुछ भी नहीं बतलाया। वह गौर-पूर्वक उसकी गति-विधि देखता रहा। सबसे पहले उसने उसके चेहरे के भाव परखे। उसमें लोच नहीं था। चेहरा यह बतला रहा था कि वह कुछ उलझन में है और परेशान-सी है। साथ ही साथ उसके सोचने का क्रम व— नहीं है।

अनूप ने एक दीर्घ उच्छ्वास ली। उसे अपने भविष्य के प्रति निरा होने लगी। उसने सोच लिया था कि अब वह ऐसा मौका नहीं आने दे जो मनोरमा से झगड़ा हो। वह उसे उसके हाल पर छोड़ देगा। चाहता था कि मनोरमा का मन उससे विरक्त हो जाय

भी तलाक दे दें। ऐसी हालत में वह उससे पूरी तरह छुटकारा पायेगा। जीवन में कुछ भूलें ऐसी हो जाती हैं, जिनके लिये मनुष्य को जिन्दगी-भर पछताना पड़ता है। अपने किये का फल बहुत जल्दी मिलता। मैंने जो कुछ भी किया, उसका नतीजा मेरे सामने है।

मनोरमा अनूप के आने से पहले सोच रही थी कि वह आते ही उस पर हावी हो जायेगा। कभी कोई कमी बतलायेगा, कभी कोई शिकायत करेगा। वह दुकान से जब भी आता है, तो अंगारों पर पैर रखता चला आता है।

मगर आज वैसा नहीं हुआ। मनोरमा को कुछ इसीलिये आश्चर्य हो रहा था। वह बार-बार पति का मुँह देखती और जल्दी से अपनी निगाह फेर लेती। उसकी निगाहों की चोरी अनूप ने पकड़ ली। उसे हँसी आ गई। उसने धीरे से टोक दिया और बोला—"क्या देख रही हो, मनोरमा? मुझमें कोई खास बात है क्या?"

मनोरमा एकदम चौंक गई। वह जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में कहने लगी—"मैं तुम्हें नहीं देख रही हूँ। मैं···।"

"फिर?"

"मैं सोच रही थी कि आज खाना बनाने में देर हो गई, शायद तुम नाराज होने लगोगे।"

इस बात पर अनूप हँस दिया और हँसते-हँसते धीरे से बोला—"यह तुम्हारी भूल है, मनोरमा। भला मैं अकारण ही नाराज क्यों होने लगूँगा? जब तुम ऐसी बात कहती हो, जो मुझे बर्दाश्त नहीं होती, तभी मुझे गुस्सा आ जाता है। मेरा स्वभाव जब से घर छोड़ा है, बहुत ज्यादा चिड़चिड़ा हो गया है। इन छोटी-छोटी बातों पर ध्यान मत दिया करो, मनोरमा। घर में जब चार बर्तन होते हैं, तो खटपट जरूर होती है।

अनूप की ये बातें सुनकर मनोरमा को ऐसा लगा कि शान्ति में ही सुख है। अगर वह संतोष कर ले और उसमें थोड़ी-सी सहन शक्ति आ जाय, तो गृहस्थी की गाड़ी सुचारु रूप से चल सकती है। दम्पति में झगड़ा होने का प्रश्न नहीं उठता।

दूसरे दिन अनूप अधिकांश मौन ही रहा। उसने सोच लिया था कि

वह मनोरमा के साथ कभी उलझेगा नहीं। इससे कोई फायदा नहीं।

और मनोरमा पर पति के मौन तथा गम्भीरता का इतना अधिक गहरा प्रभाव पड़ा कि वह अपने आपमें ही शर्मिन्दा हो गई। वह मन-ही-मन गुप्त भय की आशंका से काँप उठी कि जब अनूप खामोश है, वह धीर-गम्भीर है, तो ऐसी स्थिति में अगर कोई झगड़ा होता है, तो उसके लिए दोषी मनोरमा को ही ठहराया जायेगा।

इस तरह धीरे-धीरे एक सप्ताह बीत गया और दम्पति के बीच में किसी भी तरह का कोई भी झगड़ा नहीं हुआ। मगर उनको खुशी नहीं थी। वे एक-दूसरे को ऐसी निगाह से देखते, मानो दूसरा अपराधी हो।

आपस में एक-दूसरे से लगाव नहीं था। सारे का सारा आकर्षण न जाने कहाँ जाकर समाप्त हो गया! वे ऐसे लग रहे थे कि मानो लकीर के फकीर हों और किसी तरह जिन्दगी की गाड़ी चला रहे हैं। दोनों को एक-दूसरे से संतोष नहीं था।

८

कर्नल वंसीलाल ने नीलिमा के लिये एक योग्य वर खोजा वह इन्जीनियर था। वे उसका फोटो भी लाये। वह नीलिमा को दिखलाया। पत्नी को भी सारा हाल बतलाया और फिर कहने लगे—"यह लड़का मुझे पसन्द है। तुम लोग भी देख लो और पसन्द कर लो। मैं चाहता हूँ कि नीलिमा का व्याह जल्दी-से-जल्दी हो जाना चाहिये।"

तुलसी पति के सर्वथानुकूल थी। उसने युवक इन्जीनियर का चित्र देखा, तो उसे बहुत अच्छा लगा, लेकिन नीलिमा ने चित्र की ओर देखा नहीं। वह छूटते ही बाप से कहने लगी—"पिताजी, आप मेरे लिये परे[illegible] न हों, मैं आपके हाथ जोड़ती हूँ। मैं शादी नहीं करूँगी। आपसे न [illegible] कितनी बार कह चुकी हूँ, मेरा मन शादी की ओर से हट गया, मु[illegible] दिलचस्पी नहीं, आप यह फोटो वापस कर दीजिये।"

वंसीलाल ने यह सुना तो उनके तन-वदन में आग लग गई। वे

बबूला होकर गुस्से से काँपते हुए बोले—"यह तो मैं वहुत दिनों से सुन रहा हूँ, नीलिमा। मगर तुम अभी इतनी आजाद नहीं हो गई हो कि अपनी मनमानी करो। जब तक मैं जिन्दा हूँ, तब तक तुम्हें आजादी नहीं मिल सकती। हाँ, शादी के बाद ससुराल में जाकर तुम स्वतंत्र हो जाओगी। फिर मैं तुमसे कुछ नहीं कहूँगा।"

"कुछ भी हो, पिताजी, मैं शादी नहीं करूँगी।"

वंसीलाल आवेश से काँपने लगे। उनके मुँह से तेज आवाज निकली—"नीलिमा, मैं जो कुछ भी कहूँगा, वह तुम्हें करना पड़ेगा। लड़की और गाय एक समान होती हैं। माँ-बाप उसका हाथ पकड़कर जिसे सौंप देते हैं, वह वहीं जाती है। तुम···।"

अभी वंसीलाल इतना ही कह पाये थे कि नीलिमा बाधा देकर बीच में बोल उठी। वह व्यस्त स्वर में अपने वाप से कहने लगी—"पिताजी, आप मजबूर न कीजिये। मैं आपको कैसे समझाऊँ? आप मुझे ज्यादा परेशान करेंगे, तो मैं आत्महत्या कर लूँगी; मगर शादी नहीं करूँगी, नहीं करूँगी आप कान खोलकर सुन लीजिये।"

तुलसी पास ही खड़ी थी। वह पुत्री की बातें देर से सुन रही थी। जब उससे चुप नहीं रहा गया, तो ताव में भरकर तेज गले से कहने लगी—"वाह रे कलियुग! वाह रे जमाना! यह कौन-सा समय आया है कि जवान लड़कियाँ बाप से बिलकुल नहीं डरतीं, बराबर जवाब देती हैं। अरे लड़की, अपने पैरों में खुद कुल्हाड़ी क्यों मार रही है? तू शादी नहीं करेगी जिन्दगी भर अविवाहित बनी रहेगी, तो यह पाप मेरे को लगेगा। तेरे सिर पर अनूप का भूत सवार है। उसे भूल जा, पगली, वह तेरा नहीं था। मैं मानती हूँ कि उसने तुझे धोखा नहीं दिया, तेरे साथ विश्वासघात नहीं किया; लेकिन तेरी सहेली मनोरमा ने नागिन बनकर तुझे डस लिया। अब तुझे दोस्त और दुश्मन की पहचान हो जानी चाहिये। मुझे बहुत दुःख है कि तेरी आँखें अब भी नहीं खुलीं।"

माँ की भी बातों का असर नीलिमा पर तनिक भी नहीं पड़ा। वह अपनी ही बात कहती रही। उसकी बातों का निष्कर्ष यह था कि यदि उसे अधिक विवश किया गया, तो वह या तो मौत को गले से लगा लेगी या फिर

घर छोड़कर कहीं दूर चली जायेगी। उसके बाद लौटने का सवाल ही नहीं उठता है।

× × ×

नीलिमा ने बहुत कहा, लेकिन माँ-बाप के सामने उसकी एक भी नहीं चली। उसकी सगाई कर दी गई। उसके ब्याह का मुहूर्त भी निश्चित हो गया। उस पर प्रतिबन्ध लगा दिया कि वह घर से बाहर कहीं भी नहीं जायेगी। जब तक शादी नहीं हो जाती, उस पर यह पाबंदी रहेगी।

नीलिमा पहले कुछ दिन तक तो विरोध करती रही; लेकिन आजकल वह पूरी तरह शान्त थी। उसने सोच लिया था कि उसके माँ-बाप अपनी जगह पर बिलकुल सही हैं। जो उनका कर्त्तव्य है, वे उसे पूरा कर रहे हैं। लेकिन उसके सामने मजबूरी है कि वह दूसरे पुरुष को सपने में भी अपना पति स्वीकार नहीं कर सकती। उसने सोच लिया था कि जब अनूप पराया हो गया, तो वह पराई नहीं बनेगी। उसके सामने भारतीय नारी का आदर्श है। भारतीय नारी जीवन में केवल एक ही पति के साथ रहती है। वह उसका भगवान् होता है। गैर मर्दों को वह भाई समझती है।

इस तरह नीलिमा उच्च शिक्षा प्राप्त होते हुए भी मर्यादा का पूरा-पूरा निर्वाह कर रही थी। कभी सोचती कि दूर चली जाऊँ और फिर लौटकर न आऊँ। कभी दिमाग में आता कि संसार से ही विदा हो जाऊँ। मगर वह कुछ भी निश्चित नहीं कर पाती। दिन-रात ही सोचा करती। शादी के दिन करीब आ रहे थे। यही कारण था कि उसकी मानसिक उलझन बढ़ती जा रही थी। वह अपने में बहुत ज्यादा परेशान थी।

नीलिमा ने एक रात को अपनी सहेली मनोरमा को पत्र लिखा। उसमें उसने लिखा था कि मैं घर छोड़कर कहीं दूर जा रही हूँ। मैं अब लौटकर कभी नहीं आऊँगी। मैंने यह फैसला कर लिया है। मेरे माँ-बाप को नहीं बतलाना। मेरी शादी होने जा रही है। मैंने तो जिन्दगी में अनूप को पति के रूप में देखा था। अब मैं अपने हृदय-मन्दिर में दूसरे पुरुष को स्थान नहीं दे सकती। इसीलिए शादी नहीं करूँगी और मुझे जाना पड़ रहा है।

मनोरमा ने पत्र पढ़ा तो वह चौंक गई। उसके आश्चर्य का पारावार न रहा। वह नीलिमा की तुलना स्वयं अपने से करने लगी। उसने पाया कि

नीलिमा आकाश को छू रही है। अपने लिए उसे लगा कि वह जमीन में धँसती जा रही है। वह चिन्ताधारा में अबाध गति से बहने लगी। उसका माथा सरसराया। वह पत्र आगे पुनः पढ़ने लगी—"तुम्हें मेरी कसम, मनोरमा! इस पत्र का जिक्र किसी से भी मत करना। तुम्हें सूचना दे दी। तुम्हारे पास मन लगा था। तुम मेरी अपनी हो। मुझे अच्छी तरह याद है कि जब हम दोनों स्कूल से लौटती थीं, तो हमारा वह चाकलेट चूसना, आइसक्रीम खाना, गैस के गुब्बारे आसमान में छोड़ना। न जाने कितने काम इसी तरह हम दोनों करती थीं। वे हमारे बचपन के दिन थे और अब जवानी का दौर चल रहा है। अनूप बाबू को भी मत बतलाना कि मैंने घर छोड़ दिया है। कहीं चली गई हूँ। उनके साथ तुम सुखी हो, मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता है। उनका खयाल रखना। तुम्हारे द्वारा उन्हें कोई पीड़ा न पहुँचे। उनको सिर-आँखों पर रखना। यही मेरी कामना है, यही मेरी इच्छा है। वे शाद रहें, आबाद रहें। तुम्हारी बगिया में, मनोरमा, सदाबहार फूल खिलें। तुम्हारे आँगन में वसन्त आये, तुम्हारे मन की कोयल बोले। नीलिमा यही चाहती है। नीलिमा इसी में खुश है।"

अब मनोरमा ने पत्र रख दिया और वह रोने लगी। उसे वे दिन याद आये, जब दोनों सहेलियाँ प्रथम श्रेणी की छात्रा थीं। एक बार वे कुछ लड़कियों के साथ पिकनिक पर गईं। यह पिकनिक पटना में महेन्द्र घाट पर हुई थी। वहाँ से पानी वाले जहाज छूटते, जो गंगा में चलते। कुछ सैलानी लड़कियाँ एक जहाज में बैठ गईं। वह जलपोत पटना से कलकत्ता जा रहा था। उन्हें इस बात का बोध नहीं था और न यही पता था कि जहाज जल्दी ही छूट रहा है। जैसे ही जहाज का भोंपू बजा और उसका चलने के लिए सिगनल हुआ, लड़कियाँ घबराईं। वे जल्दी-जल्दी उतरने लगीं। ऐसे में ही उसका पैर फिसला और वह धड़ाम से गंगा में गिर पड़ी। गिरते ही डूब गई। लेकिन जैसे ही गोता खाकर ऊपर आई, नीलिमा ने उसके बाल पकड़ लिये। वह उसके पीछे ही पानी में कूदी थी और लड़कियाँ हाय-हाय कर रही थीं। वे दैय्या-तौबा करके शोर मचाने में लगी थीं। नीलिमा उसे किनारे पर ले आई, उसे पट लिटा दिया गया। उसकी सहेली उसकी पीठ दबाने लगीं। तब कहीं जाकर उसके पेट में भरा पानी उसके

नथुनों और मुँह से बाहर निकला।

मनोरमा यही सोच रही थी कि ऐसी थी नीलिमा, जिसने अपनी जान पर खेलकर मेरी जान बचाई। मैं कैसी पतित हूँ, [illegible] मैंने अपनी सहेली का हक छीन लिया! मुझे ऐसा नहीं [illegible] नहीं करना चाहिए था।

आँसू बह रहे थे। उनकी झड़ी लग रही थी। मनोरमा [illegible] थी। उसे बीते हुए दिन याद आ रहे थे। उसने फिर [illegible] पोंछकर आगे पढ़ने लगी। आगे नीलिमा ने लिखा था कि अब मैं [illegible] नहीं, मनोरमा। इसके लिए मुझे [illegible]। मैं भूल ही गई। मुझे [illegible] याद ही नहीं रहा। मैंने तुम्हारी शादी की दावत में तुम्हारा [illegible] किया था, उसके लिए माफ़ी चाहती हूँ। मेरा जिन्दगी में [illegible]। मैं शादी नहीं करूँगी। पहले तो सोचा था कि कुछ [illegible] अपना लूँगी, ईश्वर की सेवा करूँगी। मगर यह कुछ भी [illegible] में नहीं आता। इसलिए यह सोचा है कि पटना में [illegible] ही जल-समाधि ले लूँगी। बस, फिर इस जीवन से छुटकारा मिल जायेगा। अच्छा, विदा। देखो, हमारी याद आये, तो दुःखी मत होना। मुझे बुरा-भला मत कहना। यह सोचकर भूला देना कि नीलिमा [illegible] थी। उसे जिन्दगी में कभी सुख नहीं मिला। मेरा यह आखिरी खत है, मेरी यह पत्र द्वारा अन्तिम मुलाकात है। मैं···।

पत्र समाप्त हो गया था। मनोरमा ने अपने आँसू पोंछे और सोचने लगी कि अब कुछ भी नहीं हो सकता है। क्योंकि नीलिमा जा चुकी होगी। उसने अनूप से पत्र के विषय में नहीं बतलाया। वह जानती थी कि इससे उसे दुःख होगा। वह यों ही उससे खिन्न-खिन्न रहता है, फिर और भी विरक्त हो जायेगा।

इधर मनोरमा की यह स्थिति थी और उधर नीलिमा ने अँधेरी रात में घर से बाहर पैर निकाला। उसमें हिम्मत [illegible] नहीं थी। उसके शरीर में कम्पन था। उसने किसी तरह पत्र एक लेटर बॉक्स में डाला और फिर उस गहन अन्धकार में न जाने कहाँ जाकर खो गई। उसका कुछ भी पता नहीं चला। सवेरा होते ही [illegible]

जब नीलिमा का विस्तर खाली मिला, तो तुलसी चौंकी। उसने पति से कहा। कर्नल वंसीलाल परेशान हो गये। पूरा घर छान डाला गया, लेकिन नीलिमा कहीं नहीं मिली।

अब वंसीलाल का माथा ठनका। उसे समझते देर नहीं लगी कि नीलिमा ने घर छोड़ दिया है। वह कहीं चली गई।

तुलसी की भी समझ में यह वात अच्छी तरह आ गई थी। दम्पति एक-दूसरे को दोषी ठहरा रहे थे। उनका कहना था कि नीलिमा इसलिए घर छोड़कर चली गई कि वह शादी करने के पक्ष में नहीं थी। अनूप को वह भूल नहीं पाई। उससे उसका गहरा लगाव हो गया था।

जहाँ तक कर्नल वंसीलाल की कोशिश थी, वे अपने प्रयत्न में तनिक भी पीछे नहीं रहे। शहर की एक-एक गली देख डाली। सभी जगह पता किया। मगर जाने वाली का कुछ भी हाल नहीं मिला। वे निराश होकर वैठ गये और उन्हें अपना भविष्य अन्धकारमय दिखाई पड़ने लगा।

पहले दम्पति ने सवसे छिपाने की कोशिश की, लेकिन फिर भेद गुप्त नहीं रह पाया। हर आदमी जान गया कि कर्नल वंसीलाल की लड़की नीलिमा घर छोड़कर चली गई है। व्याह का मुहूर्त टल गया। वंसीलाल को वहुत ज्यादा शर्मिन्दा होना पड़ा। उनकी गर्दन झुक गई। वे वर पक्ष वालों को कुछ भी जवाव नहीं दे पाये।

× × ×

नीलिमा अन्धकार को चीरती हुई गंगा के तट पर आई। वह जिंदगी से निराश हो गई थी। इसीलिए सीढ़ियों पर जाकर वैठ गई। उसने पानी में पैर लटका लिए और सामने की ओर देखने लगी। तव नीले आसमान का रंग गहरा काला लग रहा था। उसमें तारे चाँदी के दीपक जैसे चमकते। हवा पुरवाई वह रही थी, उसकी शहनाई अपने में मस्त थी। सहसा नीलिमा के मुँह से अस्फुट स्वर में निकल पड़ा—"दिल की धड़कन पर गा। उम्र-भर मुस्करा। प्यार को जीत ले। जिन्दगी हार जा। दिल की धड़कन···।"

नीलिमा गम्भीर हो गई। वह अपने प्रति गहराई के साथ विचार करने लगी। उसके एक कान में किसी ने आकर कहा—"नीलिमा! तुम

जिन्दगी का सबसे वड़ा पाप कमाने जा रही हो। ऐसी भूल मत करो। आत्महत्या से वड़ा पाप दुनिया में और कोई नहीं होता।"

नीलिमा चौंकी। उसने उस कान पर हाथ रख लिया। तभी दूसरे कान में हवा का एक छोटा-सा झोंका आकर कह गया कि नीलिमा यहाँ क्यों आई हो। यहाँ से चली जाओ। तुम्हें जिन्दगी का सफर तय करना है, तुम्हारी मंजिल मौत की कभी नहीं हो सकती।

अब नीलिमा ने दूसरे कान पर भी हाथ रख लिया। सामने कल-कल निनाद करती हुई गंगा की धारा वह रही थी। अन्धेरे में पानी ऐसा लगता कि जैसे वह काले रंग का हो। वह काँपता-हिलता, मीठा-मीठा शोर करता, उसमें तारे झाँकते। उनका प्रतिबिम्ब भी हिलता-डुलता दिखलाई पड़ता। हवा की शहनाई अनजान रूप से वज रही थी।

नीलिमा का ध्यान बदला। वह दोनों हाथों से जल-क्रीड़ा करने लगी। उसने मुँह धोया, कई चुल्लू गंगा जल पिया। फिर वह मुक्त कण्ठ से मगन होकर गाने लगी—"जिन्दगी गीत है, प्यार है रागिनी। दिल की धड़कन पर गा। प्यार को जीत ले। जिन्दगी हार जा। दिल की धड़कन···।"

नीलिमा उठकर खड़ी हो गई। उसने गंगा माँ को प्रणाम किया और फिर घूमकर चल दी। तब वह मौन स्वरों में मगन होकर गुनगुना रही थी—"दुनिया में हम आये हैं, तो जीना ही पड़ेगा, जीवन है अगर, तो जहर पीना ही पड़ेगा।"

नीलिमा स्टेशन आ गई। उसने कुछ भी नहीं सोचा। चुपचाप आकर एक ट्रेन में वैठ गई। न तो उसके पास टिकट थी और न उसे यही पता था कि यह गाड़ी किधर जा रही है। वह सोच रही थी। उसके विचारों का क्रम अनवरत रूप से चल रहा था। यह ट्रेन पश्चिम की तरफ जा रही थी। यह एक्सप्रेस गाड़ी थी। जब वह छोटे-छोटे कई स्टेशन पार कर गई, तब नीलिमा को एक यात्री के मुँह से सुनने को मिला कि यह मेल ट्रेन है और हावड़ा से देहली जा रही है। सुनते ही नीलिमा के मुँह से एक दीर्घ उच्छ्वास निकल गई। वह सँभलकर वैठ गई। मन-ही-मन यह निश्चय करने लगी कि उसे कहाँ जाना चाहिए। बीच में दो ही शहर बड़े हैं। इलाहाबाद और कानपुर, उसके बाद देहली है।

ट्रेन चल रही थी। नीलिमा सोच रही थी, उसकी बुद्धि ठीक से काम नहीं कर रही थी। इसीलिए कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रही थी।

९

नीलिमा देहली आ गई। स्टेशन पर आ वह असमंजस में पड़ गई कि अब उसे क्या करना चाहिए। उसे बोध नहीं था। टिकट के लिए उसे किसी ने टोका भी नहीं और वह प्लेटफॉर्म से बाहर आ गई। न तो उसका पर्स साथ में था और न एक पैसा। वह दुःख के अथाह सागर में डूबी थी। उसी वेदना के प्रवाह में वह बहती रही।

पहले नीलिमा के मन में आया कि वह मनोरमा के घर जाये। ऐसा सोच, वह टैक्सी की ओर लपकी, लेकिन फिर रुक गई। उसके मन ने कहा कि तुम्हारा मनोरमा के घर जाना ठीक नहीं। वहाँ तुम्हारे चित्त को शांति कभी नहीं मिल सकती और उलझन चौगुनी बढ़ जायेगी।

टैक्सी ड्राइवर ने नीलिमा को आते देखा था, उसने टोक दिया। वह बोला—"कहाँ चलना है?"

"कनॉट प्लेस।"

नीलिमा के मुँह से बरबस ही निकल गया। लेकिन वह जगह से हिली नहीं। जहाँ की तहाँ खड़ी रह गई।

"आइये, बैठिये। कनॉट प्लेस किस ब्लाक में जाना है?"

"सी ब्लाक।"

"ठीक है, आइये, बैठिये। आपको अभी पहुँचाता हूँ।"

नीलिमा कुछ भी सोच नहीं पाई। वह टैक्सी में जाकर बैठ गई। टैक्सी चल दी। लेकिन वह कनॉट प्लेस की ओर नहीं गई। स्टेशन से कश्मीरी गेट आई और फिर मजनू के टीले की तरफ चल दी। यह इलाका सुनसान था। यहाँ पर सन्नाटा-ही-सन्नाटा था। सामने का रोड बहुत कम चलता था। यह सड़क देहली से सीधी अमृतसर जाती थी।

एक जगह ड्राइवर ने टैक्सी रोक दी। वह नीचे उतरा। फिर पीछे की

खिड़की खोल, नीलिमा से कहने लगा—"नमस्ते, मेम साहब ! अब शराफत इसी में है कि जो कुछ भी तुम्हारे पास हो, मुझे दे दो।"

नीलिमा ने यह सुना, तो सन्नाटे में आ गई। एक क्षण के अन्दर ही उसकी समझ में आ गया कि यह टैक्सी ड्राइवर नीयत का खोटा है। गनीमत यही है कि जो मुझसे केवल माल ही माँग रहा है। यह इज्जत पर भी डाका डाल सकता है। वह मुस्कराई और धीरे से बोली—"क्या कनॉट-प्लेस आ गया, ड्राइवर साहब ?"

"यह कनॉट प्लेस नहीं, मजनू का टीला है। यहाँ वे ही लोग आते हैं, जो चोर या वदमाश होते हैं, जिन्हें गुनाह करने के लिए शहर में जगह नहीं मिलती।"

"तो तुम गुनाह करने आये हो ?"

नीलिमा अब भी मुस्करा रही थी। टैक्सी ड्राइवर कुछ शर्मिन्दा हो गया। तभी दूसरे ही क्षण नीलिमा फिर बोल उठी—"तुम पहुँचाओगे नहीं और मैं जाऊँगी नहीं। छोड़ो कनॉट प्लेस, मुझे नहीं उतरना। आज मैं भी देख लूँ कि मजनू का टीला कैसा है। लैला और मजनू का किस्सा किताव में पढ़ा था। इसका सिनेमा भी देखा। वाकई में उस फिलम में शम्मी कपूर और नूतन ने वहुत अच्छा काम किया था।"

ड्राइवर चौंक गया था। उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। अभी उसने कुछ कहने के लिए मुँह खोला ही था कि तव तक नीलिमा फिर बोल उठी—"हाँ, मैं भूल गई। मुझे माफ करना ड्राइवर साहव ! देखो भाई, मुझे देखकर तुम्हारी नीयत खराव हो गई है। बोलो, यह सच है या नहीं ?"

ड्राइवर भौंचक्का-सा रह गया। वह आँखें फाड़-फाड़कर नीलिमा की ओर देखने लगा।

अव नीलिमा गाड़ी से नीचे आ गई थी। वह ड्राइवर के पास खड़ी थी। उसने उसके चेहरे पर दृष्टि टिकाई और फिर मृदु स्वर में धीरे से बोली—"तुमने कहा है, भाई, कि जो कुछ मेरे पास हो, वह तुम्हारे हवाले कर दूं। अच्छा, अगर मैं कुछ न दूं, तो फिर तुम क्या करोगे ?"

ड्राइवर विस्मय-विभोर हो रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा

था कि आखिर यह सब क्या है। वह देख रहा था कि न तो यह युवती डरी, न इसे कोई दहशत ही हुई। यह हँसकर बातें कर रही है। गजब की हिम्मत है इसमें।

जब ड्राइवर ने कोई जवाब नहीं दिया, तो नीलिमा ने उसके कन्धे पर अपना दाहिना हाथ रख दिया और फिर प्यार-भरे स्वर में बोली, "अच्छा, न बतलाओ, भइया। अब मैं तुमसे पूछूँगी नहीं। मुझे क्या करना है ? मैं खतरा अपने साथ रखना नहीं चाहती। देखो, पैसे के नाम पर तो मेरे पास एक पैसा भी नहीं है। अगर तुम कनॉट प्लेस चलते, तो तुम्हें किराया वहाँ से दिलवाती। हाँ, यह हीरे का हार गले में बेकार ही पड़ा है, इसे तुम रख लो। हाथ में चार सोने की चूड़ियाँ हैं, यह भी ले लो। घड़ी भी सोने की है, मैं इसका क्या करूँगी ? टाप्स नीलम के है, इन्हें सँभालकर रखना। ये बहुत कीमती हैं। नाक की कील में पुखराज जड़ा है। यह भी रख लो। एक अँगूठी है, उस पर भी हीरा जड़ा है। इसे अपनी उँगली में पहन लो।"

यह कहने के साथ नीलिमा गहने उतारने लगी। हार उसने ड्राइवर के हाथ पर रख दिया। अपनी रिस्ट वाच खोलकर उसकी कलाई पर बाँध दी। अँगूठी उँगली में पहना दी। टाप्स उसकी जेब में डाले। चूड़ियाँ दूसरे हाथ पर रख दीं। फिर मुस्कराई और धीरे से बोली—"अच्छा, अब मैं जाती हूँ, मेरा सारा खतरा दूर हो गया। अब मुझे कोई परेशान नहीं करेगा। तुम जाओ, भइया, अपना काम देखो। मैं भी मजनू का टीला देखती हूँ।"

यह कहने के साथ नीलिमा घूमकर चल दी। ड्राइवर उसे जाते हुए देखता रहा। फिर दो क्षण बाद ही तेजी के साथ पीछे लपका। वह करीब पहुँच गया और व्यस्त स्वर में बोला—"ठहरो, बहन ! मैं तुम्हें ऐसे नहीं जाने दूँगा। तुम···।"

नीलिमा पीछे मुड़ी, वह रुक गई। उसने शान्त स्वर में पूछा—"अब क्या है, भइया ? मुझे क्यों रोका है ?"

ड्राइवर के आँसू आ गये। वह जरूरत से ज्यादा व्याकुल हो रहा था। उसने सारे-के-सारे जेवर नीलिमा के आगे बढ़ा दिये और फिर जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में कहने लगा—"यह जेवर रख लो, बहन, और मुझे माफ कर

दो। तुमने भाई कहा और मैंने वहन। भाई वहन के जेवर नहीं ले सकता। यह पाप है, आओ, चलो, गाड़ी में वैठो। मैं तुम्हें अभी कनॉट प्लेस पहुंचाता हूँ। मैंने देखते ही पहचान लिया था कि तुम देहली में नई-नई आई हो। तुम घर से लड़कर या नाराज होकर निकली हो।"

"यह विलकुल सच है, भइया। मैं झूठ नहीं वोलूंगी। घर से मैं चोरी-चोरी भाग आई हूँ। कनॉट प्लेस में एक सहेली है। वहीं जा रही थी। हालाँकि उस सहेली से भी मेरी अनवन चल रही है। मुझे जाना नहीं चाहिए। यह जेवर रख लो। यह मेरे लिए प्राणघातक हैं। इन्हें मैं अपने पास नहीं रखूंगी। तुम जाओ और मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो। अव मैं कनॉट प्लेस नहीं जाऊँगी।"

ड्राइवर ने यह सुना तो वह अवाक् रह गया। उसने नीलिमा का हाथ पकड़ लिया और रोकर कहने लगा—"तुम्हारे पास सच्चाई है, वहन ! तुमसे ईश्वर भी डरेगा। मुझे तुमने भइया कहा है। इस नाते मैं अपनी दुःखी वहन को कहीं नहीं जाने दूंगा। तुम मेरे घर चलो। वहाँ चलकर आराम करो। जव तुम्हारा चित्त कुछ शान्त हो जाये, तव मुझे वतलाओ कि तुम्हें क्या दुःख है। मैं उस दुःख को दूर करके रहूँगा। यह मेरा दावा है। मेरे घर में और कोई नहीं, केवल एक वूढ़ी माँ है। शादी अभी की नहीं। इसके लिए माँ मुझे रोज टोकती है।"

नीलिमा मुस्करा रही थी। उसने शान्त स्वर में कहा—"चलो, तुम्हारे दिल में मेरे लिए इतनी जगह तो हुई। मैं जरूर चलूंगी। कुछ देर तुम्हारे यहाँ रुकूँगी। लेकिन इससे पहले मजनू का टीला देखना चाहती हूँ कि वह कैसा है ?"

"टीला फिर देख लेना। टैक्सी तुम्हारे घर में है। घर चलो, वहन। आज मैं कितना खुश हूँ कि ऊपर वाले ने मुझे एक वहन दे दी ! अव हम दो भाई-वहन हो गये। तुम्हें देखकर माँ वहुत खुश होगी।"

"अच्छा, चलती हूँ, लेकिन पहले यह वतलाओ कि माँ को मेरा परिचय क्या दोगे ?"

"परिचय ?"

"हाँ, परिचय।"

"जो कुछ सच्चाई है, वही हक़ीक़त माँ के सामने वयान कर दूँगी।"

"माँ क्या कहेंगी ? उनकी नजरों में तुम्हारी पोजीशन क्या होगी ?"

"माँ नाराज नहीं होंगी। उन्हें प्रसन्नता होगी। कैसा भी गुनाह हो और कैसा भी झूठ, माँ-वाप से कुछ भी नहीं छिपाना चाहिए। क्योंकि माता-पिता से कभी अहित नहीं हो सकता। सन्तान चाहे जितनी भी गई-वीती हो।"

नीलिमा अब पीछे की सीट पर नहीं वैठी। आगे की खिड़की खुली थी। वह ड्राइवर के पास जाकर वैठ गई। उसके मुँह से निकला—"टैक्सी तुम्हारी है, भइया, या किराये पर चलाते हो ?"

"टैक्सी किराये की है, वहन। इतना पैसा कहाँ, जो टैक्सी खरीद सकूँ ?"

"तुम मन क्यों छोटा करते हो, भइया ? आदमी को हमेशा महत्त्वाकांक्षी होना चाहिए। तुम टैक्सी खरीदोगे, तुम उसके मालिक वनोगे। सारी वरकत नीयत की होती है। घर किस जगह है ?"

"आनन्द पर्वत पर, एक छोटी-सी जगह ले रखी है। उसका किराया वहुत ज्यादा है। यह देहली है, देहली, वहन। यहाँ कम किराये पर कोई घर नहीं मिलता। अव मेरी शंका दूर हो गई। पहले मैं डर गया था।"

"क्यों ?"

"जव तुमने जेवर दे दिये और वापस जाने लगी, तो मैं वुरी तरह घवरा गया।"

"ऐसा क्यों, भइया ?"

"मैं समझा कि तुम कोई सी० आई० डी० इन्स्पेक्टर हो। तुमने मेरा गाड़ी नम्बर नोट कर लिया होगा। इसीलिए वेफिक्री के साथ जा रही हो। मगर अव वह संदेह दूर हो गया। मुझे क्षमा कर दो, वहन। मैं अपने पाप का प्रायश्चित्त अवश्य करूँगा।"

"तुम पागल हो, भइया ! तुम्हें तनिक भी वुद्धि नहीं। मैं पूछती हूँ कि यह किस किताव में लिखा है कि वड़ा भाई छोटी वहन से माफी माँगे। कोई दूसरी वात करो।"

ड्राइवर ने यह सुना तो उसका हृदय खुशी के कारण वल्लियों उछलने

लगा। उसने धीरे से पूछ लिया—"तुम्हारा नाम क्या है, वहन ?"

"मैं झूठ नहीं वोलूँगी। सच्चाई में बड़ा वल होता है, भइया। मैं नीलिमा हूँ। पटना में रहती हूँ। वहाँ से यहाँ देहली आई हूँ। और तुम्हारा नाम क्या है, भइया ?"

"मेरा नाम वसन्त है। मैं विहार के आरा जिले का रहने वाला हूँ।"

"तुम भी विहारी ही हो। इस तरह हम लोगों की जन्मभूमि एक ही प्रदेश की है।"

टैक्सी चल रही थी। दरियागंज से गुजरने के वाद उसने देहली गेट को भी पीछे छोड़ा। फिर आनन्द पर्वत की ओर वढ़ने लगी। दोनों में वातें हो रही थी।

जव टैक्सी वसन्त के दरवाजे पर जाकर रुकी, तो नीलिमा नीचे उतरी। उसने वसन्त के साथ घर में प्रवेश किया।

मालती ने स्टोव जला रक्खा था। वह उस पर चाय का पानी चढ़ाने जा रही थी। उसने वेटे को आते देखा, तो चौंक गई और चिन्तित हो, व्यस्त स्वर में पूछने लगी—"वहुत जल्दी लौट आये, वसन्त ? क्या आज मजदूरी नहीं हुई ?"

"माँ, मैं मजदूरी पर गया ही नहीं। मैं···।"

अभी वसन्त इतना ही कह पाया था, तव तक मालती की निगाह उसके पीछे आ रही नीलिमा पर पड़ गई। वह चौंकी और विस्मय-विभोर होकर पूछने लगी—"यह कौन है वसन्त ?"

"माँ, मैं अपने लिए वहन लाया हूँ और तुम्हारे लिए वेटी। मेरी वहन का नाम नीलिमा है। यह पटना से आई है।"

नीलिमा ने यह सुना तो उसने तुरन्त ही मालती को प्रणाम किया।

वसन्त ने कुछ भी नहीं छिपाया। उसने आदि से लेकर अन्त तक सारी कहानी मालती को सुना दी। इस पर मालती ने आगे वढ़, नीलिमा को वक्ष से लगा लिया। वसन्त ने गहने माँ को दे दिये थे। मालती ने खुशी-खुशी वे नीलिमा को पहनाये। यद्यपि वह इन्कार कर रही थी और गहने पहनने के लिए वह राजी नहीं थी।

× ×

दो दिन में ही नीलिमा मालती से ऐसी घुल-मिल गई, मानो वह मुद्दत से उसके साथ रह रही हो।

नीलिमा ने अपनी सारी रामकहानी मालती को सुना दी। इस पर मालती ने उसे समझाया, धीरज बँधाया। उसने कहा—"जो त्याग करता है, वेटी, और संतोष कर लेता है, उसकी हमेशा जीत होती है। यह कोई नई वात नहीं है। मैंने तो सोचा था कि तुम्हारे माँ-वाप को खवर कर दूँ, लेकिन फिर तुम्हारी वात मुझे माननी पड़ी। अभी शान्त रहो। धीरज से काम लो। कुछ दिन वाद तुम्हारे विचार आप ही वदल जायेंगे और तुम माँ-वाप को खवर करोगी।"

नीलिमा ने यह सुना तो उसको मालती पर गर्व होने लगा। जव उसे और कुछ नहीं सूझा, तो उसने मालती के वक्ष में सिर छिपा लिया और सिसक-सिसककर रोने लगी।

मालती की भी आँखें गीली हो आईं। उसने नीलिमा का सिर ऊपर उठाया। फिर अपने आँचल से आँसू पोंछती हुई गद्गद कण्ठ से वोली—"रोती क्यों है, पगली। यह दिन तेरे रोने के नहीं, हँसने के हैं। मैं माँ हूँ। वसन्त वेटा भाई है। तू क्यों घवराती है?"

लेकिन नीलिमा के आँसू नहीं रुके। वे धार वनकर वहते ही रहे। तव मालती ने उसका मुँह चूम लिया। उसे अपनी गोद में समेटा। वह कहने लगी—"तुम्हारे साथ जो कुछ भी हुआ है, नीलिमा, इसका मुझे वहुत दुःख है। तुम्हारा दिल टूट गया है, तभी तुमने माँ-वाप का साया छोड़ा। अभी मैं कुछ नहीं कहूँगी। विलकुल चुप रहूँगी। वह समय जल्दी ही आने वाला है, जव तुम मुस्कराओगी और तुम्हारे होंठों पर खुशी के गीत होंगे।"

इस तरह देर तक नीलिमा सिसकती रही। रोती रही। मालती उसे समझाती रही।

वसन्त भी जव नीलिमा को उदास देखता, तो उसका मन वहलाने की कोशिश करता। कभी-कभी वह नीलिमा को अपने साथ टैक्सी पर वैठा कर घुमाने ले जाता।

ऐसे ही वसन्त कभी खाली हाथ घर नहीं आता। वह जव भी चौखट में पैर रखता, तो उसके हाथ में नीलिमा के लिए कुछ न कुछ जरूर होता।

नीलिमा भी वसन्त का वहुत ज्यादा खयाल रखती। वह उसके कप- धोती, उन पर लोहा करती। नाश्ता सवेरा होते ही तैयार कर देती। लं के लिए टिफिन टैक्सी में रख देती। वह कहती कि दूध जरूर पिया करो भइया। दूध का पीना तुम्हारे लिए वहुत जरूरी है। इतनी मेहनत करते हो। निगाह का काम है।

वसन्त नीलिमा की वातें सुनकर खुशी से फूला नहीं समाता। व: अपना स्नेह उस पर पूरी तरह लुटाता। बदले में वहन का प्यार पाता।

मालती वसन्त और नीलिमा को जव आपस में स्नेह-भरी वातें करते देखती, तो पुलकित हो जाती और मन-ही-मन ईश्वर से विनय करने लगती कि भगवान् वसन्त को सुबुद्धि दे। वह जल्दी घर में वहू ले आये। बहू के वगैर मेरा घर सूना-सूना है। नीलिमा को भी ज्ञान दे भगवान्। वह जिद छोड़ दे। अनूप को भूल जाये। उसका व्याह होना भी बहुत जरूरी है।

इस प्रकार वसन्त के घर में खुशियाँ ही खुशियाँ थीं। सभी लोग आनन्द-मग्न थे।

नीलिमा के आ जाने से घर की शोभा बढ़ गई थी। अव उसमें रौनक ही रौनक दिखलाई पड़ती। न माँ ऊवती और न वेटा। दोनों भविष्य के सुनहरे सपने देख रहे थे।

मालती सोकर नहीं उठ पाती। उससे पहले ही नीलिमा जाग जाती और दैनिक कार्यों में व्यस्त हो जाती।

मालती चौंककर रह जाती, उसे सारा घर साफ मिलता। चाय- नाश्ता तैयार हो जाता। खाना भी वन जाता, जो टिफिन में रखना होता। वह रोज मना करती, लेकिन नीलिमा उसकी एक नहीं सुनती। सवेरे तड़के ही वह जाग जाती और रात को जव सोती, तो आधी रात हो जाती।

नीलिमा का जहाँ तक वश चलता, वह मालती और वसन्त को कोई भी काम करने नहीं देती। यही कारण था कि दोनों माँ-वेटा उस पर वलि-वलि जाते। उसकी वलायें लेते। वह दोनों के लिए एक ईश्वरीय वर- दान सिद्ध हो रही थी।

नीलिमा ने मनोरमा के घर का पता वसन्त को वतला दिया था।

उसने यह भी वतलाया था कि गोल मार्केट में उसके पति अनूप की स्टेन-लैस स्टील के बर्तनों की दुकान है।

इसीलिए वसन्त के मन में कभी-कभी आता कि वह गुप्त-रूप से पता करे कि मनोरमा दम्पति क्या कर रहे है और उनकी गति-विधि इस समय कैसी चल रही है।

किन्तु वसन्त ऐसा सोचकर ही रह जाता। वह आगे कदम नहीं बढ़ाता।

मालती भी अक्सर सोचा करती कि उसे नीलिमा के लिए क्या करना चाहिए। लड़की जवान है। वह घर छोड़कर परदेश में आई है। उसका व्याह बहुत आवश्यक है। उसकी जिद्द वेकार की है, जिससे कोई फायदा नहीं।

घर के तीनों प्राणी अपने-अपने कर्तव्य के प्रति पूर्णतया जागरूक थे। नीलिमा में मालती के लिए श्रद्धा थी और वसन्त के लिए स्नेह। वसन्त के हृदय में वहन का प्यार भर गया था। मालती ने अपने प्यार और स्नेह को दो भागों में बाँट दिया। उसका आधा स्नेह पुत्र के प्रति सुरक्षित था, आधा उसने नीलिमा को दे रक्खा था।

१०

दिवाकर की छुट्टी समाप्त हो गई थी। उसने मन्सूरी जाने की योजना वनाई। इससे पहले उसके मन में आया कि वह अनूप की दुकान जाय और उससे मिले।

तीसरे पहर का समय था। अनूप बैठा डे-वुक लिख रहा था। तभी सहसा उसकी निगाह सामने आ रहे ज्योतिषी पर पड़ गई। वह खुशी से फूल की तरह खिल उठा। जल्दी से काउण्टर से वाहर आया। उसने आगे बढ़कर ज्योतिषी का स्वागत किया और सम्मान के साथ दुकान पर लिवा लाया।

दिवाकर कुर्सी पर बैठ गया। वह मुस्करा रहा था। उसने अनूप की

ओर देखा और फिर धीरे से वोला—"कहिये, सब आनन्द-मंगल है ?"

"हाँ, आपकी दया हैं। मैं आपको रोज याद करता। आज आप आ गये, यह वहुत अच्छा हुआ।"

"क्यों, कोई खास वात है क्या ?"

"खास वात तो कोई नहीं, रोज का मसला है। मैं घर से ऊब गया हूँ, इसका मुझे कोई उपाय वतलाइये। मेरी समझ में कुछ भी नहीं आता।"

"देखो, भाई ऐसा है। मैंने तुमसे पहले भी कहा था कि तुम्हें अपनी पत्नी से सावधान रहना चाहिये। वह विश्वासघात कर सकती है। जब जीवन-साथी गलत होता है, तो जिन्दगी नरक बन जाती।"

"अव मैं क्या करूँ ?"

इस पर ज्योतिषी ने अनूप का हाथ अपने हाथ में ले लिया। वह उसकी रेखाएँ देखने लगा। अनूप गम्भीर था। उसका चेहरा साफ बतला रहा था कि उसका पारिवारिक जीवन सुखी नहीं। देर बाद ज्योतिषी वोला—"अगर तुम्हारे जल्दी से जल्दी कोई सन्तान हो जाती है, तो फिर तुम्हारी पत्नी के स्वभाव में परिवर्तन हो जायेगा। वैसे ये रेखाएँ डंके की चोट पर कह रही हैं कि इस पत्नी से तुम्हें सुख कभी नहीं मिलेगा, हमेशा निराशा ही रहेगी।"

"आपने यह नहीं वतलाया कि मुझे करना क्या चाहिये ?"

"तुम कुछ मत करो, बस इतना खयाल रखो कि उस औरत के चक्कर में मत आओ। उसकी वातें सुनो जरूर, लेकिन करो अपने मन की। मैं जब-जब देहली आऊँगा, तुमसे जरूर मिलूँगा। मैं फिर दोहरा रहा हूँ कि मुझे तुमसे हमदर्दी हो गई है।"

"आपका कोई एक स्थान नहीं, आपका मुस्तकिल कोई पता नहीं। इसी से जी घवराता है। आपके आने से मुझे राहत मिलती है, दिल को तसल्ली हो जाती है।"

"अच्छा, अव मैं चलूँगा। मुझे जल्दी है। जाते-जाते यह कह रहा हूँ कि अगर तुम्हारे पिता तुम्हें लेने आयें, तो इन्कार मत करना। उनके साथ चले जाना। तुम्हारे हक में यह वहुत अच्छा रहेगा। इसीलिये कह रहा हूँ।"

"आपकी बातें मैं कभी नहीं भूल सकता। आपने जो कुछ बतलाया है, मैं वहीं करूँगा।"

इसके बाद जब अनूप ने ज्योतिषी को विदा किया, तो वह गहरी उदासी में डूब गया था। उसकी आँखों के सामने मनोरमा का चेहरा नाचने लगा। उसे वे दिन और वे घटनाएँ एक-एक करके याद आने लगीं। मनोरमा उस पर डोरे डाल रही थी; उसे अपने जाल में फँसा रही थी।

अनूप ने अनुमान ही नहीं लगाया उसे पक्का यकीन हो गया, कि मनोरमा में तनिक भी वफा नहीं। वह औरत बेवफा है। उसकी आँख में सुअर का बाल है। वह मेरी कभी नहीं हो सकती। शायद वह मुझे नहीं, मेरी दौलत को नहीं, मेरी जवानी को प्यार करती है। जिन औरतों को मर्द बहुत पसन्द होते हैं, उनका यही व्यापार होता है। जब तक दुकान बन्द नहीं हो गई, अनूप ऐसे ही विचारो में खोया रहा। वह घर आया तो देखा कि मनोरमा टेलीविजन देख रही है। उसने टेलीविजन चालू रखा। उसे बन्द नहीं किया और अनूप से बोली—"तुम भी आओ, देखो, बड़ा अच्छा प्रोग्राम चल रहा है।"

अनूप को भूख लगी थी। उसने कुछ भी जवाब नहीं दिया। वह चुप-चाप अपने कमरे में जा, कपड़े बदलने लगा। मनोरमा ने इस पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। वह टेलीविजन बराबर देखती रही। उसे इस बात का पता ही नहीं चला कि अनूप कब घर से बाहर निकल गया है।

अनूप बाहर आया। वह एक होटल में पहुँचा। वहाँ जाकर खाना खाया। फिर जब लौटकर घर आया, तो देखा कि मनोरमा अब भी टेली-विजन देख रही है। वह उसके पास आकर बैठ गया और बोला कुछ भी नहीं।

मनोरमा ने पति की ओर देखा तो उपेक्षापूर्वक पूछ लिया—"कपड़े बदलने में बहुत देर लग गई। वहाँ क्या करते रहे?"

"मैं दूसरा टेलीविजन देख रहा था।"

"दूसरा टेलीविजन?"

"हाँ, दूसरा टेलीविजन।"

मनोरमा समझ गई कि वह असन्तुष्ट है, इसलिये व्यंग बोल रहा है।

वह चिढ़ गई और ताव में भर, तेज गले से बोली—"तुम हमेशा नाराज ही रहते हो। तुम्हारे चेहरे पर हँसी तो कभी आती ही नहीं। मुझे ऐसा स्वभाव बिलकुल पसन्द नहीं है। यह मैं पहले नहीं जानती थी।"

"तो अब जान लो।"

मनोरमा को क्रोध आ गया। उसने टेलीविजन बन्द कर दिया और अंगारों पर पैर रखती हुई वहाँ से चल दी। जाते-जाते अनूप से बोली—"चलो, खाना खा लो। डिनर के लिये रोज देर हो जाती है। इसीलिये मैं तुम्हारे आने से पहले ही खाना खा लेती हूँ। खाना ठंडा हो गया है। अगर कहो, तो गरम कर दूँ।"

"गरम करने की कोई जरूरत नहीं।"

"तो क्या ठंडा खा लोगे?"

"खाना मैंने खा लिया है?"

"खाना खा लिया है।"

"हाँ।"

"कब?"

"अभी।"

'मैंने नहीं देखा?"

"तुम टेलीविजन देख रही थीं। इसलिये मैं होटल चला गया।"

"ऐं!"

"हाँ।"

"ऐसा तुमने क्यों किया?"

"मैं अपनी मर्जी का मालिक हूँ, मनोरमा! मैं तुम्हारे इशारों पर नहीं नाच सकता। कल से एक काम करना है।"

"क्या?"

"लन्च के लिये मैं टिफिन अपने साथ ले ही जाता हूँ, ब्रेक फास्ट का सवाल ही नहीं उठता। वह रोज सवेरे करता हूँ। डिनर की बात रह गई, उसके लिये तुम हैरान मत हो। कल से जब मैं दुकान बन्द करके चला करूँगा, तो खाना भी उधर से खाता आऊँगा।"

"तुम चाहते हो कि मैं तुम्हारी गुलामी चौबीस घण्टे करती रहूँ, तो

ऐसा कभी नहीं हो सकता। मैं भी इन्सान हूँ। मेरे भी सीने में दिल है। तुम्हारे लिये मैं मशीन नहीं वन सकती।"

"देखो, नाराज होने और विगड़ने की जरूरत नहीं है, मनोरमा! मैं इसे विलकुल पसन्द नहीं करता। अगर बुरा न मानो, तो तुमसे एक बात कहूँ?"

"हाँ, कहो?"

"तुम मुझे तलाक दे दो, मनोरमा! हम लोगों के विचार आपस में कभी नहीं मिल सकते। यह मैंने अच्छी तरह समझ लिया है।"

"तो तुम यहाँ तक सोच चुके हो, तभी तुम्हारे विचार वदले हुए हैं।"

"मैं यह सोचता हूँ, मनोरमा, कि तुम्हारी आजादी में तनिक भी फर्क नहीं पड़ना चाहिये। तुम अगर चाहो, तो मुझे तलाक देकर दिवाकर वावू के पास फिर जा सकती हो।"

"जिस रास्ते को मैं एक वार छोड़ देती हूँ, उस पर फिर दुवारा कभी नहीं चलती। तुम धमकी क्या देते हो! अगर ऐसी नौवत रही, तो एक दिन हम दोनों का तलाक जरूर हो जायेगा।"

"मनोरमा, मैं यही चाहता हूँ, तुम मुझ पर दया करो।"

मनोरमा क्रोध से काँपने लगी। उसके गुस्से का वार-पार न रहा। वह नागिन की तरह फुंकारती हुई वहाँ से चल दी। अनूप उसकी गति-विधि देखता रहा। उसे महान् आश्चर्य हो रहा था।

× × ×

दूसरे दिन मनोरमा ने अपने पिता वावू रामधन को पत्र लिखा कि वह अनूप के साथ सुखी नहीं है। यही कारण है कि वह उसे तलाक देने जा रही है। दोनों का निर्वाह किसी तरह भी नहीं हो सकता। वह पटना आना चाहती है। उसका देहली से जी ऊव गया है। वह उत्तर की प्रतीक्षा करेगी और जवाव आते ही पटना के लिये रवाना हो जायेगी।

पत्र लिखकर मनोरमा ने लेटर वॉक्स में छोड़ दिया। फिर उसने संतोप की साँसें ली और भविष्य के लिये सोचने लगी कि उसे क्या करना चाहिये।

मनोरमा ने अनूप को नहीं वतलाया कि उसने पटना पत्र लिखा है।

वह बाप की चिट्ठी की राह देखती रही। उसे उसी का इन्तजार था।

इधर मनोरमा की यह परिस्थिति थी और उधर बाबू रामधन को जब बेटी का पत्र मिला, तो वे उसे पढ़कर गुस्से से भर गये। पत्नी सीता से बोले—"तुम्हारी बेटी बहुत योग्य निकली। वह अनूप को भी तलाक देने जा रही है। यहाँ आना चाहती है। मुझे पत्र लिखा है। लेकिन मैं जवाब नहीं दूँगा। मेरे लिये मनोरमा मर गई।"

सीता ने पति की ऐसी बातें सुनी तो वह सन्नाटे में आ गई। उसने पति के हाथ से पत्र ले लिया और उसे जल्दी-जल्दी पढ़ने लगी।"

जब सीता चिट्ठी पढ़ चुकी, तो पति की ओर उन्मुख हो, धीरे-धीरे कहने लगी—"अब मनोरमा का कोई ठिकाना नहीं रहा, इसीलिये यहाँ आना चाहती है। उसके लिये हम लोगों की कितनी बदनामी हुई। ब.बू ईश्वरलाल से सम्बन्ध खराब हो गये,। उसे लिख दो कि उसे यहाँ आने को जरूरत नहीं है।"

"मैं कुछ भी नहीं लिखूंगा।"

"क्यों?"

"जवाब देने का मतलब यह होगा कि मनोरमा आ जायेगी। उसके आने से चारों ओर चख-चख होगी। लोग उँगली उठायेंगे और आवाजें कसेंगे।"

"मनोरमा को अपने किये की सजा मिल गई। उसने जैसा किया था, उसका नतीजा उसके सामने आ गया। मैं चाहती हूँ कि उसे और सजा मिले। तब कहीं जाकर उसकी आँखें खुलेंगी।"

न जाने कितनी देर तक दम्पति इसी विषय में बातें करते रहे। वे कुछ भी निश्चय नहीं कर पाये कि उन्हें क्या करना चाहिये।

× × ×

बाबू रामधन पुत्री से असन्तुष्ट थे। उन्होंने सोच लिया था कि अब जिन्दगी में वे लड़की से कोई मतलब नहीं रक्खेंगे।

जब मनोरमा ने दिवाकर को तलाक दे दिया, तभी रामधन ने यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि वे अपना कुछ भी मनोरमा को नहीं देंगे। उसके कारण उनकी इतनी बदनामी हुई कि वे सिर उठाकर राह में नहीं चलते।

लोगों के सामने उनकी गर्दन झुक जाती है और वे बोल नहीं पाते। उनका इरादा था कि वे अपनी चल और अचल सम्पत्ति किसी धार्मिक संस्था को दान कर देंगे। उनका मन हट गया था। वे मनोरमा की ओर से पूरी तरह से विरक्त हो गये थे।

लेकिन सीता माँ थी। उसके सीने में माँ का दिल था। औलाद लायक हो या नालायक, माँ उस पर जान देती है। यह परम्परा आदि से चली और अब तक चलती आ रही है। यही कारण था कि जब उसे बेटी की याद आ जाती, तो कलेजे में हूक उठती और वह भीतर-ही-भीतर तड़पकर रह जाती। जब से मनोरमा का पत्र आया था, उसे चैन नहीं पड़ता था।

सीता ने बाबू रामधनको समझाने की बहुत कोशिश की, लेकिन पत्थर नहीं पसीजा। वह पत्थर ही रहा। वह सोचती रही। उसके मन में एक ही बात आई। उसने मनोरमा को पत्र लिख दिया। उसमें बाबू रामधन की परिस्थिति स्पष्ट कर दी थी और उसमें यह लिखा था कि तुम परेशान हो, मनोरमा। घबराने और उलझने की जरूरत नहीं है, बेटी। धीरज से काम लो। तुम्हारे पिता भी परेशान हैं। तुम भी परेशानी से गुजर रही हो। पत्र पाते ही पटना चली आओ। यहाँ आने पर सब ठीक हो जायेगा।

इस तरह बेटी को चिट्ठी लिखकर सीता निश्चिंत हो गई थी। वह सिर उठा-उठाकर उसकी राह देखती। उसने सोच लिया था कि बेटी के लिए वह पूरी दुनिया के साथ संघर्ष करेगी। अगर मनोरमा अनूप को तलाक देना चाहती है, तो वह उसे मना नहीं करेगी। उसे वही करना है, जिसमें उसकी बेटी सुखी रहे और संतोष की साँस ले।

इधर सीता को बेटी की प्रतीक्षा थी और उधर जब मनोरमा को माँ का पत्र मिला, तो वह खुशी से फूली नहीं समाई।

अनूप को कुछ भी पता नहीं था कि उसके साथ क्या होने जा रहा है। वह प्रातः नौ बजे घर से निकल जाता और फिर रात को आठ बजे आता। इधर दम्पति में अनबन बुरी तरह चल रही थी। अनूप रात को डिनर नहीं लेता था। वह होटल से खाना खाकर आता। मनोरमा इससे बहुत नाराज थी। दोनों में झगड़ा खूब कसकर होता।

इतवार का दिन था। अनूप अपने कमरे में बैठा शेव बना रहा था।

मनोरमा उसके पास आई और कुछ रुष्ट होकर बोली—"नौ बज गये और अभी तक तुम्हारी दाढ़ी नहीं बनी है। कब नहाओगे ? कब नाश्ता लोगे ? मुझे उलझन-सी हो रही है। इसीलिए खाना बनाने में देर हो जाती है।"

अनूप को ताव आ गया। उसने रेजर मेज पर रख दिया और मनोरमा की ओर टेढ़ी आँखों से देखता हुआ तेज गले से बोला—"तुमसे कितनी बार कहा, मनोरमा कि तुम मेरे लिए परेशान मत हो। मैं डिनर बाहर लेता हूँ, अब नाश्ता भी बाहर ही कर लिया करूँगा।"

"जब सब काम तुम्हें घर से बाहर ही करने हैं, तो फिर शादी क्यों की थी ?"

"मैंने शादी नहीं की, मनोरमा। तुमने मेरे साथ जबरदस्ती की है। सच बात तो यह है कि तुमने मुझसे मेरी जिन्दगी की खुशी छीन ली।"

"अब मुझसे नफ़रत हो गई है, तभी ऐसी बातें कर रहे हो।"

"मैं तुमसे खुश कब था, मनोरमा ?"

"तो फिर व्याह कैसे कर लिया ?"

"व्याह तो मजबूरी में हुआ। क्योंकि तुमने ऐसा जाल बिछाया था, जिससे मैं सहज ही निकल नहीं सकता था।"

"तो सारी गलती मेरी है ?"

"इसमें दो राय नहीं, मनोरमा। तुम बिलकुल ठीक कह रही हो।"

"जब तुम्हारे विचार मेरे प्रति ऐसे थे, तो तुम्हें किसी भी सूरत में शादी नहीं करनी चाहिए थी।"

"शादी क्यों न करता ? वह तो मेरे लिए एक पाबन्दी हो गई थी। मैंने व्याह के एग्रीमेंट पर हस्ताक्षर किये थे। नशे की हालत में मेरा अपहरण किया गया। मुझे पटना से देहली ले आया गया। अब क्या जमाना आया है ! पहले लड़के लड़कियों का अपहरण करते थे। मगर आजकल लड़कियाँ लड़कों का अपहरण करने लगीं। तुम······।"

"अब मुँह बन्द कर लो, अनूप। मैं आगे एक शब्द भी सुनना नहीं चाहती।"

अनूप मुस्कराया। वह तनिक गम्भीर होकर कहने लगा—"जब तुम्हें

मेरी बातें अच्छी नहीं लगतीं और मुझे भी तुम्हारा व्यवहार पसन्द नहीं, तो फिर ऐसा होना चाहिए कि हम दोनों के रास्ते अलग-अलग हो जायें।"

'तो तुमने यहाँ तक सोच रक्खा है ?"

"मैंने सोचा नहीं, तुम्हारी बातों का जवाब दे रहा हूँ।"

"मैं कुछ भी सुनने के लिए तैयार नहीं हूँ।"

"आखिर चाहती क्या हो, मनोरमा, मुझे साफ-साफ बतला दो ?"

"मैं भी तुमसे खुश नहीं हूँ, अनूप, और अब यह गाड़ी ज्यादा दिन नहीं चल सकती।"

"तो क्या होना चाहिए ?"

"यह तुम सोच लो, मैं क्या बतलाऊँ ?"

"देखो, अगर तुम तलाक देना चाहती हो, तो मैं उसके लिए राजी हूँ। यह फ्लैट तुम्हारे पैसे से लिया गया। तुम्हारे ही धन से दुकान खुली। कार भी तुम्हारी ही दौलत से खरीदी गयी, मनोरमा। मैं सब छोड़ने के लिए तैयार हूँ। बस, तुम मुझे विदा दे दो।"

"अब मैं समझी कि तुम तलाक के लिए पहले से ही तैयार बैठे हो। तुम्हें पैसे की क्या कमी ! बाप फाइनेन्सर है। तभी मेरी दौलत का लालच नहीं है और उसे ठुकरा रहे हो।"

यह कहने के साथ मनोरमा रोने लगी। उसने आँचल में अपना मुँह छिपा लिया। फिर वह एक क्षण भी अनूप के पास नहीं रुकी। सीधी अपने कमरे में चली आई। किवाड़ों की कुण्डी अन्दर से बन्द कर ली। धम्म से बिस्तर पर गिरी। तकिये में उसने सिर छिपा लिया और सिसक-सिसक कर रोने लगी।

अनूप ने मनोरमा के आँसुओं की तनिक भी परवाह नहीं की। वह अडिग रहा। अपने स्थान से तिल-भर भी नहीं हिला। उसके अन्दर का मानव कह रहा था कि नारी को जब पुरुष से घृणा हो जाती है, तो पुरुष को चाहिए कि वह उसका साथ छोड़ दें। मनोरमा तुम्हारे लिए जहरीली नागिन है, अनूप। तुम इस नागिन के दाँत नहीं तोड़ सकते। तुम दूर हट जाओ। उसका रास्ता साफ कर दो।

उस दिन खाना नहीं बना। चाय की भी नौबत नहीं आई। जब तक

११

रामधन ने जब मनोरमा को देखा, तो वे आग बबूला हो गये। तत्क्षण ही उससे कहने लगे—"तुम यहाँ क्यों आई हो, मनोरमा ? तुम्हें किसने बुलाया है ?"

मनोरमा इसके लिए पहले से ही तैयार थी। न तो वह तनिक भी घबराई और न विचलित हुई। दृढ़ता के साथ बाप से कहने लगी—"यह मेरा घर है, पिताजी, और अपने घर में आने के लिए किसी से पूछना नहीं पड़ता। अगर मैं नहीं आऊँगी, तो फिर और कौन आयेगा ?"

पुत्री की बातें सुनकर रामधन का गुस्सा और भी तेज हो गया। वे क्रोध से काँपने लगे और आवेश के साथ उत्तेजित स्वर में बोले, "मनोरमा, अब यह घर तुम्हारा नहीं है। तुम जैसे आई हो, वैसे ही लौट जाओ। शादी के बाद लड़की के लिए बाप का घर पराया हो जाता है। मैं तुमसे खुश नहीं हूँ। मैं तुम्हें अपने घर में नहीं रखूंगा।"

"मैं जाने के लिए नहीं आई, पिताजी। मैं अनूप को तलाक देने जा रही हूँ।"

"यह भली औरतों का काम नहीं, जो रोज अपने मर्दों को तलाक दें। तुमने दिवाकर को तलाक दी, जिससे मेरी गर्दन समाज में झुक गई। अब तुम दूसरा नाटक खेल रही हो। क्या तुम्हें इसीलिए ऊँची शिक्षा दी थी ? क्या तुम पर पानी की तरह पैसा इसीलिए बहाया था ? क्या तुम्हें यही सिखलाया था कि तुम अपने पति को तलाक दे देना ?"

"पिताजी ! जब तक औलाद नासमझ रहती है, तब तक वह माँ-बाप का कहना मानती है। अब मैं बालिग हूँ। अपना भला-बुरा अच्छी तरह पहचानती हूँ, जब जीवन-साथी सही नहीं होगा, तो तलाक देनी ही पड़ेगी। अब युग बदल गया और आदमी को जमाने के साथ उसी रफ्तार से चलना होगा।"

सीता चुप खड़ी थी। बाबू रामधन की आँखों से खून बरस रहा था। वे गुस्से से काँप रहे थे। जब मनोरमा की बातें सहन नहीं हुई, तो उसके

गाल पर एक थप्पड़ दिया। फिर धक्का दे, धकेलते हुए बोले—"चल निकल यहाँ से। ब्याह के बाद अगर लड़की ससुराल की प्यारी होती है, तो उसे मायके में भी सम्मान मिलता है। तूने सबकी निगाहें झुका दीं। तेरी अर्थी ससुराल से निकलनी चाहिए थी। मगर तू मुझे वदनाम करने आई है।"

मनोरमा रोने लगी। वावू रामधन ने उसका हाथ पकड़ा। वे उसे घसीटते हुए चौखट की ओर ले चले। तव सीता पीछे दौड़ी। वह रो रही थी। उसने पति का हाथ पकड़ा और दुःखी होकर कहने लगी—"तुम्हारा दिमाग खराव हो गया है क्या? लड़की को घर से निकाल रहे हो। तुम वाप हो, तुम्हारा कलेजा पत्थर का है। मैं माँ हूँ, मेरे सामने मेरी वेटी की दुर्दशा नहीं हो सकती। मैं जान दे दूँगी।"

वावू रामधन वहुत ज्यादा गुस्से में थे। उन्होंने पत्नी को दूर धकेल दिया और क्रोध-भरे स्वर में बोले—"तुम भी चली जाओ इसके साथ, मुझे तुम्हारी भी जरूरत नहीं है। इस औलाद ने मेरा मुँह काला कर दिया। इस लड़की के कारण मुझे लोगों के सामने शर्मिन्दा होना पड़ता है। मुझे ज्यादा तंग करोगी, तो मैं इसकी हत्या कर दूँगा। मुझे फाँसी का डर नहीं।"

सीता आगे कुछ नहीं वोली। वह रोती रही। उसने पुत्री को खींचकर अपने वक्ष से लगा लिया।

वावू रामधन पागलों की तरह गुस्से में वक रहे थे—"मनोरमा, तुम्हें जाना पड़ेगा। मैं तुम्हें घर में नहीं रखूँगा। मेरी वेटी मर गई। मैंने वहुत वड़ी भूल की, जो तुझे इतनी आजादी दी। मैं नहीं जानता था कि तेरे दूध के दाँत जव जवानी के दौर से गुजरेंगे तो उनमें जहर भर जायेगा। तू नागिन वन जायेगी। तूने अपने वाप को ही डस लिया। तू पैदा होते ही मर जाती, तो वहुत अच्छा होता।"

यद्यपि मनोरमा को वाप की वातें सुन-सुनकर वहुत ज्यादा गुस्सा आ रहा था, मगर वह खामोश थी। सीता रो रही थी। वह भी पति की वातों का जवाव नहीं दे रही थी।

वावू रामधन देर तक वड़वड़ाते रहे। फिर वे अपने कमरे में चले

गये। जब वे दुकान पहुँचे, तो उनका मन वहाँ बिलकुल नहीं लगा। क्रोध अब भी उनमें समा नहीं रहा था। वे भीतर-ही-भीतर उबल रहे थे। उन्हें गुस्सा आ रहा था और अन्तःकरण कह रहा था कि मनोरमा यहाँ क्यों आई, उसे नहीं आना चाहिए था।

इधर दुकान पर बाबू रामधन आवेश से काँप रहे थे और उधर सीता ने मनोरमा को उठाया। वह उसे कमरे में लिवा लाई। उसका मुँह-हाथ धुलाया, उसके कपड़े बदलवाये। वह उसे समझाने लगी।

दोनों माँ-बेटी में न जाने कितनी देर तक बातें होती रहीं। मनोरमा को प्रसन्नता थी कि माँ उसके अनुकूल है। अब वह अपनी मनमानी कर सकेगी। उसने निश्चय कर लिया कि जब तक बाबू रामधन का गुस्सा बिलकुल ठण्डा नहीं हो जायेगा, तब तक वह उनसे बोलेगी नहीं। उनके सामने नहीं जायेगी। यही ठीक रहेगा, यही करना होगा। इसीमें भलाई है।

सीता हमेशा डरी-डरी रहती कि उसके घर में कहीं कोई अनहोनी घटना न घट जाये, जिसके लिए उसे जिन्दगी-भर पछताना पड़े। इसीलिए वह देवी-देवता मनाती और ईश्वर से विनय करती कि भगवान् उसकी बेटी का अनिष्ट न हो।

× × ×

बाबू रामधन और सीता दोनों को इस बात का पता नहीं चला कि मनोरमा ने अदालत में जाकर तलाक की अर्जी दे दी है। रामधन सोच रहे थे कि वे बाबू ईश्वरलाल के पास जायेंगे। उनसे क्षमा मागेंगे। समझा-बुझाकर मनोरमा को उसकी ससुराल भेज आयेंगे। अनूप अमीर बाप का बेटा है। दौलत उसके चरण चूमती है। मनोरमा रानी बनकर रहेगी। उसे कभी कोई अभाव नहीं रह सकता।

किन्तु मनोरमा यह सोचकर पटना आई थी कि उसके पास जो कुछ था, वह सब अनूप को दे दिया। अब खाली हाथ हो गई है। वह तलाक लेगी। उसके बाद दूसरा व्याह अपनी मर्जी से करेगी। उसका होने वाला पति उसकी इज्जत तभी करेगा, जब उसके पास रकम होगी।

यही कारण था कि मनोरमा बाप के घर आई थी। वह जानती थी

कि पहले वे लोग उस पर बहुत बिगड़ेंगे, लेकिन फिर कलेजे से लगा लेंगे आखिर मैं उनकी औलाद हूँ।

दिन पर दिन बीत रहे थे। समय का पहिया तेजी के साथ घूम रहा था। उस पहिये के साथ किसी का भाग्य बदल रहा था। मनोरमा ने जब एक हफ्ते तक अनूप की राह देख ली थी, तभी उसने तलाक का प्रार्थना-पत्र दिया था। उसने समझ लिया कि अनूप को उसकी परवाह नहीं है। वह निश्चिन्त थी और इस कोशिश में लगी थी कि इस बार किसी ऐसे युवक से व्याह करेगी, जो उसके इशारों पर नाचे और उसका मुँह-ही-मुँह देखे। इसके साथ-साथ उसने यह भी सोच रखा था कि कोई भी अमीरजादा उसके मन के मुताबिक नही चल सकता। इसीलिए वह गरीब का ही दामन पकड़ेगी और उसे अपना वनायेगी।

इधर मनोरमा अपनी पालिसी को कार्य-रूप में बदलने के लिए निरंतर प्रयत्नशील थी, उधर अनूप ने दुकान बंद कर दी, फ्लैट में भी ताला डाल दिया। कार गैरिज में थी। उसकी भी चावी उसने रख ली। फिर एक विश्वासपात्र आदमी को पटना भेजा। उससे कहा था कि दुकान, फ्लैट और गैरिज तीनों की चावियाँ जाकर मनोरमा को दे देना। यह काम गुप्त रूप से होना चाहिए, ताकि उसके माँ-वाप को पता न चल पाये।

अनूप ने चावियाँ भेज दीं। फिर वह निश्चिन्त हो गया। उसका मन पटना जाने के लिए नहीं हुआ। उसने देहली से सीधी मंसूरी की राह ली। और सोच लिया कि कुछ दिन वहीं रहेगा। वह स्थान बहुत रमणीक है। वहाँ मन नहीं भटकेगा। उसे दुनिया-भर की चिन्ताएँ नहीं सताएँगी।

अनूप को मंसूरी आए कई दिन हो चुके थे। वह होटल में नहीं ठहरा, उसने किराये पर एक कमरा ले लिया था।

जिस मकान में वह किरायेदार बनकर आया था, उसका मालिक एक पहाड़ी था। उसने उसे दूसरी मंजिल का एक कमरा दिया था। जिस पर खपरैल पड़ी थी। अचानक मौसम खराब हो गया। प[illegible] दि[illegible] लगातार वरसता ही रहा। खपरैल इस तरह टपकते [illegible] वह छलनी हो। कमरे में पानी भर जाता। पहाड़ी आ[illegible] उसके नीचे के हिस्से में सब पानी-ही-पानी था।

अनूप ने उस बूढ़े पहाड़ी से पूछा कि वह मकान की मरम्मत क्यों नहीं करवाता है। शायद यही कारण है, तभी उसके यहाँ किरायेदार कोई नहीं आता।

इस पर बूढ़ा पहाड़ी उदास हो गया और निराशा-भरे स्वर में धीरे-धीरे कहने लगा—"बाबू साहब! जब जमाना सस्ता था, तो थोड़ी आमदनी में गुजर हो जाती थी। बचत भी होती थी। आजकल महँगाई है। आजकल आदमी के पास पैसा है, लेकिन बरकत नहीं। मंसूरी की जवानी बाबू साहब अंग्रेजों के साथ ही चली गई। अब वह रौनक नहीं, जो पहले थी। मरम्मत कहाँ से करवाऊँ? कोई मुसाफिर ही नहीं आता।"

"तो तुम इस मकान को बेच क्यों नहीं डालते?"

"बाबू साहब! यह बुजुर्गों की निशानी है। पहले जो लोग पहाड़ पर आते थे, वे दिल खोलकर खर्च करते थे। हम लोगों को इतनी बख्शीश मिलती कि साल-भर खाते और बचा भी लेते थे। लेकिन आज का आदमी पैसा दाँत से पकड़ता है। उसकी जरूरतें खुद ही पूरी नहीं हो पातीं। आप कितने दिन तक ठहरोगे, बाबू? यहाँ तो कमरे पच्चीस रुपये रोज से लेकर पचास रुपये रोज तक पर उठते हैं। मैंने तो आपसे किराया दस ही रुपये रखा है। अगर आप एक महीने ठहर गए तो मेरा कुछ कर्ज उतर जाएगा। क्या बतलाऊँ, बाबू साहब, इधर बचत तो दूर रही, उल्टे कर्जा हो गया।"

अनूप हँस दिया। उसके मुँह से निकला, "तुम कहोगे, मैं तभी जाऊँगा। मुझे यहाँ अच्छा लग रहा है। जब मैं यहाँ आया, तो बहुत परेशान था।"

"बाबू साहब, आप खाना होटल में खाते हैं, अगर कहें तो मैं पका दिया करूँ। मैंने अंग्रेजों का खाना बनाया है। वे कभी मुर्गा, कभी बत्तख और कभी मछली खाते थे। बकरे का गोश्त तो रोज खाते थे। मैं सब बना लेता हूँ।"

"अच्छा, आज से खाना तुम बनाकर लाना। जो तुम लाओगे, मैं वही खा लूँगा।"

"नहीं, बाबू साहब! जो आप हुक्म देंगे, मैं वही बनाऊँगा।"

"लो, यह सौ रुपये का नोट रख लो। तुम जो मन से बनाकर लाओगे, मुझे उसी में स्वाद मिलेगा। मैं बताऊँगा कुछ भी नहीं।"

बूढ़े ने नोट ले लिया। खुशी के कारण वह उसके हाथ में काँपने लगा। उसकी वाँछें खिल रही थीं। वह बहुत मग्न था। वह तनिक और पास आ गया, फिर धीरे से बोला—"वाबू साहव, यहाँ अकेले ही आए हो। क्या अभी घर नहीं बसाया ?"

"हाँ, अभी शादी नहीं की।"

"मैं पहले से ही समझ रहा था। मगर कुछ कहा नहीं।"

"क्यों ?"

"यहाँ जो लोग अकेले आते हैं, वे सैलानी कहे जाते हैं। तुम तो जवान हो, वावू साहव। इस पहाड़ी इलाके में जो बूढ़े भी आते हैं, वे भी यहाँ आ कर जवान वन जाते हैं। आपको अगर कोई छोकरी चाहिए, तो वोल देना। मैं···।"

अभी बूढ़ा इतना ही कह पाया था कि अनूप बीच में वोल उठा—"नहीं वावा ! मुझे छोकरी नहीं चाहिए। मैं औरत को एक वला समझता हूँ और उससे दूर ही रहना चाहता हूँ।"

"तो फिर शादी कर डालो, वावू साहव। आप जवान हैं। आप उदास रहते हैं। शादी के वाद आपके चेहरे पर हँसीअपने-आप ही आने लगेगी।"

बूढ़े का नाम भोलानाथ था। वह बिलकुल अकेला था। उसने वतलाया था कि उसकी शादी हुई थी। उसके एक पुत्र भी था। पत्नी वीमार होकर मर गई। पुत्र भी चल बसा। उसने फिर व्याह नहीं किया। तव से लेकर अव तक अकेला ही है।

अनूप की श्रद्धा भोलानाथ के प्रति दिन-पर-दिन वढ़ती ही जा रही थी। उसे उससे हमदर्दी हो गई।

ऐसे ही भोलानाथ अनूप को वेटे की तरह चाहने लगा। यद्यपि उसमें स्वार्थ की भावना प्रवल थी। वह उसे स्नेह करता। उसकी सेवा करता। हाथ में पानी देता। रात को उसके पैर भी दवाता। पहाड़ी लोक-कथाएँ भी सुनाया करता।

भोलानाथ कभी शाकाहारी भोजन वनाता तो कभी मांसाहारी। वह जो भी खाद्य-पदार्थ अनूप के सामने ले जाकर रखता, अनूप उसे वड़े मन से खाता और खूब तारीफ करता।

इस तरह अनूप के दिन मंसूरी में हँसी-खुशी से गुजर रहे थे। उसका मन वहाँ लगने लगा। वह घूमने निकल जाता, देर में लौटता। जब आता, तो देखता कि भोलानाथ दरवाजे पर बैठा उसकी राह देख रहा है। इस बीच में भोलानाथ के घर कई मुसाफिर आए। किसी को कमरे पसन्द नहीं आए। कोई दो दिन रहकर चल दिया। किसी ने किराया ज्यादा बतलाया।

अनूप ने भली-भाँति समझ लिया कि भोलानाथ की आमदनी बहुत कम है। बड़ी मुश्किल से उसका खर्च चलता होगा।

अनूप का मन अभी पटना जाने के लिए नहीं था। वह जानता था कि कुछ दिन और हो जायें। मनोरमा पटना पहुँच ही चुकी। जहाँ तक मेरा खयाल है उसने तलाक की दरख्वास्त जरूर दे दी होगी। जब यह चर्चा फैलेगी और पिताजी को भी सारी असलियत मालूम हो जायेगी, मैं तभी पटना जाऊँगा, इससे पहले जाने की कोई जरूरत नहीं।

इसीलिए अनूप मन्सूरी में टिका था। नैनीताल उसे पसन्द नहीं आया। तभी वह वहाँ नहीं गया। एक दिन उसके मन में आया कि दिवाकर के घर जाये और देखे कि उसकी क्या परिस्थिति है। मन में विचार आते ही वह चल दिया और फिर उसके घर पर जाकर ही सांस ली।

दिवाकर ने जब अनूप को देखा, तो चौंक गया। उसने उसकी आवभगत की, आदरपूर्वक बैठाया। उसने पूछा और अनूप ने बतलाया कि वह देहली से मंसूरी आया है। देहली उसने छोड़ दी। साथ ही मनोरमा, दुकान और फ्लैट भी। मनोरमा उसे तलाक देने जा रही है। वह पटना पहुँच चुकी है। उसका मन अच्छा नहीं था। इसीलिए मन्सूरी चला आया।

दिवाकर ने वह सुना तो खूब जोर से हँसा। वह हँसते-हँसते बोला—"यह मैं पहले ही जानता था। अब मुझमें और तुममें कोई भी भेद नहीं रह गया, अनूप बाबू। मुझे तलाक मिल चुका और तुम्हें मिलने जा रहा है। मैंने सोच लिया है कि अब जिन्दगी में शादी नहीं करूँगा। और तुमने क्या सोचा है?"

"मैंने?"

"हाँ, तुमने।"

"मैंने कुछ नहीं सोचा है। मैं कुछ नहीं सोचूँगा। मैं भाग्य से डर

गया। तकदीर जो नाच नचायेगी, वह मुझे नाचना पड़ेगा। तुमने सुना होगा ? तुमने पढ़ा होगा ?"

"क्या ?"

"वही कि भाग्यम् फलति सर्वदा, नहि विद्या न वाहुवल। मुकद्दर के आगे इन्सान हारा है। जब किस्मत साथ नहीं देती, तो राह के फूल भी काँटे वन जाते हैं। मगर मैं तुम्हें सलाह दूंगा कि तुम अपनी शादी कर डालो, दिवाकर वावू।"

"मैं शादी नहीं करूँगा। मुझे इसका बड़ा कटु अनुभव हुआ है। मैं उसी के कड़ुवे घूंट पीऊँगा।"

दोनों ने न जाने कितनी देर तक वातें कीं। दिवाकर को इस वात की वहुत वड़ी शिकायत थी कि जब उसका घर मन्सूरी में मौजूद है, तो फिर अनूप किराये के कमरे में क्यों ठहरा। उसे उसके घर आ जाना चाहिए था।

लेकिन अनूप इसके लिए राजी नहीं था। उसका कहना था कि मुझे भोलानथ से हमदर्दी हो गई है। मैं जब तक मन्सूरी में रहूँगा, उसका घर नहीं छोड़ सकता। हाँ, मैं रोज आऊँगा। तुम्हें भी वुलाऊँगा। दोपहर का खाना तुम्हारे घर पर खाऊँगा। और रात को तुम्हें मेरे घर पर चलकर मेहमान वनना पड़ेगा।

वातचीत के सिलसिले में अनूप के मुँह से निकल गया—"हम दोनों वड़े अभागे है। तुम मनोरमा के पहले पति हो और मैं दूसरा। दोनों का नसीव इतना खराव था तभी उसने एक के वाद दूसरे को भी तलाक दे दिया।"

यह सुनते ही दिवाकर खूव जोर से हँसा। उसने अनूप के कन्धे पर हाथ पटक दिया और प्रसन्नता के अतीव आवेग से आलोड़ित होकर वोला—"मनोरमा अकेली रहेगी। चाहे देख लेना। हम एक से दो हो ही गये और अव हमें अपने तीसरे साथी का इन्तजार है। तलाक के वाद वह भी आकर हमारी मण्डली में मिल जायेगा।"

इस पर अनूप खूव हँसा। हँसते-हँसते उसके पेट में वल पड़ गये। उसने दिवाकर से पूछा—"वह तीसरा साथी कौन होगा ?"

"कोई होगा काठ का उल्लू। जैसे हम लोग हैं।"

"सच कहते हो, दिवाकर भाई। मैंने मनोरमा जैसी औरत दुनिया में दूसरी नहीं देखी।"

अब नियम बन गया था। दिवाकर साँझ होते ही अनूप के घर आ जाता। ऐसे ही सवेरे की चाय अनूप जाकर उसके घर पर पीता। दोनों की मित्रता दिन दूनी रात चौगुनी गहरी होती जा रही थी।

अनूप को ऐसा लगने लगा कि मन्सूरी उसका घर है। यहाँ उसके चित्त को शान्ति मिलती है। वह ऐसे स्थान को छोड़कर कहीं नहीं जायेगा।

कई बार दिवाकर ने कहा कि वह अनूप के पिता को पत्र लिख दे कि अनूप यहाँ है और उसके साथ रह रहा है। लेकिन अनूप ने इसके लिए मना कर दिया। उसने कहा—"अभी मैं कुछ नहीं कह सकता। आने वाला कल आकर मुझे जो दिखलायेगा, मैं उसी पर चलूँगा। मन दुखिया हो गया है। इच्छाएँ मर गईं। अरमानों का खून हो गया। बदनामी ने अपनी चादर ओढ़ा दी।"

दिवाकर ने जिद्द नहीं की। उसने पटना पत्र नहीं लिखा।

धीरे-धीरे एक महीने से ऊपर हो गया। किन्तु अनूप ने पटना जाने का नाम नहीं लिया। उसे मन्सूरी की रात बहुत अच्छी लगती। दिन पता ही नहीं चलता कि कब आकर चला जाता।

जब से अनूप आया था, दिवाकर को भी अच्छा लगने लगा। दोनों का प्रेम बाद में इतना घनिष्ठ हो गया था कि जिसका नाम नहीं। जब तक वे एक-दूसरे को देख नहीं लेते, उनके दिल को तसल्ली नहीं होती। एक से दूसरे को राहत मिलती। वहीं उनका सबसे बड़ा सन्तोष था।

१२

मनोरमा को जब गैरेज, फ्लैट और दुकान की चाबियाँ मिल गईं, तो वह मन-ही-मन खुशी से फूली नहीं समाई। उसके लिए तो यहाँ पर वही

वात चरितार्थ हुई कि रोगी जैसा माँगता था, वैद्य ने वैसा ही वतला दिया। वह चाहती थी कि देहली में जो कुछ है, वह सव उसे मिल जाये। वही हुआ। उसने यह भेद माँ-वाप को नहीं वतलाया।

तलाक का प्रार्थना-पत्र कचहरी में लगा था। उसकी सुनवाई हुई। अनूप को भी अदालत में हाजिर होना पड़ा था। वह दिवाकर के साथ पटना आया। दोनों का तलाक मन्जूर हो गया। उसके बाद दोनों दोस्त फिर मन्सूरी लौट गये। अनूप अपने घर नहीं गया। यद्यपि दिवाकर ने उसे वहुत समझाया था।

मनोरमा ने यह राज छिपाये ही रक्खा कि उसका तलाक हो चुका है। अनूप पटना आया था। वह फिर लौट गया है।

मनोरमा देख रही थी कि अव उसके वाप का गुस्सा ठण्डा हो गया है। इसीलिए वह रोज तीसरा पहर होते ही कार लेकर हवाखोरी के लिए निकल जाती। दूर-दूर तक की मन्जिल तय करती। माँ सीता ने घर की सारी चावियाँ उसके हवाले कर रखी थीं।

सिविल लाइन के एक शानदार होटल में मनोरमा हाल में वैठी कॉफी के घूंट सिप कर रही थी। उसकी दृष्टि सामने टिकी थी। एक गौर वर्ण का युवक वैठा, सिगरेट के कश ले रहा था। वह अकेला था। उसके सामने भी कॉफी का प्याला रखा था जिससे भाप उठ रही थी।

मनोरमा उस युवक की ओर देर तक देखती रही। एक वार जव उसकी दृष्टि जवान के चेहरे पर स्थापित होकर रह गई, तो उसने भी इधर देखा। दोनों की आँखें चार हो गईं।

दूसरे दिन जव मनोरमा होटल पहुँची, तो वह युवक पहले से ही वैठा था। उस दिन भी दोनों का नेत्र-मिलन हुआ। फिर तीसरे दिन मुस्कराये, एक मेज पर वैठकर दोनों ने जलपान साथ-साथ किया। जव वेटर विल लाया, तव होड़ लग गई। दोनों ही विल चुकाने की कोशिश कर रहे थे। वेटर यह देखकर मुस्कराया।

चौथे दिन मनोरमा ने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"शरद ?"

"ओह, वहुत प्यारा नाम है। सव ऋतुओं में शरद ऋतु वहुत अच्छी

कहीं जाती है। घर कहाँ है ?"

"मैं पटना अपने एक दोस्त के घर आया हूँ, यों रहने वाला आगरा का हूँ। आगरा फोर्ट स्टेशन के पास, जहाँ पर जामा मस्जिद है, वहीं मेरा घर है।"

"क्या करते हो ?"

"मैं सट्टा खेलता हूँ। मेरा पिता भी शुरू से यही करते चले आये हैं। सट्टा बाजार में जब घाटा होता है, तो कमर टूट जाती है। मगर जब मुनाफा होता है, तो घर भर जाता है। अकेला ही हूँ। मेरे कोई भाई और बहन नहीं। शादी भी अभी नहीं की। माँ-बाप बहुत जोर दे रहे हैं।"

"तुमसे मिलकर मुझे बहुत खुशी हुई, शरद बाबू।"

मनोरमा ने यह कहा। उसके बाद उसने अपना परिचय दिया। मगर शरद को यह नहीं बतलाया कि इससे पहले वह अपने दो पतियों को तलाक दे चुकी है। उसके शब्द ऐसे थे—"मैं शादी का प्रोग्राम न जाने कब से बना रही हूँ। मैं भी बाप की अकेली हूँ। मेरे भी घर में दौलत ही दौलत है। मैं किसी की गुलाम बनकर नहीं रहना चाहती। इसीलिए अब तक व्याह नहीं किया। शादी ऐसे आदमी से ही करूँगी, जो मुझे खुश रख सके, जो मुझे प्यार करे।"

शरद ने यह सुना तो वह मुस्करा दिया और धीरे से बोला—"जो मैं सोचा करता हूँ, वही तुम भी सोचती हो, मनोरमा। यहाँ पर आकर हम दोनों के विचारों का संगम हो जाता है। यही संयोग है और यही है होनहार। अगर तुम चाहो, तो मैं तुम्हारे साथ शादी करने के लिए तैयार हूँ।"

मनोरमा ने यह सुना, तो उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। वह शरद के साथ उसी विषय में बातें करती रही। दूसरे दिन जब ये लोग फिर मिले, तो मनोरमा ने कहा कि मेरे पिताजी अपनी मर्जी की शादी करना चाहते हैं। इसीलिये मेरा मन है कि हम दोनों का व्याह हो जाय और इस का किसी को भी पता न लगे।

शरद चौंका। उसकी समझ में मनोरमा की बातें बिलकुल नहीं आईं। वह भौंचक्का-सा हो, उसका मुँह देखने लगा। तभी मनोरमा ने फिर कहा—"देखो एक बात बतलाऊँ!"

"क्या ?"

"अगर तुम मुझसे प्यार करते हो और मुझे चाहते हो, तो कल ही कचहरी चलो। कोई भी इस वात को जान नहीं पायेगा। हम दोनों बालिग हैं। सिविल मैरिज हो जाने के बाद फिर हमारा कोई भी कुछ कर नहीं सकता। मेरे माँ-बाप भी मजबूर हो जायेंगे। मैं···।"

अभी मनोरमा इतना ही कह पाई थी कि शरद ने बाधा दी। वह बीच में अपनी बात कहने लगा—"लेकिन मैं अपने माता-पिता को कैसे समझाऊँगा ? उन्हें बहुत दुःख होगा कि मैंने तुम्हारे साथ सिविल मैरिज कर ली।"

"तुम अकेले लड़के हो। इसकी परवाह बिलकुल मत करो।"

"क्यों ?"

"वे बिगड़ेंगे, तुम पर नाराज होंगे; लेकिन तुमसे नाता कभी नहीं तोड़ सकते। कह देना, मुझे लड़की पसन्द आ गई और मैंने सिविल मैरिज कर ली।"

शरद असमंजस में पड़ गया। उसकी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। मनोरमा उसे अपनी बात समझाती रही। वह चित्र-लिखा-सा बैठा उसकी ओर एकटक देखता रहा।

इस तरह धीरे-धीरे एक सप्ताह बीत गया, लेकिन कुछ भी तय नहीं हो पाया कि क्या होना चाहिए। मनोरमा अपनी कोशिश में तनिक भी पीछे नहीं थी। शरद भी उस पर लट्टू हो रहा था। वह उस पर पूरी तरह आसक्त था। दोनों स्वाभाविक आकर्षण की डोर में न जाने कब से बँध चुके थे।

आखिर शरद मजबूर हो गया। उसने मनोरमा की बात मान ली। दोनों अदालत में पहुंचे। वहाँ शादी के लिये प्रार्थना-पत्र दिया गया। वह स्वीकार हो गया। दोनों की शादी हो गई।

दोनों छिप-छिपकर मिलते रहे। शरद को मनोरमा न कभी अपने घर लाई और न कभी इस बात का किसी से जिक्र ही किया कि उसने तीसरी शादी कर ली है।

जब शरद आगरा जाने लगा, तो उसने मनोरमा से कहा—"अच्छा,

अव तुम आगरा कव आओगी। "तुम आओगी या मैं तुम्हें लेने आऊँ? वोलो, इसके लिये क्या कहती हो?"

"न तुम लेने आना और न मैं आऊँगी। मैंने सोचा है कि···।"

"क्या सोचा है तुमने?"

"जव तुम चले जाओगे, तो मैं घर में सबको वतला दूँगी कि मैंने तुम्हारे साथ व्याह कर लिया है। ऐसी हालत में पिताजी मजवूर हो जायेंगे। वे तुम्हें वुलायेंगे। तव खुशी-खुशी आना और आकर मुझे ले जाना।"

"मैं भी अभी घर में न वतलाऊँगा?"

"हाँ।"

"लेकिन रिश्ते रोज आते हैं, मैं कव तक शादी के लिये इन्कार करता रहूँगा?"

"जव तक तुमसे वने, तव तक व्याह के लिये टालना, उसके वाद फिर देखना कि तुम्हारी जान नहीं वच रही है, तो हकीकत वयान कर देना।"

शरद कुछ भी जवाव नहीं दे पाया। देर तक सोचते रहने के वाद वह धीरे से वोला—"अच्छा, अगर मैं तुमको पत्र लिखना चाहूँ, तो किस पते पर लिखूंगा?"

"देखो, तुम हेड पोस्ट ऑफिस के पते पर पोस्टमास्टर के नाम पत्र लिखना। मैं रोज डाकखाने जाऊँगी और अपनी डाक ले लिया करूँगी। ऐसे ही मैं भी तुम्हें घर के पते पर चिट्ठी न लिखकर वड़े डाकखाने भेजूँगी। मेरा हर पत्र पोस्टमास्टर की मार्फत होगा। इस तरह हम लोगों का पत्र-व्यवहार चलता रहेगा और कोई भी इस राज को समझ नहीं पायेगा।"

शरद के चित्त को शान्ति नहीं मिली। उसे पूरी तरह संतोष नहीं हुआ; लेकिन फिर भी वह आगरे के लिये रवाना हो गया। वह रास्ते में सोच रहा था कि चोरी-चोरी शादी करके उसने अच्छा नहीं किया है। इसका नतीजा भी अच्छा नहीं होगा। माँ-वाप तो नाराज होंगे ही, इसके अलावा लोग उँगली उठायेंगे। कानाफूसी करेंगे। सव यही कहेंगे कि आखिर क्या कारण था जो मैंने सिविल मैरिज कर ली।

इस तरह सोचता और अपने किये पर पछताता हुआ शरद आगरा

पहुँचा। वहाँ जाकर भी उसके चित्त को शान्ति नहीं मिली।

शरद सोचता कि मनोरमा वाकई बहुत ज्यादा खूबसूरत है। उसका स्वभाव भी अच्छा है। वह हँसमुख है। लेकिन यह बात समझ में नहीं आती कि उसने सिविल मैरिज क्यों की और घर में किसी को बतलाया क्यों नहीं। इसके लिये वह कह रही थी कि उसके पिता उसका व्याह अपनी मर्जी से करेंगे। इसीलिये उसने शादी कर ली।

शरद ने मनोरमा को पत्र लिखा; उसका जवाब फौरन ही आ गया। इस प्रकार चिट्ठियों का सिलसिला चलने लगा। कभी-कभी दोनों की बातें टेलीफोन पर हो जातीं इसके लिये पहली पी.पी किया; लेकिन फिर दूसरा तरीका अपना लिया गया। रात को सन्नाटे में मनोरमा अपने घर से टेलीफोन मिलाती।

शरद भी घर से ही जवाब देता। दोनों की बातें रोज होतीं और कोई भी इस रहस्य को समझ नहीं पाता।

मनोरमा को आश्चर्य हो रहा था कि आखिर क्या कारण है, जो अनूप अब तक पटना नहीं आया। देहली में वह क्या कर रहा है। पटना क्यों नहीं आता, क्योंकि फ्लैट और दुकान की चाबियाँ मुझे भेज दी हैं।

उसकी हिम्मत नहीं पड़ती कि वह माँ या बाप से कहे कि मैंने सिविल मैरिज कर ली है।

दो महीने बीत गए। इतवार का दिन। बाबू रामधन सीता के साथ बैठे सवेरे की चाय पी रहे थे। मनोरमा भी बैठी थी। वह चाय पीकर जैसे ही खड़ी हुई, वैसे ही उसे चक्कर आ गया और वह भरभरा कर फर्श पर गिर पड़ी।

सीता घबरा गई। वह रोने और हाय-हाय करने लगी। बाबू रामधन ने फौरन ही डॉक्टर को टेलीफोन किया डॉक्टर ने आकर मनोरमा की परीक्षा की। उसने नब्ज देखी; फिर पेट टटोला। इसके बाद वह मुस्कराया और बाबू रामधन से कहने लगा—"आप नाना बनने जा रहे हैं। रामधन बाबू, मनोरमा गर्भवती है, इसीलिए इसे चक्कर आ गया।"

बाबू रामधन ने यह सुना तो वे चौंककर रह गये। कई क्षण तक वे स्तब्ध रहे। फिर जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में डॉक्टर से कहने लगे—

आप क्या कह रहे हैं, डॉक्टर साहव ?"

"मैं सच कह रहा हूँ। अगर आपको यकीन नहीं, तो किसी लेडी डॉक्टर को बुलवाकर दिखला लीजिये। यह तो खुशी की बात है, आप नाना बनेंगे, आपके घर में नाती आ रहा है।"

सीता मौन खड़ी थी। उसकी समझ में कुछ भी नहीं आया। वह न जाने क्या-क्या सोच रही थी।

डॉक्टर ने इन्जेक्शन लगाया। उसके लगते ही मनोरमा को होश आ गया। उसके वाद डॉक्टर चला गया। तव सीता ने उसे डॉक्टर वाली वात वतलाई। मनोरमा चौंकी, उसके चेहरे का रंग उड़ गया। ऐसे में ही उसने सुना, वावू रामधन उग्र होकर पूछ रहे थे—"क्यों, वेटी साहव! यह मैं क्या सुन रहा था? तुमने अनूप को छोड़ दिया। तुम्हें आये काफी दिन हो रहे हैं। तुम गर्भवती हो, डॉक्टर यही वतला गया है।"

मनोरमा ने एक क्षण में ही अपने को सँभाल लिया। वह उठकर वैठ गई और वाप से कहने लगी—"डॉक्टर ठीक कह गया है। लेकिन यह गर्भ अनूप का नहीं, शरद का है।"

"यह शरद कौन है?"

"शरद आगरे में रहता है। वह सटोरिया है। उसका वाप भी सट्टा खेलता है। सट्टा वाजार में दोनों वाप वेटे की वड़ी धाक है।"

सीता को ऐसा लग रहा था कि जमीन फट जायेगी और आसमान उस पर टूट पड़ेगा। उसका अन्तःकरण उसे खुद धिक्कारता कि उसने अच्छी वेटी को जन्म दिया है। मनोरमा जव तक जियेगी, तव तक माँ, वाप को वदनामी वरावर होती रहेगी।

वावू रामधन क्रोध से काँप रहे थे। वे ताव में भरकर वोले—"शरद से तुम्हारा क्या नाता? जव वह आगरे में रहता है, तो फिर यहाँ पटना कैसे आ गया?"

"शरद पटना अपने दोस्त के घर आया था। मैंने उससे सिविल मैरिज कर ली। मेरे पास शादी के कागजात हैं।"

"क्या कहा? तुमने सिविल मैरिज कर ली है?"

"हाँ।"

"घर में क्यों नहीं वतलाया ?"

"मैंने इसकी जरूरत नहीं समझी।"

"क्यों ?"

"अगर पहले वतला देती, तो आप लोग शादी करने नहीं देते, नाराज अलग होते।"

"शादी के वाद तो वतलाना चाहिये था।"

"शादी के वाद मैंने सोचा था कि जब तुम लोगों का मन अच्छा देखूंगी, तो वतला दूंगी। लेकिन वह मौका नहीं आ पाया। उसके पहले ही भेद खुल गया।"

"अव अनूप को क्या जवाव दोगी, मनोरमा ?"

"अनूप को तो मैंने तलाक दे दी।"

"ऐं !"

"हाँ, पिताजी। अव अनूप से मेरा कोई नाता नहीं।"

"तुम कैसी लड़की हो ? पहले तुमने दिवाकर को तलाक दी, जबकि उस वेचारे का कोई कुसूर नहीं था। अव अनूप को भी तलाक दे दी। आखिर वावू ईश्वरलाल क्या कहेंगे !"

"मुझे किसी के कहने और पूछने की परवाह नहीं है। मेरी जो समझ में आया, वह किया और अव मैं वच्ची नहीं हूँ।"

वावू रामधन को मनोरमा की वातें वरदाश्त नहीं हुई। वे गुस्से से पागल हो रहे थे। उन्होंने खींचकर एक थप्पड़ मनोरमा के गाल पर दिया और फिर आग ववूला होकर वोले—"शरद को आज ही मेरे सामने चिट्ठी लिखो। उसे यहाँ वुलाओ। मैं उससे पूछूंगा। उससे वात करूँगा। जव तक वह मेरे सामने इस वात को मंजूर नहीं कर लेगा कि तुम्हारे साथ उसकी शादी उसकी राजी से हुई है, तव तक मुझे चैन नहीं मिल सकती।"

मनोरमा डरी नहीं। उसने दृढ़ता के साथ जवाव दिया। वोली—"पहले आप टेलीफोन पर वात कर लीजिए। उसके वाद वह पटना आ जाएगा। मैंने कोई गलत कदम नहीं उठाया। कानूनी ढंग से व्याह किया।

वावू रामधन मजवूर हो गए रात को मनोरमा ने आगरे के लिए टेलीफोन मिलाया। शरद से उनकी वातें हुई। सारी

नीलिमा, या हाल बतलाकर दवा ले आऊँ ?"

"कैसी बातें करते हो, भइया ? दवा लाने से काम नहीं चलेगा। पहले डॉक्टर को लाओ।"

"तुम समझती नहीं हो, नीलिमा।"

"क्या समझूं, भइया ?"

"डॉक्टर कम-से-कम पन्द्रह रुपया फीस लेगा। दस रुपये कार के हो गये। इंजेक्शन लगायेगा। दवा देगा। इस तरह चालीस रुपये से कम नहीं खर्च होगा। जैसी आमदनी हो, वैसा ही खर्च करना चाहिए।"

"तुम्हारी बात मैं मानती हूँ! लेकिन······।"

"लेकिन क्या ?"

"लेकिन तुम कमाते किसके लिये हो ? माँ जाकर फिर तुम्हें नहीं मिलेगी। उसके लिए तुम्हें घर फूंक तमाशा देखना पड़ेगा।"

मालती दोनों की बातें सुन रही थी। वह नीलिमा को समझाने लगी। उसने धीरे से कहा—मेरे लिए इतना परेशान क्यों हो रही है पगली ? मैं ठीक हो जाऊँगी। तुलसी के दल की चाय बनाकर मुझे दे दे। बुखार उतर जाएगा। वसन्त ठीक कहता है। डॉक्टर बहुत पैसे ले जाएगा।"

"माँ, मुझे तुम्हारी बातें बिलकुल अच्छी नहीं लगतीं। डॉक्टर आएगा। जरूर आएगा। आखिर वह मेरे गहने किस दिन काम आयेंगे ? मैं जेवर बेचूंगी और तुम्हारा इलाज करूँगी।"

यद्यपि मालती में इतनी शक्ति नहीं थी कि वह उठकर बैठती, लेकिन फिर भी वह हिम्मत करके उठी। उसने नीलिमा को वक्ष से लगा लिया और उसकी बलाएं लेने लगी।

ऐसे में ही वसन्त कमरे से बाहर निकल गया। थोड़ी देर बाद जब वह आया, तो उसके साथ डॉक्टर था।

जब डाक्टर मालती को देखकर चला गया, तो वसन्त पर्चा लेकर क्लीनिक में दवा लेने गया। वह टैक्सी पर था। रास्ता जाम था। ट्रैफिक देर से रुका था। वह गोल मार्केट से गुजर रहा था। उसने अनूप की दुकान देखी। जिसमें बाहर से ताला बन्द था। वह उतरा। उसने बगल के एक दुकानदार से पूछा कि वह दुकान अभी खुली क्यों नहीं।

इस पर दुकानदार ने जवाब दिया, "अब यह दुकान कभी नहीं खुलेगी। इसका मालिक चला गया। पता नहीं, वह कहाँ गया और कब आयेगा। एक मुद्दत हो गई। तब से बन्द ही पड़ी है।"

वसन्त ने यह सुना, तो वह सन्नाटे में आ गया। उसने घर आकर नीलिमा को बतलाया कि अनूप कहीं चला गया है, दुकान बन्द ही पड़ी है।

नीलिमा ने सुना तो उसकी चिन्ता बढ़ी और वह सोचने लगी कि आखिर अनूप कहाँ चला गया। कहीं ऐसा तो नहीं कि बाबू ईश्वरलाल देहली आये हों। उनका अकेला लड़का है। वे पुत्र को मनाकर ले गये हों। इसी तरह न जाने कितनी बातें नीलिमा के मन में आती रहीं, जाती रहीं। वह सोच-सोचकर हैरान हो रही थी।

दो दिन में मालती का बुखार ठीक हो गया, लेकिन दवा अभी चल रही थी। वसन्त को जब से यह मालूम हुआ कि अनूप की दुकान बन्द पड़ी है, तब से वह सोच रहा था कि उसके फ्लैट पर जायेगा। वहाँ जाकर यह पता लगाना है कि अनूप देहली में है या नहीं।

वसन्त जब अनूप के फ्लैट पर पहुँचा, तो यहाँ यह पता लगा कि अनूप बाबू की पत्नी मनोरमा बहुत पहले ही अपने पीहर पटना चली गई थी। उसके कुछ दिन बाद अनूप बाबू भी चले गये। उनके लिए मालूम नहीं कि वे कहाँ गये। जहाँ तक खयाल है, वे पटना गये होंगे। क्योंकि उनका भी घर पटना में ही है।

वसन्त ने यह सुना तो फौरन ही घर आया। उसने नीलिमा को बतलाया कि न तो यहाँ पर मनोरमा है और न अनूप ही। मनोरमा पटना गई है। और अनूप के लिए कुछ मालूम नहीं।

नीलिमा की समझ में नहीं आ रहा था कि जब बाबू रामधन मनोरमा से बुरी तरह नाराज हैं, तो फिर वह पटना कैसे पहुँच गई। रामधन का कहना था कि वे मनोरमा को अब अपने घर में पैर नहीं रखने देंगे।

नीलिमा की समझ में यह भी नहीं आ रहा था कि मनोरमा ससुराल गई होगी। वहाँ के लिए भी वह अच्छी तरह जानती थी कि बाबू ई[illegible] बहुत सख्त हैं। वे मनोरमा ही क्या, अनूप को भी घर में नहीं घु[illegible] इस तरह मनोरमा के ससुराल जाने का तो सवाल ही नहीं उठता।

नीलिमा को अनूप की याद जब आ जाती, तो वह दुःख से भर जाती और सोचने लगती कि आदमी जो सोचता है वह कभी नहीं होता। मैंने कैसे-कैसे सपने देखे थे! वे सब धूल में मिल गये। जहाँ वसन्त आने वाला था, वहाँ पतझड़ ने पैर जमा दिये।

नीलिमा जब अधिक विचलित हो जाती, तो ऊब-उबकर लम्बी साँसें लेती। उसके सामने उसका उद्देश्य आ जाता और वह मन-ही-मन कायल हो जाती। उसके सामने तो केवलमात्र एक ध्येय यही था कि अनूप की याद में जिन्दगी गुजार दे। उसने उसे भगवान् माना था। वह मन-ही-मन उसकी पूजा करती।

मालती को नीलिमा की चिन्ता थी। वह उसके दुःख से दुःखी रहती। वसन्त से कहा भी करती कि नीलिमा की उम्र अभी कुछ भी नहीं है। अगर उसने शादी न की, तो फिर इतनी लम्बी जिन्दगी कैसे पार करेगी।

दोनों माँ-बेटा जब पास-पास बैठते, तो उनमें आपस में यही बातें होतीं। मालती कहती कि यह हमारा फर्ज है। मैं नीलिमा की धर्म-माँ हूँ और तुम उसके धर्म-भाई। हमें उसका व्याह हर हालत में करना है, उस का जीवन सुखी बनाना है।

वसन्त ने माँ को सब बतलाया था कि अनूप की दुकान बन्द चल रही है। मनोरमा और वह दोनों यहाँ नहीं हैं। मनोरमा पटना गई है और अनूप के लिए कुछ भी ठीक मालूम नहीं कि वह कहाँ है।

मालती ने यह सुना, तो उसने बेटे को सलाह दी कि वह दो दिन के लिए पटना चला जाये। वहाँ जाने पर यह मालूम हो जायेगा कि अनूप अपने घर पहुँचा या नहीं। मनोरमा ससुराल में है या मैके में।

वसन्त सहमत हो गया। उसने पटना जाने की योजना बना ली। दोनों माँ-बेटा जानते थे कि नीलिमा यह प्रस्ताव कभी स्वीकार नहीं करेगी। इसीलिए उसे यह बतलाया नहीं गया कि वसन्त पटना जायेगा।

जब वसन्त पटना के लिए चला, तो मालती ने नीलिमा को बतलाया कि वसन्त चण्डीगढ़ जा रहा है। वहाँ उसके एक दोस्त टैक्सी ड्राइवर की तबीयत बहुत ज्यादा खराब है। दो-तीन दिन में लौट आयेगा। उसका जाना बहुत जरूरी है।

नीलिमा वास्तविकता को नहीं समझी। उसने खुशी-खुशी वसन्त को विदा किया। उसे मन-ही-मन वसन्त पर गर्व हो रहा था कि वह उसका कितना खयाल रखता है। सगी वहन से ज्यादा मानता है। उसके कोई भाई नहीं था। भगवान् ने उसे भाई दे दिया। वसन्त के घर में शान्ति है। सन्तोष का अटल साम्राज्य है। कोई झगड़ा और कोई झंझट नहीं। वह उसी के स्नेह की छाया में रहकर अपनी जिन्दगी के दिन व्यतीत कर देगी।

× × ×

आज भोलानाथ ने वटेर का गोश्त वनाया। उसने मोटी-मोटी रोटियाँ सेंकी थीं। दिवाकर को खाने में स्वाद आया। वह उसकी तारीफ करने लगा। तभी अनूप वीच में वोल उठा, "भोलानाथ की तारीफ ज्यादा करोगे, दिवाकर, तो फिर इतना वढ़िया खाना नहीं मिलेगा। जानते हो, कल के लिए क्या प्रोग्राम है?"

"क्या?"

"भोलानाथ का कहना है कि कल वह मुर्ग-मुसल्लम वनायेंगे। वहुत अच्छा वना लेते हैं।"

यह सुनते ही दिवाकर जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ा और हँसते-हँसते वोला, "तो वहुत अच्छा। मैं पूरे दिन उपवास करूँगा। खाना रात को ही खाऊँगा।"

भोलानाथ दोनों मित्रों की वातें सुन रहा था। उसे भी हँसी आ गई। वह दोनों के पास आकर खड़ा हो गया। दोनों की पीठ पर हाथ रक्खे और गद्गद् कण्ठ से कहने लगा, "मैं यही चाहता हूँ, वावू साहव, कि आप लोगों को खाना अच्छा लगे। वस मेरी मेहनत सफल हो जायेगी।"

दोनों दोस्त सुनते रहे। भोलानाथ कहता रहा, "मुझे तव खुशी होती है, जव मुसाफिर को तसल्ली हो जाती है। तुम्हारे वहाने मैं भी खा लेता हूँ। वैसे यहाँ सूखी रोटी भी नसीव नहीं होती। वड़ी मुश्किल से खर्च चलता है। गर्मी के चार महीनों में जो कुछ कमा लेता हूँ, वावू साहव, वही आठ महीने वैठकर खाना पड़ता है। वरसात और जाड़े के मौसम में कोई भी मुसाफिर नहीं आता।"

अनूप की हमदर्दी तो भोलानाथ के साथ थी ही, अव दिवाकर भी उससे सहानुभूति करने लगा। नतीजा यह हुआ कि भोलानाथ की आमदनी वढ़ गई। उसे जेव-खर्च के लिए पैसे मिलने लगे। कभी दिवाकर पाँच रुपये का नोट देता तो, यह कहता कि भोलानाथ दादा इसमें अपनी वीड़ी-माचिस और पीने वाली तम्वाकू ले आना। ऐसे ही कभी अनूप दस रुपये का नोट पकड़ाता और वह कहता कि तुम्हारी टोपी फट गई है, भोलानाथ दादा, नया टोप वनवा लो।

अगर दिवाकर भोलानाथ को कपड़े वनवाता, तो अनूप उसे जूते पहनाता। इस तरह भोलानाथ को लग रहा था कि ईश्वर उसपर मेहरवान है। तभी उसने अनूप को भेज दिया और दिवाकर भी उसके साथ यहाँ आने लगे। ईश्वर करे यह दोनों दोस्त यहाँ से कभी न जायें।

भोलानाथ की यह परिस्थिति थी और दिवाकर अनूप को नित्य विवश करता कि वह अपने घर पटना जाए। उसका मन्सूरी में रहना उचित नहीं। माँ-वाप की अकेली सन्तान है। वे लोग परेशान हो रहे होंगे।

लेकिन अनूप पर दोस्त की वातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह सुनी-अनसुनी कर जाता और पटना जाने का नाम नहीं लेता।

कभी-कभी दिवाकर के मन में आता कि वह अनूप को न वतलाये और वावू ईश्वरलाल को सूचना दे दे कि अनूप कहाँ है।

मगर दिवाकर ऐसा सोचकर ही रह जाता; वह आगे कदम नहीं वढ़ाता।

एक दिन साहस करके दिवाकर ने वावू ईश्वरलाल को पत्र लिखा। उसमें यह स्पष्ट कर दिया था कि अनूप यहाँ है। वे आकर उसे ले जा सकते हैं। उसने अपने घर का पता भी लिख दिया था। साथ ही यह भी उल्लेख किया था कि मनोरमा ने अनूप को तलाक दे दी है। आजकल वह अपने वाप के घर पटना में ही रह रही है। आगे लिखा था कि अनूप की मनः स्थिति अच्छी नहीं थी। इसीलिए वह देहली से मन्सूरी चला आया था। आजकल उसका चित्त शान्त है। वह मेरे सम्पर्क में रहता है। मैंने वहुत कहा मगर वह पटना आने के लिए राजी ही नहीं होता। आप आइये

और आकर उसे ले जाइये।

वावू ईश्वरलाल को जव दिवाकर का पत्र मिला, तो वे मनोरमा को बुरा-भला कहने लगे। लीला को अपने साथ लिया और वावू रामधन के घर पहुँच गये। वहाँ मालूम हुआ कि मनोरमा ने तीसरी शादी कर ली है और अव उसके पति का नाम शरद है। वह इस समय आगरे में है। वहीं उसकी ससुराल है।

ईश्वरलाल ने यह सुना, तो वे प्रचण्ड हो गये। वावू रामधन को धिक्कारते हुये वोले, "शरम नहीं आती तुम्हें, रामधन! अगर मनोरमा मेरी वेटी होती, तो मैं अपने हाथों उसका गला घोंट देता। तुम्हारी वेटी ने मेरे लड़के को तलाक दिया। तुमने जल्दी से उसका चोरी-चोरी व्याह कर दिया। क्या तुम्हारी यही शराफत है?"

वावू रामधन झगड़ा वढ़ाना नहीं चाहते थे। इसलिए खामोश रहे। लीला ने भी सीता को खूव फटकारा। सीता भी पति की तरह मौन रही। दम्पति देर तक वड़वड़ाते रहे। वे लड़ने और झगड़ा करने के उद्देश्य से आये थे। लेकिन अव रामधन और सीता ने कुछ भी जवाव नहीं दिया, तो अपना-सा मुँह लेकर चले गये। वे वुरी तरह खिसिया गये थे। जव आये, तो उनकी सूरत रोनी-सी हो रही थी।

ईश्वरलाल और लीला के जाने के वाद सीता ने कहा, "मेरे तो मन में आया कि लीला को ऐसा जवाव दूं कि जो उसे छठी का दूध याद आ जावे, लेकिन फिर यह सोचकर चुप ही रही कि जिस राह चलना नहीं है, उसको नापने से क्या फायदा। मेरी वेटी ने अनूप को तलाक दे दिया। अव अनूप मेरा कोई नहीं है।

"विलकुल ठीक कहती हो, मनोरमा की माँ! मैं भी यही सोचता रहा। अव मैं क्यों डरूँ वावू ईश्वरलाल से? अव वे मेरे समधी नहीं। मैं चाहता, तो उन्हें ऐसा फटकारता कि वे जवाव नहीं दे पाते। मुँह की खा जाते।"

दम्पति वहुत खुश थे कि वावू ईश्वरलाल के साथ उन लोगों ने झगड़ा नहीं किया। वे शर्मिन्दा होकर चले गये। उनकी एक भी चली नहीं।

१४

बाबू ईश्वरलाल लीला को लेकर मंसूरी आए। वे दिवाकर के घर पहुँचे। दिवाकर ने उन्हें अनूप के घर में खड़ा कर दिया।

अनूप ने जब माँ-बाप को देखा, तो वह सन्नाटे में आ गया। उसे समझते देर नहीं लगी कि यह काम दिवाकर का है। उसी ने पिताजी को सूचना दी होगी।

लीला गुमसुम खड़ी थी। जब उससे चुप नहीं रहा गया, तो उसने आगे बढ़, पुत्र को वक्ष से लगा लिया और आँसू बहाती हुई गीले स्वर में कहने लगी—"देख, तो क्या सूरत हो गई है तेरी। दुबला इतना ज्यादा हो गया है कि जिसका नाम नहीं। अरे पागल! जब मनोरमा ने तुझे तलाक दे दी, तो तू यहाँ क्यों बैठा है?"

अनूप ने माँ को कुछ भी जवाब नहीं दिया। उसके आँसू आ गए। वह रोने लगा।

तब लीला ने पुत्र के आँसू अपने आँचल से पोंछे। उसने उसका मुँह चूमा और बलाएँ लेने लगी। बाबू ईश्वरलाल खामोश थे। वे एकटक पुत्र की ओर देख रहे थे।

पहले उन्होंने अपने पर संयम रखा, तनिक भी मन को विचलित नहीं होने दिया; लेकिन मोह ने अपना जादू डाला और वे अधीर हो गए। वे पत्नी तथा पुत्र के पास आ गए। बेटे को छाती से लगा लिया, उसके सिर पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरने लगे। उनके मुँह से निकला—"घर चलो, अनूप, अगर तुम मनोरमा के चक्कर में न पड़े होते, तो तुम्हारी यह हालत कभी नहीं होती। मैं सोचता हूँ कि शायद अब तुम्हारी आँखें खुल गई होंगी। ठोकर खाने के बाद ही इन्सान को परिस्थिति का बोध होता है।"

अनूप निरुत्तर था। वह चुपचाप बाप की बातें सुन रहा था। ईश्वरलाल आगे फिर कहने लगे—"तू मर्द है, शर्म क्यों करता है? एक मनोरमा चली गई, दूसरी आ जायेगी। तू घर चल। मैं तुझे लेने आया हूँ, जो कुछ हुआ, उसे भूल जाओ। आदमी को अनुभव आखिरी दम तक होता रहता

है।"

लीला और ईश्वरलाल दोनों अपनी-अपनी कह रहे थे। दिवाकर मौन था। वह दम्पति की बातें सुन रहा था। जब उसने देखा कि अनूप शुरू से आखिर तक मौन ही है, तो उसे बीच में बोलना पड़ा। अनूप का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर, वह धीरे-धीरे सहज स्वर में कहने लगा—"अनूप, तुम्हारे पिताजी ठीक कह रहे हैं। तुम्हें इनके साथ चला जाना चाहिए। तुम घर में अकेले हो। तुम्हारे बगैर घर का काम रुकता है। नादानी का नाटक बहुत दिन खेल चुके। अब आँखें खोलो और अपने घर जाओ।"

लेकिन अनूप का होंठ पर से होंठ नहीं उठा। वह ज्यों-का-त्यों खामोश रहा।

तब दिवाकर ने फिर कहा—"तुम चले जाओ, मेरी भी कोशिश यही होगी कि मैं अपना तबादला वहाँ करवा लूँ। चिंता मत करो, दोस्त! मैं जल्दी ही तुम्हारे पास आ रहा हूँ। हम दोनों साथ-साथ रहेंगे। नलिनी को भूल जाओ, उसके लिए सोचो भी मत। उसने तुम्हें धोखा दिया। तुम्हारे साथ विश्वासघात किया। वह किसी की भी नहीं हो सकती। उसके विचार अच्छे नहीं हैं।"

अनूप की जबान फिर भी नहीं खुली। उसने दृष्टि झुका रखी थी और नीचे देख रहा था। तब दिवाकर पास आया, उसने उसकी ठुड्डी उठाई और आँखों में झाँकता हुआ अपनत्वपूर्ण स्वर में बोला—"तुम्हें मेरी कसम है अनूप, जाने से इंकार मत करना। यहाँ रहने से कोई फायदा नहीं, बेकार खर्च होता है। अपने घर जाओ, अपना काम देखो।"

भोलानाथ की समझ में भी सारी परिस्थिति आ गई। उसने भी अनूप को समझाया और जोर देकर कहा—"आपको अपने घर जाना चाहिए, बाबू साहब। आपको इस बूढ़े भोलानाथ की सौगन्ध! आप न जाएँ। अगर आपने इन्कार किया, तो मुझे बहुत दुख होगा।"

अनूप मजबूर हो गया। उसने जाने की योजना बना ली। जब अनूप विदा हुआ। तो भोलानाथ उसे स्टेशन तक छोड़ने आया। अनूप ने उसकी जेब में सौ-सौ के पाँच नोट डाल दिए।

दिवाकर के आँसू आ गए। उसने रोकर अनूप को विदा किया। चलते-चलते उसने कहा—"मेरी राह देखना, अनूप, मैं जरूर आऊँगा और जल्दी ही। तबादले की कोशिश करूँगा और उसमें देर लगी, तो छुट्टी ले लूँगा। मगर आऊँगा अवश्य ही, इसमें संदेह नहीं।"

ट्रेन छूट गई। अनूप का रूमाल हिल रहा था। दिवाकर हाथ हिलाकर उसे विदा दे रहा था। भोलानाथ रो रहा था। उसका अन्तःकरण कह रहा था कि ऐसा मुसाफिर अब भविष्य में उसके घर कभी नहीं आएगा।

× × ×

अनूप के चले जाने के बाद दिवाकर को ऐसा लगने लगा कि वह बिलकुल अकेला रह गया है। न तो उसका मन दफ्तर में लगता और न बाहर जंगल में ही। घर काटने दौड़ता। रात को नींद नहीं आती। जब खाने बैठता, तो अनूप की याद आ जाती, इसीलिये कभी-कभी वह भोलानाथ के घर चला जाता। दोनों में बातें होतीं, उनका मन बहल जाता।

दिवाकर ने अपना तबादला करवाने के लिए अपना प्रार्थना-पत्र लगा रखा था। उसकी कोशिश यही थी कि उसे पटना भेज दिया जाए। इसके लिए उसने अपने प्रयत्न में कुछ भी उठा नहीं रखा।

दिवाकर ने नियम बना रखा था कि वह अनूप को एक पत्र रोज लिखता। वहाँ से चिट्ठी नित्य आती। इस तरह दोनों मित्रों का मिलन पत्रों द्वारा रोज होता।

इधर दिवाकर अकेलापन महसूस कर रहा था। और उधर अनूप जब घर आया, तो सभी जगह यह चर्चा फैल गई कि बाबू रामधन की बेटी मनोरमा ने अपने दूसरे पति अनूप को भी तलाक दे दी। उसने तीसरी शादी कर ली और आजकल वह आगरे में है।

इससे बाबू रामधन की खूब बदनामी हुई। लोग उन पर उँगलियाँ उठाते, उन्हें देखकर कानाफूसी करते, पीठ पीछे सभी लोग धिक्कारते कि ऐसी औलाद से तो बिना औलाद का आदमी अच्छा है।

मनोरमा किस जमाने की लड़की है! उसे तनिक भी लिहाज और संकोच नहीं लगा। उसने तीसरी शादी कर ली। शायद अपने तीसरे पति को यह नहीं बतलाया होगा कि इससे पहले वह दो तलाक दे चुकी है।

कुछ लोग यहाँ तक कहते कि मनोरमा की हिम्मत बढ़ गई है, वह तीसरी तलाक़ भी देगी और चौथा व्याह करेगी।

रामधन और सीता के कानों में जब ऐसी बातें पड़तीं, तो दम्पति काठ हो जाते, उनके पास कोई जवाब नहीं रहता।

बाबू ईश्वरलाल इस प्रयत्न में थे कि जैसे ही कोई रिश्ता आए, तो वे अनूप का व्याह कर डालें। उन्हें दुःख था। उनकी सहानुभूति कर्नल बंसीलाल के साथ पूरी-पूरी थी। वे जानते थे कि नीलिमा का कुछ भी पता नहीं चला, न जाने वह कहाँ गई। उसने शादी करने से इन्कार कर दिया था। उसका कहना था कि उसने अनूप को पति के रूप में देखा है, यही कारण है कि अब दूसरा व्याह नहीं करेगी।

लीला की पूरी-पूरी हमदर्दी नीलिमा के साथ थी। उसने पति को राय दी और कहा—"मेरा मन यह है कि नया रिश्ता करने से पहले एक बार नीलिमा का पता जरूर लगा लेना चाहिए। सच तो यह है कि अनूप की शादी उसी से होनी चाहिए। यह हक उसी का है।"

"नीलिमा को कहाँ खोजा जाए, अनूप की माँ? सारी कोशिशें हो चुकीं, मगर कोई कामयाबी नहीं मिली।"

"इसके लिए मैंने एक उपाय सोचा है।"

"क्या?"

"देखो, अखबारों में इश्तहार दे दो। उसमें नीलिमा का फोटो भी छपेगा। नीचे यह लिखा जायेगा, कि तुम जहाँ कहीं भी हो, नीलिमा, विज्ञापन पढ़ते ही फौरन चली आओ। तुम्हें सुनकर खुशी होगी कि मनोरमा ने अनूप को भी तलाक दे दी है। अनूप आजकल पटना में अपने घर पर है, उसका व्याह तुम्हारे ही साथ होगा। यह उसका संकल्प है।"

"तुम ठीक कहती हो, अनूप की माँ। यह बात मेरी भी समझ में आ गई। पता विज्ञापन में कर्नल बंसीलाल का दे दिया जाएगा।"

"नहीं।"

"तो फ़िर?"

"पता अपना दो। जो इश्तहार छपेगा, उसमें यह भी मजमून होगा कि तुम्हारे माँ-बाप तुम्हारे लिए दिन-रात रोते हैं। उनके हाल पर तरस

खाओ, नीलिमा, और इश्तहार पढ़ते ही घर चली आओ, हम लोग तुम्हा
इन्तजार करेंगे।"

अनूप को भी माँ की यह राय बहुत पसन्द आई। दूसरे ही दिन प्रमु
दैनिक पत्रों में विज्ञापन दे दिया गया। उसमें सबसे ऊपर नीलिमा क
फोटो छपा। उस विज्ञापन में यह भी उल्लेख था कि इस लड़की का जं
आदमी पता बतलाएगा या इसे इसके घर तक पहुँचा देगा, उसे पच्चीस
हजार रुपया इनाम दिया जाएगा।

इश्तहार छपने लगे। रोज अखबार बाबू ईश्वरलाल के घर आते। एक
दिन वे पत्नी को लेकर बंसीलाल के घर गए, उन्हें सारा हाल बतलाया
और फिर कहने लगे—"मुझे पूरा यकीन है बंसीलाल। मुझे अपने इस
काम में सफलता जरूर मिलेगी। यह हो सकता है, नीलिमा, इश्तहार पढ़े,
उसके बाद भी घर आने का मन न करे। लेकिन जो आदमी फोटो देखेगा,
नीलिमा को पहचानेगा, उसे लालच आ जाएगा। पच्चीस हजार रुपये कम
नहीं होते।"

बाबू ईश्वरलाल कह रहे थे। कर्नल बंसीलाल चुप बैठे सुन रहे थे।
तुलसी की आँखों की कोरें गीली थीं। वह भी एक ओर उदास मुद्रा लिए
बैठी थी।

अनूप को संकोच लग रहा था; इसलिए उसकी दृष्टि नत थी।

बाबू ईश्वरलाल ने बंसीलाल से फिर कहा—'पच्चीस हजार रुप
नाम इसलिए रखा है कि इसमें हर पढ़ने वाले की दिलचस्पी होगी। व
लिमा की तलाश करेगा, अगर उसे नीलिमा मिल गई, तो वह यहाँ
रन ही दौड़ा आएगा और हम लोगों को ले जाएगा। हम लोग अनूप का
ह नहीं करेंगे। मुझे आशा है कि नीलिमा मिलेगी और जरूर मिलेगी।"

बाबू ईश्वरलाल की बातों से कर्नल बंसीलाल को बहुत बड़ा बल मिल
। वह प्रसन्नता से खिल उठे। तुलसी भी मुस्कराने लगी। दम्पति को
लग रहा था कि अब उनकी बेटी मिलकर रहेगी।

लीला तुलसी के पास आई, उसने उसे गले से लगा लिया और फिर
-भरी वाणी में बोली—"तुम धीरज रखो, नीलिमा की माँ,
पर भरोसा रखो। उसकी कृपा होगी, तुम्हारी बेटी तुम्हें मिलेगी।

हम लोग भी उसी दिन का इन्तजार कर रहे हैं।"

लीला की बातों से तुलसी को संतोष हो गया। उसका मन दुखिया था। वह बुरी तरह निराश हो गई थी। अब उसमें आशा-किरण जागी और उसे भरोसा होने लगा कि शायद नीलिमा मिल जाए। उसने घर इसीलिए छोड़ा था कि अनूप के अलावा और किसी भी दूसरे युवक के साथ शादी करने के लिए तैयार नहीं थी।

तुलसी यह भी सोचने लगी थी कि अब मनोरमा ने अनूप को तलाक दे दिया है। बाबू ईश्वरलाल अनूप को ले आए हैं। ऐसी स्थिति में दोनों का व्याह हो सकता है।

तुलसी ने मनौती मानी, उसने ईश्वर से विनय की कि उसकी वेटी उसके घर आ जाए। नीलिमा के हाथ पीले हो जायें। वस फिर उसे और कुछ भी नहीं चाहिए।

रोज सवेरे वे अखबार घर पर आते, जिनमें इश्तहार होता। सबसे ऊपर नीलिमा की फोटो छपी होती, नीचे मजमून होता। तुलसी उस विज्ञापन को खूब गौरपूर्वक पढ़ती और कहती कि नीलिता में स्वाभिमान है। वह अपने आप कभी नहीं आएगी। हाँ, यह जरूर हो सकता है कि जब उसे मालूम होगा कि अनूप आ गया है, तो वह घर आने की सोचे। दूसरी बात यह भी हो सकती है कि जब नीलिमा पढ़ेगी, अनूप को मनोरमा ने तलाक दे दी है, तो वह बहुत खुश होगी। यह कारण भी उसके घर आने का हो सकता है।"

तुलसी को सबसे अधिक विश्वास इस बात पर था कि पच्चीस हजार रुपया पता लगाने वाले के लिए इनाम रखा गया है। यह लालच इतना बड़ा है कि हर आदमी इस चक्कर में पड़ेगा। वह नीलिमा को पहचानने और खोजने की कोशिश करेगा। इसी से उम्मीद करनी चाहिए कि मेरी वेटी मिल सकती है।

इस तरह तुलसी कुछ-न-कुछ सोचा करती। उसके दिल को पूरी-पूरी तसल्ली हो गई थी।

तुलसी की यह स्थिति थी और कर्नल वंसीलाल भी अब सपने के महल बनाने लगे थे। वे सोच रहे थे कि जब नीलिमा मिल जाएगी तो उसके आते

ही मैं अनूप के साथ उसका ब्याह कर दूंगा। ईश्वर ने अगर चाहा, तो यह सम्बन्ध होकर रहेगा। लोग ठीक कहते हैं कि ईश्वर के यहाँ देर है, लेकिन अंधेर बिलकुल नहीं। मनोरमा ने नीलिमा का हक छीना, उसने उसका दिल दुखाया इसलिए उसे अपने किये की सजा मिल गई। उसे अनूप को तलाक देनी पड़ी।

× × ×

जब से अखबारों में इश्तहार छप रहा था, अनूप को यह विश्वास हो गया था कि विज्ञापन व्यर्थ नहीं जाएगा। उसका परिणाम कुछ-न-कुछ अवश्य निकलेगा। या तो नीलिमा अपने आप घर आ जाएगी या फिर कोई उसका पता बतलाएगा। वह खुशखबरी लेकर पटना आएगा। उसे मुँह-माँगा इनाम दिया जाएगा। कोई भी रिश्ता आता, बाबू ईश्वरलाल उसे टाल देते। वह कहते कि अभी कुछ दिन ठहर जाओ, मुझे ब्याह की जल्दी नहीं है।

अनूप को बाप का यह व्यवहार बहुत अच्छा लगता। उसे खुशी थी। वह मन-ही-मन फूला नहीं समाता। उसने सोच लिया था, कि जिस दिन नीलिमा आ जाएगी, वह मन्दिर में जाकर देवता का प्रसाद चढ़ाएगा। नीलिमा से क्षमा माँगेगा। क्योंकि उसके साथ सगाई हो जाने के बाद उस ने मनोरमा से ब्याह कर लिया, घर में किसी को भी नहीं बतलाया। चोरी-चोरी पटना से देहली पहुँच गया। वहाँ जाकर अपनी दुनिया बसा ली और नीलिमा को भूल गया।

इधर अनूप मन में आशा लिए बैठा था और उधर एक दिन अचानक वसन्त की निगाह अखबार पर पड़ गई। उसने नीलिमा का फोटो देखा, तो चौंका। फिर नीचे का मजमून पढ़ने लगा। सारी वास्तविकता उसकी समझ में आ गई। उसे खुशी इस बात की थी नीलिमा ने उन माँ-बेटा से कुछ भी नहीं छिपाया। सब कुछ साफ-साफ बतला दिया।

वसंत ने मन में कोई लालच नहीं किया, उसने पच्चीस हजार रुपये का तनिक भी मोह नहीं किया, घर आकर अखबार नीलिमा को दिखलाया। इश्तहार में जो मजमून लिखा था, वह पढ़कर माँ को भी सुनाया। तीनों बैठे थे। उनमें आपस में बातें होने लगी। मालती ने संतोष की साँस ली

और वह जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में कहने लगी—"ईश्वर जो भी करता है, वह अच्छा ही होता है। अब नीलिमा का सपना पूरा होगा, वह अनूप के साथ फेरे घूमेगी। मैं भी इसी वहाने पटना जाऊँगी। मैं भी नीलिमा का कन्यादान लूँगी। वह मेरी धर्म-वेटी है।

"माँ! मगर नीलिमा जाएगी कव और कैसे?"

"देखो वसन्त हम लोगों को रुपये का लालच नहीं है। नीलिमा जैसे कर्नल वंसीलाल की पुत्री है, वैसे ही हमारी भी वेटी हुई। अव तो यही होगा कि नीलिमा तुम्हारे साथ पटना जाएगी, तुम उसे लेकर पटना जाओगे। मैं खुशी-खुशी भेजूंगी। फिर जव उसके व्याह की तिथि निश्चित हो जाएगी. तो मुझे भी जाना पड़ेगा।"

नीलिमा दोनों माँ-वेटा की बातें चुपचाप वैठी सुन रही थी। वसन्त ने उसकी ओर देखा, उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया और फिर धीरे से पूछा—"तुम क्या सोच रही हो, नीलिसा?"

"मैं सोच रही हूँ, भइया, कि तुम लोगों को छोड़कर जाना पड़ेगा। तुम लोग मेरे दु:ख-सुख के साथी हो, अगर तुमने मुझे अपने घर में शरण नहीं दी होती, तो पता नहीं, अव तक क्या हालत होती। मुझे जाना पड़ेगा क्योंकि अनूप बावू आ गये हैं और उनके साथ तलाक हो चुका है।"

"ठीक कहती हो, बहन, हम लोग भी इसी पक्ष में हैं कि तुम अपने घर जाओ, तुम्हारा व्याह हो और हम लोग खुशी से फूले न समायें।"

नीलिमा मुस्कराने लगी। उसने बसन्त की ओर देखा; फिर धीरे से वोली—"मैंने एक वात और सोची है, भइया!"

"क्या?"

"तुम अजनबी बन जाओ। यह खवर देने पटना चले जाओ कि मैं तुम्हारे घर में रह रही हूँ और तुम्हारी धर्म-वहन हूँ। इस तरह यह होगा कि इनाम वाला पच्चीस हजार रुपया तुम्हें मिल जायेगा।"

"मैं उस रुपये का क्या करूँगा, वहन?"

"उस रुपये से एक टैक्सी खरीदोगे। मुद्दत हो गई, अब तक किराये की गाड़ी चला रहे हो। इसीलिये कहती हूँ और जोर देती हूँ।"

नीलिमा की यह वात सुनकर बसन्त तो वोलते-वोलते रह गया,

मालती तत्क्षण ही कहने लगी—"वाह री बहन और वाह रे भाई! तू वसन्त को सिखला रही है कि वह इनाम पच्चीस हजार रुपया प्राप्त कर ले। यह अनीति है, अन्याय है और अधर्म है। हम लोगों को चाहिये कि तेरे लिये कुछ खर्च करें। हमारा यह धर्म नहीं कि पच्चीस हजार रुपया इनाम वाला भी हासिल कर लें। ऐसा कभी नहीं होगा। तुम्हारा यह सोचना बिलकुल गलत है।"

इस पर नीलिमा ने मालती से खूब तर्क किया, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। मालती ने उसे बहुत डाँटा।

अन्त में यह निश्चय किया जाने लगा कि नीलिमा पटना अकेली जायेगी या उसे वसन्त छोड़कर आयेगा।

नीलिमा खामोश रही। तभी वसन्त ने एक क्षण में फैसला कर दिया। वह माँ से बोला—"मैंने सोचा है कि बाबू ईश्वरलाल और कर्नल बंसीलाल दोनों में से किसी को भी सूचना दी जाय। मैं नीलिमा को लेकर पटना जाऊँगा। उसे उसके घर पर छोड़ आऊँगा। यही ठीक रहेगा। मैंने यही सोचा है।"

मालती पुत्र के विचारों से पूर्णतया सहमत हो गई। अब नीलिमा को बोलने की गुंजाइश नहीं रही।

बस फिर क्या था। नीलिमा की जाने की तैयारियाँ होने लगी। मालती खुशी के आँसू बहाती बार-बार उसे वक्ष से लगा लेती।

नीलिमा भी एक आँख से हँसती और दूसरी से रोती। उसे भी अपार आनन्द की अनुभूति हो रही थी। वह एक लम्बी मुद्दत के बाद अनूप को देखेगी, जो उसका सुख-संसार है, जिसे अपना देवता मान रखा है।

दूसरे दिन नीलिमा के जाने की तैयारी थी। मालती उस रात को सोई नहीं, जागती रही। सवेरा होते ही उसने दोनों के लिए टिफिन तैयार किया और बोली—"देहली से पटना का रास्ता बीस घण्टे का है। थरमस में चाय रख लो, पानी वाली बोतल भी भर लेना। टिफिन तुम्हारे साथ है। खाना प्लेटफॉर्म पर अच्छा नहीं मिलता। इसीलिए मैंने रख दिया है। चलते-चलते मालती ने पुत्र को सख्त हिदायत कर दी। उसने कहा कि अगर बाबू ईश्वरलाल या कर्नल बंसीलाल तुम्हें इनाम का रुपया

दें, तो वह कभी मत लेना। उनसे यही कहना कि नीलिमा मेरी धर्म-बहन है।"

जिस समय मालती ने नीलिमा को विदा किया, वह दुःख के आवेग को रोक नहीं पाई। नीलिमा टैक्सी में बैठी थी। वसन्त ने गाड़ी स्टार्ट की।

जब तक टैक्सी मालती की नजरों से ओझल नहीं हो गई, तब तक वह खड़ी-खड़ी आँसू बहाती रही। फिर जब अन्दर जाने के लिए मुड़ी, तो चौखट पर आते-आते उसके पैर काँपने लगे। वह अपने को सँभाल नहीं पाई और भरभरा कर फर्श पर गिर पड़ी।

गिरते ही मालती बेहोश हो गई थी। उसे पड़ोस की स्त्रियों ने आकर उठाया। वे उसे अन्दर ले गईं और विस्तर पर लेटाया। फिर उसके मुंह पर पानी के छींटे मारने लगीं।

१५

शरद जब मनोरमा को लेकर आगरा पहुँचा, तो उसके पिता बाबू दीनानाथ बहुत बिगड़े। वह क्रोध से लाल-पीले होते हुए कहने लगे—"तुमने यह अच्छा नहीं किया, शरद, जो हम लोगों को बतलाया नहीं और चुपके-चुपके सिविल मैरिज कर ली। क्या हमने तुमको पटना इसीलिए भेजा था?" शरद ने सोच लिया कि उसके पास सबसे बढ़िया तरीका चुप रहने का है एक चुप सौ बालाएँ टालती है। अगर वह खामोश रहेगा, तो उसकी जीत होगी। इसीलिए उसने होंठ पर से होंठ नहीं उठाया।

शरद बाप के सामने सिर झुकाये खड़ा था। माँ राधा खुशी के आँसू बहा रही थी। वह पति से बोली—"अब तो लड़के ने शादी कर ली है, वह बहू भी ले आया है। तुम गुस्सा बेकार हो रहे हो। इससे कोई फायदा नहीं।"

"तुम ठीक कहती हो, शरद की माँ, लेकिन हर बाप को हौसला होता है कि उसके लड़के की बारात जाये, डोली में दुल्हिन आए। वह सब नहीं

हुआ। समाज मुझे क्या कहेगा ?"

"अब जमाना बहुत आगे बढ़ चुका है। बच्चों का मन रखना पड़ता है। तुम एक काम करो।"

"क्या ?"

"लोगों से कह दो कि लड़का दिल्ली स्टेशन गया था। वहाँ किसी ऊँचे समाज की लड़की से उसका लगाव हो गया। उसने उससे सिविल मैरिज कर ली। अब आप लोग बतलाइये कि शादी की दावत घर पर दी जाये या फिर किसी बड़े होटल में।"

"तुमने बहुत ठीक सोचा, शरद की माँ। यही होना चाहिए और यही होगा।"

शरद ने माँ-बाप की यह बातें सुनीं, तो उसकी आँखों में श्रद्धा के आँसू आ गए। वह अपने को रोक नहीं पाया और भरभरा कर बाप के पैरों पर गिर पड़ा।

बाबू दीनानाथ ने पुत्र को वक्ष से लगा लिया। वे भी आँसू बहाने लगे।

मनोरमा ने जब यह देखा, तो वह सबसे पहले सास के चरणों पर झुकी। फिर जैसे ही ससुर की ओर बढ़ी, बाबू दीनानाथ ने उसे वक्ष से लगा लिया।

दो दिन बाद घर पर ही दावत का आयोजन हुआ। प्रीतिभोज ऐसा शानदार रहा कि उसकी चर्चा नगर में जाने कितने दिन तक होती रही। तोहफे इतने आये थे कि मनोरमा उन्हें सँभाल नहीं पाई और शरद भी थक गया। कुछ भेंटें मनोरमा के लिए थीं और कुछ शरद के लिए आई थीं।

इस तरह खुशियों का समारोह एक लम्बे अर्से तक चलता रहा। रोज दिन निकलता, तो कहा जाता कि आज वह खुश है, आज वह उदास है। क्या मजाल, मनोरमा के मुँह पर मक्खी भी बैठ जाये ! सास-ससुर को इसकी सबसे पहले चिन्ता थी।

शरद भी अपने में फूला नहीं समा रहा था। उसकी खुशी फूट पड़ती। वह बिखर-बिखर रही थी। माँ बलाएँ लेती। बाप मुँह चूमता।

शरद अपने को भाग्यशाली महसूस कर रहा था। उसे अपनी किस्मत पर गर्व था।

मनोरमा को ऐसा लग रहा था कि इस दुनिया से अलग जो एक छोटा सा संसार है, जिसमें सुख है, समृद्धि है और है प्यार ही प्यार, वह उसी संसार में रह रही है।

पूरे का पूरा परिवार आनन्दातिरेक से झूम रहा था। जब दिन आता, तो वह अपने में एक नई जिन्दगी लाता। रात हँसती, मुस्कराती। उसका कहना था कि मैं अपने में नई अनोखी हूँ। मनोरमा रात की रानी है और शरद दिन का तारा।

मनोरमा लगभग एक महीने तक ससुराल में दुल्हिन बनकर रही। इसके बाद उसके पंख फैल गए और वह हवा में उड़ने लगी। अब वह अपने इशारों पर सास-ससुर को तो नचाती ही, पति को ऐसा बना रखा था, जैसे बिजली का बटन दबाओ, उजाला हो गया और बटन दबाओ, अंधेरा सामने आ जायेगा।

इस तरह मनोरमा जो चाहती, वह करती। उसे कोई टोकने, मना करने वाला नहीं था।

एक दिन मनोरमा ने प्रोग्राम बनाया। उसने यह बतलाया कि उसकी एक सहेली देहली में रहती है। वह उससे मिलने जा रही है। जल्दी ही लौट आयेगी।

बाबू दीनानाथ और राधा दोनों यही राह देखते रहे कि मनोरमा अब आती है, तब आती है, लेकिन वह नहीं आई। उसने इन्तजार ही कराया। पूरे का पूरा सप्ताह ही बीत गया।

दम्पति की चिन्ता बढ़ी। वे बुरी तरह परेशान हो गये। ऐसे ही शरद को लगने लगा कि मनोरमा किसी आपत्ति के मुँह में आ गई है, यह सभी नहीं लौटी। इसका जरूर कोई कारण है।

इधर ससुराल के लोग न जाने क्या-क्या सोच रहे थे और उधर मनोरमा ने देहली पहुँचकर सबसे पहले काम यह किया कि वह उन दुकानों पर गई, जो किराये पर फ्लैट, मकान और दुकानें दिलवाते हैं। उसने फ्लैट बेच दिया। उसकी अच्छी-खासी रकम ली। दुकान की पगड़ी भी उसे

अच्छी मिली। कार भी उसने वेच दी। हालाँकि पैसे वहुत कम मिले।

इसके वाद जव मनोरमा लौटकर आगरे आई, तो वह विना पूछे ही सवको जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में वतलाने लगी—"जव मैं गई, तो मेरी सहेली को आक्सीजन दिया जा रहा था। मगर दुःख है, उस प्राणवायु ने अपना कुछ भी काम नहीं किया। मेरी सहेली दो दिन तक मौत के साथ संघर्ष करती रही। उसके वाद उसने यह दुनिया छोड़ दी। मातम में मुझे भी एक सप्ताह तक रुकना पड़ा। मेरे सामने यह मजवूरी थी।"

ससुर ने कहा—"वहूरानी। अगर तुमने टेलीफोन कर दिया होता, तो हमें तसल्ली हो जाती। हम वेफिक्र हो जाते।"

सास राधा का कहना था कि तुम खवर भेज देती या तार कर देती, तो इतनी उलझन नहीं होती। जितनी परेशानी मुझे हुई।

एक दिन वावू दीनानाथ ने मनोरमा से कहा—"मनोरमा! मैंने तुम्हारे पिता को नहीं देखा। मेरी इच्छा होती है कि अपने समधी से मिलूँ। उनसे मीठी-मीठी वातें करूँ। मैंने सोचा है कि इस वार जव तुम पटना जाओगी, तो हम लोग भी तुम्हारे साथ चलेंगे। कुछ दिन वहाँ रहेंगे। फिर अपने समधी और समधिन को यहाँ आगरे ले आयेंगे।"

मनोरमा ने यह सुना, तो वह फूल की तरह खिल उठी। तत्क्षण ही वह ससुर से कहने लगी—"पिताजी, मैं कितनी खुशकिस्मत हूँ, जो आप लोग मेरे साथ चलेंगे। वहाँ यह देखकर सव कितने खुश होंगे कि मैं पूरा कुनवा ले आई हूँ!"

उसी दिन योजना वना ली गई कि अगले सप्ताह पूरे परिवार को पटना के लिए रवाना हो जाना है।

मनोरमा तव वह सोच रही थी कि भगवान् ने यह वहुत अच्छा किया। मैंने एक ढेले में ही दो शिकार खेल डाले। किस्मत इसे कहते हैं। और मुकद्दर इसी का नाम है।

दिन आगे वढ़ रहे थे। मनोरमा ने सोच लिया था कि पटना जाकर उसे क्या करना है। उसकी सारी कोशिश यही थी कि वावू रामधन अपनी चल और अचल सम्पत्ति का वसीयतनामा उसके नाम कर दें।

आखिर वह दिन भी आ गया, जव घर के सव लोगों को पटना

दोनों परिवारों के सामने एक ही प्रमुख समस्या थी कि किसी तरह और जल्दी से जल्दी नीलिमा का पता लगना बहुत आवश्यक है। अगर उसके मिलने से पहले अनूप का ब्याह हो गया, तो अनूप की जिन्दगी मिट्टी में मिल जायेगी।

कर्नल बंसीलाल और तुलसी पूरी तरह निराश हो चुके थे। वे ईश्वर लाल और लीला को यही सलाह देते कि नीलिमा की राह मत देखो। अनूप का ब्याह जल्दी से जल्दी कर डालो।

इन दोनों परिवारों ने बाबू रामधन का पूरा-पूरा बहिष्कार कर रखा था।

रामधन को इसकी चिन्ता बिलकुल नहीं थी। उनका कहना था कि गाल बजाने वाले को कभी बोलने से रोका नहीं जा सकता। मुझे सबकी बातें एक कान से सुनकर दूसरे से निकाल देनी है।

जब मनोरमा आ गई और उसके साथ शरद भी था, बाबू दीनानाथ और राधा भी आई थीं, तब रामधन खुशी से फूले नहीं समाये। उन्होंने सपने में भी नहीं सोचा था कि उनके समधी और समधिन बिना बुलाये ही पटना चले आयेंगे। उन्होंने दम्पति की खूब खातिर की। उन्हें सिर-आँखों पर बैठाया।

मनोरमा को आये तीन दिन हो चुके थे। इस बीच में उसकी कोशिश यही रही कि अनूप क्या कर रहा है, उसके घर में क्या हो रहा है, इन सारी बातों का पता वह गुप्त रूप से लगाती रहे।

बाबू दीनानाथ और राधा रोज जाने की योजना बनाते, लेकिन वे आग्रह की मधुर डोर में बँधकर रह जाते। इस तरह एक सप्ताह बीत गया और बाबू रामधन ने अपने समधी और समधिन को विदा नहीं किया।

सीता भूल गई थी कि कोई दिवाकर था और उसके घर पर दामाद बनकर आया था। अतीत की दुनिया उसने बहुत पीछे छोड़ दी थी। उस का सारे का सारा लगाव वर्तमान से था। इसीलिए उसे आशा थी और वह अत्यधिक प्रसन्न थी कि अब उसकी बेटी मनोरमा का जीवन सुखपूर्वक व्यतीत होगा।

बाबू रामधन भी इस नये रिश्ते से बहुत ज्यादा खुश थे। जब उन्होंने

समधी और समधिन को विदा किया, तो उनके साथ खुद भी आगरे गये। कुछ दिन तक दम्पति वहीं रहे।

मनोरमा को यह देख-देखकर ऐसा लग रहा था कि भाग्य उसके सर्वथा अनुकूल है। वह जो भी इच्छा करेगी, तकदीर उसे जरूर पूरा करेगी।

× × ×

मनोरमा आगरा जरूर आ गई, लेकिन उसका मन पटना में लगा था। उसने सोच रक्खा था कि वह अनूप का दाम्पत्य जीवन कभी सुखी नहीं रहने देगी। अभी उसका व्याह नहीं हुआ,इसलिए वह निश्चिन्त थी। वह अब भी गहराई के साथ सोचती कि अनूप अनूप है, शरद उसके सामने कुछ भी नहीं। जब अनूप का दाम्पत्य जीवन कलहपूर्ण हो जाएगा, तो वह भटकेगा, ठोकरें खाएगा। उस समय उसको सहारे की सबसे बड़ी जरूरत होगी। तब मैं उसके काम आऊँगी। वह थोड़ी खुशामद में ही काबू में आ जाता है। उस पर मैं अपना जादू जब चाहूँ, तब डाल सकती हूँ।

मनोरमा आगरे में थी। बाबू रामधन मन-ही-मन खुशी से फूले नहीं समाते। वे पूर्णतय: निश्चिन्त हो गये थे कि अब उनकी बेटी राह पर है। सीता भी खुश थी। उसकी खुशी उसमें समाती नहीं, फूटी पड़ रही थी।

बाबू ईश्वरलाल के घर में यह कहा जा रहा था कि नीलिमा के मिलने की अब कोई आशा नहीं है। इसीलिए अनूप का व्याह जल्दी से जल्दी कर डालना चाहिए।

बाबू ईश्वरलाल ने नीलिमा के लिए अखबारों में जो इश्तहार दिये थे, वे तब से लेकर अब तक बराबर छप रहे थे।

पहले सबको आशा पूरी-पूरी दिखलाई पड़ रही थी। मगर अब उस आशा के बीच में निराशा के बादल भी दिखलाई देने लगे। इसीलिए लीला उदास हो गई थी। अब उसके चेहरे पर हँसी बहुत कम आती और वह लम्बी साँसें लेती।

बाबू ईश्वरलाल भी हताश हो गए थे। उनका अन्तःकरण कह रहा था कि अब उन्हें अपने बेटे का दूसरा व्याह जरूर करना पड़ेगा।

इस तरह परिस्थिति पट बदल रही थी। भाग्य का नाटक खेला

जा रहा था। कोई भी नहीं जानता था कि आने वाला कल अपने हाथों में क्या लेकर आयेगा। उसके हाथों में फूल होंगे या काँटे, प्रत्येक इससे अनभिज्ञ था।

१६

जब से अनूप गया था, दिवाकर का मन मंसूरी में बिलकुल नहीं लगता। उसका चित्त उचाट हो गया था। वह हमेशा कुछ-न-कुछ सोचा ही करता। तबादले के लिए बहुत कोशिश की; मगर कोई सुनवाई नहीं हो रही थी।

दिवाकर ने जब अच्छी तरह समझ लिया कि उसका तबादला नहीं हो सकता, तो ऊँचे अधिकारियों के पास जाकर फरियाद की। उसे आश्वासन मिला और यह कहा गया कि उसका रिकॉर्ड अच्छा है, उसे पटना भेज दिया जायेगा, मगर अभी कुछ समय लगेगा। तबादला इतनी जल्दी नहीं हो सकता है।

दोनों मित्रों में पत्र-व्यवहार तो चल ही रहा था। कभी-कभी उनकी बातें टेलीफोन पर भी हो जातीं। एक दिन अनूप ने यह कहा कि अगर तबादला नहीं हो सकता है, तो त्याग-पत्र दे दो। तुम्हें नौकरी करने की कोई जरूरत नहीं है। दिवाकर, तुम पटना चले आओ। मेरे पिता का काम बहुत बड़ा है। उसे मैं अकेले सँभाल नहीं पाता। अगर तुम यहाँ आ जाओगे, तब हम एक से दो हो जायेंगे।

अनूप ने दिवाकर को यह भी समझा दिया था कि वह अपने को बाबू ईश्वरलाल का नौकर न समझे, उसे प्राफिट पार्टनर बनाया जाएगा। मुनाफे में उसका भी हिस्सा होगा, इसका एग्रीमेंट किया जाएगा। उसे कमीशन मिलेगा। उसकी कोशिश यह होगी कि वह फाइनेन्स के काम को खूब बढ़ाये।

दिवाकर इस पर सहमत हो गया। उसने पटना जाने की योजना बना ली।

दिवाकर ने जब त्याग-पत्र लिखकर अपने अफसर को दिया, तो वह चौंक गया। उसने उसका त्याग-पत्र स्वीकार नहीं किया। नतीजा यह निकला कि उसी सप्ताह उसका तबादला पटना के लिए कर दिया गया।

दिवाकर फारेस्ट-रेंजर था। वन-विभाग का एक उच्चधिकारी। उसे रहने के लिए शहर से बाहर बंगला मिला। जीप भी मिली। अर्दली दो चपरासी मिले, जो उसे हाथों हाथ लिए रहते।

अनूप का मन था और बाबू ईश्वरलाल का भी यही कहना था कि दिवाकर को उसकी कोठी में रहना चाहिए। वह अनूप का घनिष्ट मित्र है।

किन्तु दिवाकर मजबूर था। वह सरकारी नौकर था। उसने दोनों पिता-पुत्र के हाथ जोड़ लिए। उनसे क्षमा-याचना की। साथ-ही-साथ यह वादा किया वह रहेगा, तो बंगले में, परन्तु दिन-भर अपने विभाग का काम देखेगा। इसमें फर्क नहीं पड़ सकता, डिनर रात को रोज वह अनूप के साथ लेगा, छुट्टी वाले दिन ब्रेकफास्ट और लंच भी अनूप के घर पर लेगा, बदले में वह चाहेगा कि अनूप भी उसके बंगले में आए।

लीला ने यह सुना, तो वह खुशी से फूली नहीं समाई। बाबू ईश्वर-लाल ने दिवाकर की पीठ थपथपाई। वे पुलकित होकर गद्गद कण्ठ से बोले—"दिवाकर पहले मेरा एक ही बेटा था, अब दो हो गए हैं। अनूप को मैंने जन्म दिया है, मैं उसका पिता कहलाता हूँ; लेकिन तुम मेरे धर्म के बेटे हो, मैं तुम्हारा धर्म-पिता हूँ। तुमने जिस त्याग का परिचय दिया, वह सराहनीय है। जब मैं तुम्हें देख लेता हूँ, तो मेरा कलेजा हाथ-भर का हो जाता है।"

ईश्वरलाल की बातें सुनकर दिवाकर श्रद्धा-विभोर हो उठा। जब उसे और कोई उपाय नहीं सूझा, तो उसने जल्दी से ईश्वरलाल के चरण-स्पर्श कर लिए; फिर उनके वक्ष से लग गया। उसकी आँखों में श्रद्धा के आँसू थे और वह सुबक-सुबककर रो रहा था।

× × ×

बाबू रामधन ने जब यह सुना कि दिवाकर पटना आ गया है और अनूप के साथ उसकी बहुत अच्छी पटती है, तो उन्हें ईर्ष्या हुई, बहुत बुरा लगा। वे सीता से कहने लगे—"अब बाबू ईश्वरलाल मेरे दुश्मन बन गए हैं।

उन्होंने ने ही दिवाकर को पटना बुलाया है। वह उनके घर रोज आता है। यह सब वे मुझे जलाने के लिए कर रहे हैं।"

इस पर सीता छूटते ही बोल उठी—"हमारी लड़की का ब्याह हो गया। वह अपनी ससुराल गई। हमें दुनिया से कोई मतलब नहीं है दिवाकर कौन था, यह मैं भूल गई और बाबू ईश्वरलाल को भी अब मैं नहीं पहचानती हूँ मेरी समझ में नहीं आता कि तुम इतने परेशान क्यों हो। अरे भाई, मोटी-सी बात समझ लो। हाथी अपनी राह पर चलता है। कुत्ते उसके पीछे कितने ही दौड़ते-भौंकते रहें, वह चलता रहता है।"

"तुम ठीक कहती हो, मनोरमा की माँ! मैं भी यही सोचता हूँ; लेकिन···।"

"लेकिन क्या?"

"लेकिन मन नहीं मानता है; बुरा लग जाता है।"

"कुछ भी बुरा न मानो। तुम्हें किसी से मतलब क्या है? मैंने तो यहाँ तक सोचा है कि मनोरमा अगर एक महीने आगरे में रहेगी, तो उसे दो महीने पटना में रखूँगी। शरद के बाप बाबू दीनानाथ के पास कम दौलत नहीं। वे किसी भी मामले में बाबू ईश्वरलाल से पीछे नहीं हैं। जलने वालों को जलने दो, तुम अपना काम देखो।"

बाबू रामधन को सीता की बातों से बल मिला। वे भी सोचने लगे कि उनके एक ही लड़की है। दम्पति चाहते थे कि मनोरमा हमेशा उनकी आँखों के सामने ही रहे; लेकिन मजबूरी थी। लड़की पराई अमानत होती है। उसे ससुराल भेजना पड़ता है। इसीलिये वे भी मजबूर हो गये।

बाबू रामधन के विचार यहाँ तक बदल गये कि वे पटना छोड़ने के लिये तैयार थे। उनकी योजना थी कि पटना की दुकान खत्म कर दी जाय और मकान भी बेच डाला जाय। वे आगरे में जाकर रहे, जहाँ उनकी बेटी है।

जब आदमी की उम्र थकती है और उसका बुढ़ापा आता है, तो वह औलाद का सहारा ढूंढता है। सन्तान लायक हो या नालायक, सबको प्यारी होती है।

सीता का भी यही मत था कि कुछ दिन की बात और है, उसके बाद

वह अकेली नहीं रह सकती। उसकी आँखों के सामने मनोरमा को हरदम रहना चाहिये।

इस तरह दम्पत्ति दूर तक की सोचते, वे लम्बी-लम्बी योजनाएँ बनाते। अपने विचार पत्रों द्वारा मनोरमा तक पहुंचाते।

मनोरमा कोजब ऐसे पत्र मिलते, तो वह खुशी से फूली नहीं समाती। सास राधा को चिट्ठी पढ़कर सुनाती। ससुर दीनानाथ से भी कहती कि मेरे पिता ने यह लिखा है।

मनोरमा शरद को भी माता-पिता के पत्र पढ़कर सुनाती। वह कहती कि वे दिन कितने अच्छे होंगे, जब मैं अपने माँ-बाप के पास रहूँगी। लड़के जिन्दगी भर माँ-बाप के साथ रहते हैं। वेचारी लड़कियों ने क्या कुसूर किया है, जो उन्हें ससुराल भेज दिया जाता है।

शरद जब मनोरमा की ऐसी बातें सुनता, तो उसे हँसी आ जाती। वह उसी धुन में कहने लगता कि तुम्हें किसने मना किया है, मनोरमा, तुम आज ही और अभी पटना चली जाओ। मैं अपने माता-पिता के पास रहूँगा। तुम...।

नवीन दम्पति ऐसे अवसर पर खूब जोर से खिलखिलाकर हँसते। उन्हें लग रहा था कि उनका जीवन धन्य है। वे सुखी हैं। ऐसा सुख और सौभाग्य ईश्वर सबको दे।

मनोरमा और शरद अपने में पूरी तरह संतुष्ट थे। उन्हें कोई भी अभाव नहीं खलता था। छब्बीस जनवरी गणतंत्र दिवस का अवसर आया। बाबू दीनानाथ ने यह योजना बनाई कि वे रिपब्लिक डे मनाने के लिये देहली जायेंगे। उनके साथ पत्नी, पुत्र और बहू भी होगी।

मनोरमा ने यह सुना, तो वह खुशी से फूली नहीं समाई। वह देहली जाने की तैयारी करने लगी। यह सब लोग तेईस जनवरी को देहली पहुंच गये। वहाँ एक आलीशान होटल में ठहरे। चौबीस जनवरी को इण्डिया गेट गये, सेना की परेड देखी।

पच्चीस को परेड का जुलूस फतेहपुरी से देखा। वहाँ से वह सीधा लालकिले जा रहा था।

छब्बीस जनवरी को प्रातः चार बजे ही पूरा परिवार इण्डिया गेट

आ गया। राष्ट्रपति-भवन के सामने तीनों सेनाएँ एक सूत्र में बँधी खड़ी थीं। जैसे ही राष्ट्रपति की सवारी आई, इकत्तीस तोपों की सलामी दी गई। पहले जल-सेना की परेड हुई इसके जवानों के वदन में चुस्ती और फुर्ती कूट-कूटकर भरी थी।

फिर थल-सेना का नम्बर आया। उसके बाद हवाई-सेना ने अपनी परेड की। तीनों सेनाओं ने राष्ट्रपति को सलामी दी। जाड़ा कड़ाके का था। सर्दी इतनी थी कि जिसका नाम नहीं। सूरज अभी नहीं निकला था। राष्ट्रीय-गीत गाया जाने लगा। फिर जब सात बजे, तो जुलूस इण्डिया गेट से चला। समारोह ऐसा था कि देखते ही बनता था। सड़क के दोनों तरफ सिर ही सिर दिखलाई पड़ते।

जब जुलूस जनपथ से गुजर रहा था, तो बाबू दीनानाथ पैदल चल रहे थे। राधा जो कभी पैदल चली नहीं, वह भी कनॉट प्लेस तलक आ गई और तनिक भी नहीं थकी। मनोरमा और शरद दोनों के थकने का सवाल ही पैदा नहीं होता था। वे मिन्टो ब्रिज आये। अजमेरी गेट पर भी वे मुस्करा रहे थे।

जुलूस के साथ-ही-साथ बाबू दीनानाथ का पूरा परिवार लालकिले आया। यह सात मील का लम्बा सफर था; लेकिन कोई भी नहीं थका।

दूसरे दिन मनोरमा ससुर, सास और पति के साथ एक होटल में बैठी कॉफी और डोसे का स्वाद ले रही थी। तभी एक भद्र महिला ने उसे टोक दिया। वह बोली, "कहो, मिसेज अनूप, हाऊ आर यू ? भाई, यह बहुत बुरा किया तुमने, जो देहली छोड़ दी। क्या यह सच है कि तुमने अनूप बाबू को तलाक दे दिया है ?"

मनोरमा ने यह सुना, तो उसने जल्दी से अपना मुँह घुमा लिया; लेकिन वह महिला पास आ गई और जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में पूछने लगी, "मैंने तो तुम्हारे विषय में बहुत-सी बातें सुन रखी हैं, मनोरमा। लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि तुमने अनूप से पहले भी अपने एक पति को तलाक दी थी। क्या यह सही है ?"

राधा भौंचक्की-सी रह गई। वह आगन्तुक की ओर आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगी।

ऐसे ही बाबू दीनानाथ के आश्चर्य का भी पारावार न रहा। उन्हें लगा कि वे कोई सपना देख रहे हैं, जो बहुत ही विचित्र हैं।

शरद कभी मनोरमा का बदहवास चेहरा देखता, तो कभी उस महिला को निहारने लगता, जो खड़ी थी और मनोरमा को चुप देख, फिर कह रही थी, "पहले मैं जानती थी कि तुम लोग पटना गये हो, कुछ दिन बाद आ जाओगे, लेकिन उस दिन पता चला कि तुमने फ्लैट की पगड़ी ले ली। उसे किसी के हाथ बेच दिया है। दुकान भी तुमने बेच डाली। उसकी भी पगड़ी ले ली। तुमने मुझसे पूछा नहीं। तुम्हारी फियेट कार बहुत प्यारी थी। उसे तुमने पन्द्रह हजार की बेच दी। मैं तुम्हें पूरे बीस देती। ये लोग कौन हैं? तुम देहली कब आई?"

लेकिन मनोरमा ने होंठ पर से होंठ नहीं उठाया। उसका यह व्यवहार देख, महिला को गुस्सा आ गया। वह तनिक स्पष्ट होकर बोली, "मैं पूछ रही हूँ और तुम जवाब ही नहीं देतीं। क्या शराफत इसी का नाम है?"

यह कहने के बाद वह महिला बाबू दीनानाथ की ओर उन्मुख हुई। उनसे पूछने लगी, "शायद आप मनोरमा के पिता हैं। यह···।"

"मैं पिता नहीं, ससुर हूँ।"

"अच्छा तो आप अनूप बाबू के बाप हैं?"

"मेरे बेटे का नाम शरद है।"

"शरद?"

"हाँ, शरद।"

"तो क्या मनोरमा बहन ने तीसरी शादी कर ली?"

"यह मैं कुछ नहीं जानता।"

"आप भी पटना में रहते हैं? अब समझी कि छब्बीस जनवरी पर देहली आये होंगे?"

"मैं आगरे में रहता हूँ।"

"अच्छा तो यह तीसरा ब्याह आगरे में हुआ है। मैं इसके खिलाफ हूँ। मुझे बिलकुल पसन्द नहीं। एक तलाक दी। दूसरे को भी तलाक दे दी। यह बहुत बुरा है और इसका नतीजा अच्छा नहीं होगा।"

बाबू दीनानाथ गुस्से से काँपने लगे। उनके अन्तःकरण ने कहा कि

अगर कुछ दाल में काला न होता तो मनोरमा इस औरत को जवाब जरूर देती।

राधा ने भी सब कुछ सुना था। उसने उस महिला को अपने पास बैठा लिया और उससे सारी जानकारी ली। शरद ने भी सारी बातें सुनी। मनोरमा अब भी मौन थी। किसी से भी उसने कुछ नहीं कहा। महिला चली गई। सब लोग होटल आये।

शरद आपे से बाहर हो रहा था। वह असलियत को समझ गया था। उसने मनोरमा से कहा, "अब समझा, मनोरमा, कि चोर की दाढ़ी में तिनका था। तभी तुम मुझसे झूठ बोलीं। सिविल मैरिज करने और चोरी-चोरी ब्याह करने का मतलब यही था कि तुम किसी पर जाहिर नहीं करना चाहती थीं कि इससे पहले मैं अपने दो पतियों को तलाक दे चुकी हूँ। मैं तुम्हें अपने साथ नहीं रक्खूँगा। आगरे भी नहीं ले जाऊँगा। तुम्हारा जहाँ मन हो, जा सकती हो। और चौथा ब्याह भी कर सकती हो। मैं आगरे पहुँचते ही तलाक के लिए अर्जी दे दूँगा।"

मनोरमा चुपचाप सुनती रही। वह कुछ भी नहीं बोली। तब बाबू दीनानाथ जोर से तड़पे। वे लाल-पीले होकर बोले, "अब बैठी क्यों हो, मनोरमा? जाओ, अपना रास्ता नापो। हम लोगों को तुम्हारी जरूरत नहीं है।"

"हाँ बहू! तुम्हें जाना ही पड़ेगा। ऐसी बहू को घर में रखकर हम भी बदनाम हो जायेंगे। जाओ, देर न करो। मैं तुम्हें आगरे न ले जाऊँगी।"

इस तरह राधा ने भी पति का समर्थन किया।

किन्तु मनोरमा खामोश थी। उसकी खामोशी बिलकुल नहीं टूटी। उसने किसी को भी कुछ जवाब नहीं दिया। चुपचाप वहाँ से चल दी। किसी ने भी उसे नहीं रोका। किसी ने भी नहीं टोका। वह जीने की सीढ़ियाँ उतर आई और सड़क पर आकर यह सोचने लगी कि अब उसे किधर जाना चाहिए, उसकी मंजिल क्या है।

× × ×

"हाँ, वकील साहब, मेरे गहने पूरे पाँच लाख के थे। सब बाबू दीनानाथ ने छीन लिये। मेरे पास नगद भी दो लाख रुपया था। वह मेरी सास

राधा ने छीन लिया। पति ने मुझे खूब पीटा। वह मेरी नाक काटने जा रहा था। उसने वेइज्जत करके मुझे घर से निकाल दिया और अब तलाक के लिए प्रार्थना-पत्र दे दिया है। मेरे पास लगभग पाँच सौ साड़ियों से कम नहीं थीं। सब शरद ने ले लीं। मैं केवल यही साड़ी पहनकर घर से निकली हूँ। मेरा इस्तगासा दायर कर दीजिये। अगर वे लोग मुझे मेरा सामान नहीं देते हैं, तो दस लाख नगद दे दें।"

वकील सुन रहा था, मनोरमा कह रही थी—"अब मेरे पास जेवर के नाम पर यह हीरे का हार रह गया है। हाथों में नीलम की चूड़ियाँ हैं। मैं इन्हें वेच दूँगी। मुकद्दमा लड़ूँगी।"

वकील ने मनोरमा को पूरा-पूरा आश्वासन दिया। उसने कहा—"मैं तुम्हारा मुकद्दमा लड़ दूँगा, तुम जीत भी जाओगी; मगर मेरी फीस पाँच हजार रुपये से कम नहीं होगी। तुम्हारा केस बहुत सीरियस है।"

"मैं पाँच हजार दूँगी। इसके अलावा जब मुकद्दमा जीत जाऊँगी, तो इतना ही शुक्राना दूँगी। आप पूरी ताकत लगा दीजिए, ताकि फैसला मेरे माफिक हो।"

इस तरह मनोरमा ने वकील को अपनी पूरी बात समझा दी। उसे तसल्ली भी मिल गई। उसने दूसरे दिन वकील का पूरे का पूरा मेहनताना जमा कर दिया। फिर वह देहली लौट आई। उसने आगरे में रहना उचित नहीं समझा। उसे वहाँ खतरा था। उसने मुकद्दमा आगरे में दायर किया था।

मनोरमा ने माँ-बाप को कोई सूचना नहीं दी कि उसे ससुराल से निकाल दिया गया है। उसने देहली में किराये पर एक फ्लैट लिया। बढ़िया एम्बेसेडर कार खरीदी। फिर निश्चिन्त होकर रहने लगी।

इधर मनोरमा की यह स्थिति थी और उधर बाबू रामधन पूरी तरह निश्चिन्त थे कि उनकी बेटी का ब्याह हो गया है। वह ससुराल में है।

घर में रामधन की जब सीता से बातें होतीं, तो वे यही कहते कि अब मनोरमा शरद को तलाक नहीं देगी। अपने दो पतियों को तलाक देकर वह नसीहत ले चुकी है।

सीता भी सन्तोष की साँस लेती। वह मन-ही-मन ईश्वर से वि

अगर कुछ दाल में काला न होता तो मनोरमा इस औरत को जवाब जरूर देती।

राधा ने भी सब कुछ सुना था। उसने उस महिला को अपने पास बैठा लिया और उससे सारी जानकारी ली। शरद ने भी सारी बातें सुनीं। मनोरमा अब भी मौन थी। किसी से भी उसने कुछ नहीं कहा। महिला चली गई। सब लोग होटल आये।

शरद आपे से बाहर हो रहा था। वह असलियत को समझ गया था। उसने मनोरमा से कहा, "अब समझा, मनोरमा, कि चोर की दाढ़ी में तिनका था। तभी तुम मुझसे झूठ बोलीं। सिविल मैरिज करने और चोरी-चोरी ब्याह करने का मतलब यही था कि तुम किसी पर जाहिर नहीं करना चाहती थीं कि इससे पहले मैं अपने दो पतियों को तलाक दे चुकी हूं। मैं तुम्हें अपने साथ नहीं रक्खूंगा। आगरे भी नहीं ले जाऊँगा। तुम्हारा जहाँ मन हो, जा सकती हो। और चौथा ब्याह भी कर सकती हो। मैं आगरे पहुंचते ही तलाक के लिए अर्जी दे दूंगा।"

मनोरमा चुपचाप सुनती रही। वह कुछ भी नहीं बोली। तब बाबू दीनानाथ जोर से तड़पे। वे लाल-पीले होकर बोले, "अब बैठी क्यों हो, मनोरमा? जाओ, अपना रास्ता नापो। हम लोगों को तुम्हारी जरूरत नहीं है।"

"हाँ बहू! तुम्हें जाना ही पड़ेगा। ऐसी बहू को घर में रखकर हम भी बदनाम हो जायेंगे। जाओ, देर न करो। मैं तुम्हें आगरे न ले जाऊँगी।"

इस तरह राधा ने भी पति का समर्थन किया।

किन्तु मनोरमा खामोश थी। उसकी खामोशी बिलकुल नहीं टूटी। उसने किसी को भी कुछ जवाब नहीं दिया। चुपचाप वहाँ से चल दी। किसी ने भी उसे नहीं रोका। किसी ने भी नहीं टोका। वह जीने की सीढ़ियाँ उतर आई और सड़क पर आकर यह सोचने लगी कि अब उसे किधर जाना चाहिए, उसकी मंजिल क्या है।

× × ×

"हाँ, वकील साहब, मेरे गहने पूरे पाँच लाख के थे। सब बाबू दीनानाथ ने छीन लिये। मेरे पास नगद भी दो लाख रुपया था। वह मेरी सास

राधा ने छीन लिया। पति ने मुझे खूब पीटा। वह मेरी नाक काटने जा रहा था। उसने बेइज्जत करके मुझे घर से निकाल दिया और अब तलाक के लिए प्रार्थना-पत्र दे दिया है। मेरे पास लगभग पांच सौ साड़ियों से कम नहीं थीं। सब शरद ने ले लीं। मैं केवल यही साड़ी पहनकर घर से निकली हूँ। मेरा इस्तगासा दायर कर दीजिये। अगर वे लोग मुझे मेरा सामान नहीं देते हैं, तो दस लाख नगद दे दें।"

वकील सुन रहा था, मनोरमा कह रही थी—"अब मेरे पास जेवर के नाम पर यह हीरे का हार रह गया है। हाथों में नीलम की चूड़ियाँ हैं। मैं इन्हें बेच दूंगी। मुकद्दमा लड़ूंगी।"

वकील ने मनोरमा को पूरा-पूरा आश्वासन दिया। उसने कहा—"मैं तुम्हारा मुकद्दमा लड़ दूंगा, तुम जीत भी जाओगी; मगर मेरी फीस पाँच हजार रुपये से कम नहीं होगी। तुम्हारा केस बहुत सीरियस है।"

"मैं पाँच हजार दूंगी। इसके अलावा जब मुकद्दमा जीत जाऊँगी, तो इतना ही शुकाना दूंगी। आप पूरी ताकत लगा दीजिए, ताकि फैसला मेरे माफिक हो।"

इस तरह मनोरमा ने वकील को अपनी पूरी बात समझा दी। उसे तसल्ली भी मिल गई। उसने दूसरे दिन वकील का पूरे का पूरा मेहनताना जमा कर दिया। फिर वह देहली लौट आई। उसने आगरे में रहना उचित नहीं समझा। उसे वहाँ खतरा था। उसने मुकद्दमा आगरे में दायर किया था।

मनोरमा ने माँ-बाप को कोई सूचना नहीं दी कि उसे ससु[illegible] निकाल दिया गया है। उसने देहली में किराये पर एक फ्लैट [illegible] बढ़िया एम्बैसेडर कार खरीदी। फिर निश्चिन्त होकर रहने लगी।

इधर मनोरमा की यह स्थिति थी और उधर बाबू रामधन पूरी [illegible] निश्चिन्त थे कि उनकी बेटी का ब्याह हो गया है। वह ससुराल में है।

घर में रामधन की जब सीता से बातें होतीं, तो वे यही कहते [illegible] मनोरमा शरद को तलाक नहीं देगी। अपने दो पतियों को तलाक देकर [illegible] नसीहत ले चुकी है।

सीता भी सन्तोष की सांस लेती। वह मन-ही-मन ईश्वर से [illegible]

करती कि भगवान् उसकी बेटी को सुबुद्धि दे। कहीं वह तीसरे पति को भी तलाक न दे दे। बड़े घरों के बच्चे आजादी पाकर बिगड़ जाते हैं। फिर मनमानी करते है और किसी की भी नहीं सुनते।

१७

मुकद्दमा शुरू हो गया। बाबू दीनानाथ, राधा और शरद सबको अदालत में हाजिर होना पड़ता। तलाक मन्जूर हो गया था। अब शरद और मनोरमा के रास्ते अलग-अलग थे।

अदालत में मनोरमा ने भरी गंगाजली उठा ली। उसने गीता की भी सौगन्ध खाई और सास राधा को सरासर बेईमान साबित कर दिया कि उसने उसके पाँच लाख के गहने छीन लिये हैं।

इसी तरह बाबू दीनानाथ को भी मनोरमा ने सबक पढ़ाया। उसने झूठी कसम खाकर यह सिद्ध कर दिया कि मेरा दो लाख रुपया मेरे ससुर ने छीन लिया था।

शरद को भी मनोरमा ने अछूता नहीं छोड़ा। उस पर आरोप यह था कि उसने लगभग पाँच सौ साड़ियाँ मनोरमा की छीन ली हैं, जिनकी कीमत दो लाख से कम नहीं है।

मनोरमा मुकद्दमा जीत गई। बाबू दीनानाथ पर दस लाख की डिग्री हुई। उन्हें अदालत में दस लाख रुपये का चेक मनोरमा को देना पड़ा।

मनोरमा ने एक फाइनेन्स कम्पनी खोली। उसने नौकरी पर सब लड़कियाँ ही रखी थीं। कम्पनी का काम था जमानत लेकर रुपया देना, मोटर ट्रक और मकानों के लिए फाइनेन्स करना। थोड़े ही दिनों में वह चल निकली : अच्छा-खासा मुनाफा होने लगा। विज्ञापन अखबारों में बराबर दिया जा रहा था, ताकि कम्पनी का खूब प्रचार हो।

मनोरमा शाम को नित्य कनॉट प्लेस जाती। वह कनॉट सर्किल में बैठती। सुपर बाजार में घूमती। कभी होटल गेलॉर्ड और कभी मद्रास होटल और ऐसे ही कभी-कभी कॉफी हाउस में चली जाती। ऐसा लगता कि वह कुछ खोज रही है। उसकी आँखें किसी को [illegible]

मनोरमा ने सोचा था कि इस बार शादी करेगी, तो उस पति के साथ इस तरह का एग्रीमेण्ट कर लेगी कि वह पति उसे तलाक नहीं दे सकता। उसे छोड़ नहीं सकता। उसे वही करना होगा, जो मनोरमा बतलायेगी। हाँ, अगर वह चाहे, तो तलाक दे सकती है।

मनोरमा एक दिन होटल गेलॉर्ड में बैठी थी। वहाँ एक युवक देर से बैठा कैंब्रा डान्स देख रहा था। आर्केस्ट्रा बज रहा था। हाल में अच्छी-खासी चहल-पहल थी। सफेद वर्दी पहने वेटर इधर से उधर डोलते। कोई उन्हें टिप देता; कोई उन्हें ऑर्डर। वे मुस्कराते और एक पैर से नाचते।

मनोरमा के सामने मिल्क से भरा गिलास रखा था। वह धीरे-धीरे उसे सिप कर रही थी। जान-बूझकर उसने प्रदर्शन-सा करते हुए गिलास मुँह तक ले जाकर मेज पर छोड़ दिया। सारा दूध फैल गया और गिलास भी फूट गया। सामने बैठे युवक के कपड़ों पर भी दूध के छींटे गिरे।

मनोरमा जल्दी से युवक के पास गई। वह व्यस्त स्वर में कहने लगी—"ओह सारी! क्षमा करना, जनाब! गिलास हाथ से छूट गया और आपके कपड़े भी खराब हो गये।"

युवक रूमाल से कपड़े पोंछ रहा था। उसने हँसकर जवाब दिया—"कोई बात नहीं, यह तो होता ही रहता है।"

मनोरमा ने यह सुना, तो वह भी उसी मेज पर बैठ गई। वेटर आता हुआ दिखलाई दिया, तो उसने उसे पास बुलाया और कहने लगी—"देखो, गिलास फूट गया है। मैं इधर बैठी हूँ। दो कप कॉफी और दो प्लेट कट-लेट ले आओ। बिल में गिलास के भी पैसे चार्ज कर लेना।"

युवक मुस्करा रहा था। उसे मनोरमा का व्यवहार बहुत अच्छा लगा। उसने उससे पूछ लिया, तो मनोरमा ने बतलाया—"मेरी फाइनेन्स कम्पनी पहाड़गंज में है। मैं उसकी प्रोप्राइटर हूँ। मेरे दफ्तर में तीस क्लर्क लड़कियाँ हैं।"

"तब तो बड़ी खुशकिस्मत हैं आप। आपकी फैमली में कौन-कौन हैं?"

"मैं बिलकुल अकेली हूँ।"

"मैं सोचता हूँ कि शायद अभी आपने शादी भी नहीं की होगी?"

"शादी मैं करना नहीं चाहती।"

"क्यों ?"

"मैं पति की गुलाम बनकर नहीं रहना चाहती। शादी करूँगी, तो किसी गरीब से, जो मेरे इशारों पर नाचे। मुझे पति ऐसा चाहिए, जो मेरे मन के माफिक चले। यही कारण है कि मैंने शादी करने का इरादा छोड़ दिया है।"

"इसका मतलब यह हुआ कि आप स्वतन्त्र विचारों की नारी हैं। आपका सोचना सही है, लेकिन मैं इस राय से सहमत नहीं हूँ कि आप आजीवन अविवाहित रहें। शादी आपको करनी पड़ेगी और यह जिन्दगी के लिए बहुत आवश्यक है।"

"अभी तो इरादा नहीं है। आगे भविष्य की बात मैं नहीं जानती। अक्सर ऐसा होता है कि आदमी सोचता कुछ और होता उसके विपरीत है।"

"मेरे भी विचार आप ही जैसे हैं। आपका नाम मनोरमा है और मेरा श्याम। मेरी मोटर-पार्ट्स की दुकान क्वीन्स रोड पर है। मैंने भी शादी नहीं की। मैं भी पत्नी मनचाही चाहता हूँ।"

मनोरमा श्याम के साथ बैठी न जाने कितनी देर तक बातें करती रही। जब दोनों विदा हुए, तो उन्होंने आपस में हाथ मिलाया। दूसरे दिन मिलने का वादा भी हो गया।

तीसरे दिन मनोरमा ने श्याम को निमन्त्रण दिया। उसे अपने फ्लैट पर बुलाया। चौथे दिन वह उसकी मेहमान बनी। दोनों का स्वाभाविक आकर्षण बढ़ता ही जा रहा था। वे एक-दूसरे के करीब आते जा रहे थे। उनके मन मिल गये थे। उनमें कोई भी भेदभाव नहीं रहा।

मनोरमा अब जब कभी चलचित्र देखने जाती, तो उसके साथ श्याम होता। स्टेडियम जाने पर भी वही उसका साथी बनता। इसी तरह सर्कस तथा अन्य किसी भी समारोह में वे लोग अकेले कभी नहीं जाते। दोनों साथ-ही-साथ उसमें शामिल होते।

श्याम की माँ का नाम सुधा था। वह बूढ़ी हो आई थी। उसको विधवा हुए एक लम्बी मुद्दत हो चुकी थी। घर में पैसा खूब था। खुद की कोठी थी। दुकान क्वीन्स रोड पर थी और कोठी नया बाजार में।

सुधा ने जब से मनोरमा को देखा, वह मन-ही-मन सपना देखने लगी थी कि अगर उसका वश चला, तो वह मनोरमा को ही अपनी बहू बनायेगी। इसके लिए उसने कई बार श्याम से बातें कीं। उसका मन टटोला। वह समझ गई कि श्याम मनोरमा के साथ शादी करने के लिए पूरी तरह उत्सुक है।

एक दिन सुधा ने मनोरमा से ब्याह की चर्चा स्वयं चलाई। सारी जानकारी करने के बाद वह धीरे से बोली—"मनोरमा! अगर मैं तुम्हें अपनी बहू बनाना चाहूँ, तो क्या तुम इन्कार कर दोगी ?"

इस पर मनोरमा झेंप गई। उसने नीचे सिर झुका लिया और अपनी साड़ी के एक छोर-कोर को उँगली पर लपेटने लगी।

सुधा को बल मिल गया। वह मुस्कराई। उसने फिर धीरे से कहा—"अगर तुमने मेरे बेटे से ब्याह कर लिया, मनोरमा, तो मैं तुम्हें बेटी की तरह रखूँगी। यह कभी सोचूँगी नहीं कि तुम मेरी बहू हो। मुझे निहायत खुशी होगी। मैं अपने में फूली नहीं समाऊँगी। बोलो मनोरमा, इसके लिए क्या कहती हो ?"

सुधा ने मनोरमा को खींचकर अपने वक्ष से लगा लिया। वह उसके सिर पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरने लगी।

मनोरमा ने भी सुधा के वक्ष में सिर गड़ा दिया। बस फिर उस दिन यह तय हो गया कि मनोरमा की शादी श्याम के साथ होगी।

श्याम ने यह सुना, तो उसकी खुशियों का ठिकाना नहीं रहा। उसका मन-मयूर नाच उठा और वह अपने भाग्य पर गर्व करने लगा कि वह बहुत ही भाग्यशाली है। जो लोग मुकद्दर वाले होते हैं, उन्हें ही मनचाही पत्नी मिलती है।

श्याम की बारात खूब धूम से चली। वह नया बाजार से पहाड़गंज गई। विधिवत् दोनों का ब्याह हुआ।

कुछ दिन बाद मनोरमा ने अपना फ्लैट खाली कर दिया और वह ससुराल में आकर रहने लगी।

× × ×

पहले मनोरमा ने सोचा था कि शादी से पूर्व वह श्याम के साथ एक

अनुबन्ध करेगी जिसमें उसे पूरी तरह अपना पाबन्द बना लेगी। लेकिन फिर उसने यह विचार बदल दिया। उसने श्याम को तौल लिया था कि वह कितने पानी में है।

दिन आगे बढ़ रहे थे। रोज सवेरा मुस्कराता हुआ आता। फिर वह छिप जाता। रात आ जाती। दूसरा प्रभात पुनः आता। वह नया संदेश लाता।

मनोरमा ने सोच लिया था कि वह अपने पिता बाबू रामधन को कोई सूचना नहीं देगी कि वह कहाँ है और क्या कर रही है। शादी के लिए बतलाना तो अपने लिए आफत मोल लेना है। वह अभी कुछ साल तक खामोश ही रहेगी। उसके बाद अपने को प्रगट करेगी, पटना जायेगी। वहाँ का सब कुछ उसका है। उसका दूसरा उत्तराधिकारी नहीं हो सकता।

मनोरमा को दिन ऐसा लगता कि वह बहुत छोटा हो गया है। रात के लिए पता ही नहीं चलता कि कब आई और कब चली गई। उसे सप्ताह भी छोटा लगता। उसके दिन सोने के होते और रातें चाँदी की।

श्याम मनोरमा के हाथों की कठपुतली बन गया था। मनोरमा उससे जब भी किसी काम के लिए कहती, तो वह मुस्करा देता। तनिक भी देर नहीं लगाता। उसका हुक्म फौरन ही बजा लाता।

सुधा की स्थिति यह थी कि वह मनोरमा को अपने पास लिटाती। उसकी पीठ थपथपाती। छोटे बच्चों की तरह उसे लोरी गाकर सुनाती। वह उसे बहू नहीं, अपनी बेटी समझती थी।

मनोरमा को ऐसा लग रहा था कि वह स्वर्ग में आ गई है। यह पति उसके सर्वथा अनुकूल है। इससे तलाक कभी नहीं हो सकता।

× × ×

मनोरमा देहली में रहती, लेकिन उसकी कोशिश हमेशा यही बनी रहती कि कोई भी ऐसा पुरुष या नारी उसे नहीं मिलना चाहिए जो उसे पहचानता हो। उसके सामने उदाहरण मौजूद था। इसीलिए वह फूंक-फूंककर कदम रखती। अगर पहले वह पड़ोसिन होटल में नहीं मिलती तो उसका भेद बाबू दीनानाथ के सामने कभी नहीं खुल सकता था। वह भी

ऊब गई थी। अब उसके बस के बाहर की बात थी कि वह श्याम को तलाक दे और नई शादी करे।

अब मनोरमा की इच्छा यह हो रही थी कि वह जल्दी से जल्दी माँ बन जाए। इसमें उसने अपना हित सोचा था। वह जानती थी कि सन्तान का मोह अंधा होता है। आदमी गरीब हो या अमीर, वह अपनी औलाद के लिए कुछ भी उठा नहीं रखता। जब सन्तान सामने आ जायेगी तो दम्पति उसके मोह में बँध जायेंगे। फिर कोई भी एक दूसरे को तलाक नहीं दे सकता।

मनोरमा शरद के बच्चे की माँ बनने वाली थी, लेकिन उसका वह गर्भ नष्ट हो गया। पटना से जब आगरे आई, तभी गर्भपात हो गया था।

दिनों की गाड़ी अबाध गति से आगे बढ़ी चली जा रही थी। श्याम इतना खुश था कि जिसका नाम नहीं। उसे अपनी पत्नी पर गर्व था। वह दोस्तों से कहता कि मनोरमा अनुपम सुन्दरी है। अगर उसे विश्व-प्रतियोगिता में भाग लेने दिया जाए तो वह प्रथम चुनी जायेगी। विश्व-सुन्दरी कहलायेगी।

श्याम कहीं भी जाता, वह अपने साथ मनोरमा को जरूर ले जाता।

ऐसे ही राधा ने भी नित्य का नियम बना रखा था कि प्रातः तड़के ही तड़के वह बेटे और बहू को साथ लेती। सबसे पहले जाकर जमुना स्नान करती। फिर गौरीशंकर जी के मन्दिर आती। वह बिड़ला मन्दिर भी रोज जाती और भगवान् लक्ष्मीनारायण के दर्शन करती।

इसी तरह सुधा चलचित्र देखने भी लड़के-बहू के साथ जाती। स्टेडियम जाने में भी वह संकोच नहीं करती।

जब इतवार का दिन होता। मनोरमा की फाइनेन्स कम्पनी बन्द रहती, श्याम की मोटर पार्ट्स की दुकान भी। उस दिन सुधा दोनों को लेकर पिकनिक मनाने जाती, कभी-कभी यह लोग इण्डिया गेट जाते। कभी मजनू के टीले की तरफ निकल जाते और पिकनिक वहाँ मनाई जाती।

तीन प्राणियों का यह छोटा-सा परिवार अपने में इतना अधिक सुखी और संतुष्ट था कि एक को दूसरे की चिन्ता थी। सुधा स्नेह की वर्षा करते नहीं थकती। मनोरमा और श्याम श्रद्धा के फूल नित्य चढ़ाते।

अनुवन्ध करेगी जिसमें उसे पूरी तरह अपना पावन्द वना लेगी। लेकिन फिर उसने यह विचार वदल दिया। उसने श्याम को तौल लिया था कि वह कितने पानी में है।

दिन आगे वढ़ रहे थे। रोज सवेरा मुस्कराता हुआ आता। फिर वह छिप जाता। रात आ जाती। दूसरा प्रभात पुनः आता। वह नया संदेश लाता।

मनोरमा ने सोच लिया था कि वह अपने पिता वावू रामधन को कोई सूचना नहीं देगी कि वह कहाँ है और क्या कर रही है। शादी के लिए वतलाना तो अपने लिए आफत मोल लेना है। वह अभी कुछ साल तक खामोश ही रहेगी। उसके वाद अपने को प्रगट करेगी, पटना जायेगी। वहाँ का सव कुछ उसका है। उसका दूसरा उत्तराधिकारी नहीं हो सकता।

मनोरमा को दिन ऐसा लगता कि वह वहुत छोटा हो गया है। रात के लिए पता ही नहीं चलता कि कव आई और कव चली गई। उसे सप्ताह भी छोटा लगता। उसके दिन सोने के होते और रातें चाँदी की।

श्याम मनोरमा के हाथों की कठपुतली वन गया था। मनोरमा उससे जव भी किसी काम के लिए कहती, तो वह मुस्करा देता। तनिक भी देर नहीं लगाता। उसका हुक्म फौरन ही वजा लाता।

सुधा की स्थिति यह थी कि वह मनोरमा को अपने पास लिटाती। उसकी पीठ थपथपाती। छोटे वच्चों की तरह उसे लोरी गाकर सुनाती। वह उसे वहू नहीं, अपनी वेटी समझती थी।

मनोरमा को ऐसा लग रहा था कि वह स्वर्ग में आ गई है। यह पति उसके सर्वथा अनुकूल है। इससे तलाक कभी नहीं हो सकता।

× × ×

मनोरमा देहली में रहती, लेकिन उसकी कोशिश हमेशा यही वनी रहती कि कोई भी ऐसा पुरुष या नारी उसे नहीं मिलना चाहिए जो उसे पहचानता हो। उसके सामने उदाहरण मौजूद था। इसीलिए वह फूंक-फूंककर कदम रखती। अगर पहले वह पड़ोसिन होटल में नहीं मिलती तो उसका भेद वावू दीनानाथ के सामने कभी नहीं खुल सकता था। वह भी

ऊब गई थी। अब उसके वस के बाहर की वात थी कि वह श्याम को तलाक़ दे और नई शादी करे।

अब मनोरमा की इच्छा यह हो रही थी कि वह जल्दी से जल्दी माँ वन जाए। इसमें उसने अपना हित सोचा था। वह जानती थी कि सन्तान का मोह अंधा होता है। आदमी गरीब हो या अमीर, वह अपनी औलाद के लिए कुछ भी उठा नहीं रखता। जब सन्तान सामने आ जायेगी तो दम्पति उसके मोह में वँध जायेंगे। फिर कोई भी एक दूसरे को तलाक नहीं दे सकता।

मनोरमा शरद के बच्चे की माँ बनने वाली थी, लेकिन उसका वह गर्भ नष्ट हो गया। पटना से जब आगरे आई, तभी गर्भपात हो गया था।

दिनों की गाड़ी अबाध गति से आगे बढ़ी चली जा रही थी। श्याम इतना खुश था कि जिसका नाम नहीं। उसे अपनी पत्नी पर गर्व था। वह दोस्तों से कहता कि मनोरमा अनुपम सुन्दरी है। अगर उसे विश्व-प्रतियोगिता में भाग लेने दिया जाए तो वह प्रथम चुनी जायेगी। विश्व-सुन्दरी कहलायेगी।

श्याम कहीं भी जाता, वह अपने साथ मनोरमा को जरूर ले जाता।

ऐसे ही राधा ने भी नित्य का नियम बना रखा था कि प्रातः तड़के ही तड़के वह बेटे और बहू को साथ लेती। सबसे पहले जाकर जमुना स्नान करती। फिर गौरीशंकर जी के मन्दिर आती। वह बिड़ला मन्दिर भी रोज जाती और भगवान् लक्ष्मीनारायण के दर्शन करती।

इसी तरह सुधा चलचित्र देखने भी लड़के-बहू के साथ जाती। स्टेडियम जाने में भी वह संकोच नहीं करती।

जब इतवार का दिन होता। मनोरमा की फाइनेन्स कम्पनी बन्द रहती, श्याम की मोटर पार्ट्स की दुकान भी। उस दिन सुधा दोनों को लेकर पिकनिक मनाने जाती, कभी-कभी यह लोग इण्डिया गेट जाते। कभी मजनू के टीले की तरफ निकल जाते और पिकनिक वहाँ मनाई जाती।

तीन प्राणियों का यह छोटा-सा परिवार अपने में इतना अधिक सुखी और संतुष्ट था कि एक को दूसरे की चिन्ता थी। सुधा स्नेह की बरसात करते नहीं थकती। मनोरमा और श्याम श्रद्धा के फूल नित्य चढ़ाते।

पड़ोसी सुधा के भाग्य को सराहते। प्रत्येक का यही कहना था कि भगवान् सुधा जैसी किस्मत सबको दे। ईश्वर ने दौलत दी है। फूल जैसा बेटा दिया। बहू भी लाखों में एक आई। इस तरह सब कुछ मिलाकर सुधा का घर स्वर्ग बन गया है।

मनोरमा जितनी देर घर से बाहर रहती, वह सशंकित ही बनी रहती कि कहीं कोई उसे टोक न दे। कोई ऐसा चेहरा सामने न आ जाए, जो सास और पति के आगे उसे टोक दे।

सुधा बहू को तनिक भी उदास देखती, तो चिन्ता के सागर में डूब जाती और व्यस्त स्वर में पूछने लगती कि क्या हुआ, बहू, उदास क्यों हो? वह उसके स्वास्थ्य का भी बहुत ज्यादा खयाल रखती।

एक दिन परिवार के तीनों सदस्य लालकिले में सेड एण्ड लाइट का प्रोग्राम देखने गए। वे दीवाने आम के बगल में कुर्सियों पर बैठे प्रोग्राम देख रहे थे। तभी एक युवती ने मनोरमा के कन्धे पर हाथ रख दिया। वह बगल में ही बैठी थी। उसने उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया और फिर जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में कहने लगी—"मैं बहुत देर से पहचान कर रही थी कि तुम कोई और तो नहीं हो। अब फ्लैट कहाँ लिया है? तुम्हारे पति अनूप बाबू कहाँ हैं?"

मनोरमा ने उधर देखा भी नहीं। वह सामने दृष्टि टिकाये थी। युवती प्रश्न पर प्रश्न करती। वह उसे परेशान कर रही थी।

जब मनोरमा ने देखा कि उससे जान बचाना मुश्किल हो रहा है, तो वह जल्दी से उठकर खड़ी हो गई और बगल में बैठी सास से बोली—"माँ, तुम इधर आ जाओ। इस कुर्सी में बहुत खटमल हैं, मुझे बैठने नहीं देते, काटते हैं।"

सुधा को हँसी आ गई। उसने बहू का मुँह चूम लिया। उसे अपनी कुर्सी पर बैठाया। खुद उसकी कुर्सी पर बैठ गई।

प्रोग्राम चल रहा था। आवाज आ रही थी—"माँवदौलत होशियार! जिल्ले इलाही शहनशाह! जलालुद्दीन अकबर दरबार में तशरीफ ला रहे हैं। माँवदौलत होशियार।"

सभी दर्शक एकचित्त होकर आयोजन देख रहे थे। जो युवती मनोरमा

को पहचानती थी, उसने सुधा को देखा। उसका ध्यान अपनी ओर खींच धीरे से पूछ लिया—"यह मनोरमा आपकी बेटी है या बहू ?"

"बहू।"

"अच्छा तो अनूप बाबू आपके ही पुत्र हैं ?"

"कौन अनूप ?"

"मनोरमा के पति का नाम अनूप है।"

"वह कोई दूसरी मनोरमा होगी। प्रोग्राम देखने दो। गड़बड़ मत करो।"

वह युवती कुछ खिसिया गई। आगे उसकी बोलने की हिम्मत नहीं पड़ी।

मनोरमा ने सारी बातें सुनी थीं। उसका हृदय तेजी के साथ धड़कने लगा। उसमें इतनी ज्यादा दहशत समा गई कि जिसका नाम नहीं। उसे जल्दी होने लगी और वह सोचने लगी कि किसी तरह जल्दी-से-जल्दी यह प्रोग्राम खत्म हो ताकि वह घर जाए।

उस दिन ईश्वर और भाग्य दोनों ने मनोरमा का साथ दिया। उसका भेद खुलते-खुलते रह गया और वह सही-सलामत घर लौट आई। मगर उसकी चिन्ता दूर नहीं हुई। मन में भय समा गया था। उसने सोच लिया था कि भविष्य में जब भी ऐसा अवसर आ जाएगा, तो वह फौरन ही वहाँ से चल देगी। पूछने वाले को कोई भी जवाब नहीं देगी।

मनोरमा मन-ही-मन ईश्वर को धन्यवाद दे रही थी। उसे यही संतोष था कि सास ने घर आकर उससे कुछ पूछा नहीं।

१८

वसन्त जब अपने साथ नीलिमा को लेकर पटना आया और बाबू ईश्वरलाल के घर पहुँचा, तो वे खुशी से फूले नहीं समाये। फौरन ही कर्नल बंसीलाल को टेलीफोन किया। तुलसी भी पति के साथ आई। वसन्त से यह पूछा जाने लगा कि वह कहाँ से आया और कहाँ रहता है। उसने इनाम

पाने का काम किया है। उसे पच्चीस हजार रुपया इनाम का दिया जायेगा।

इस पर वसन्त मुस्कराया और उसने सारी की सारी वास्तविकता सबको बतला दी। उसने कहा—"नीलिमा मेरी धर्म-बहन है। मैं इनाम के नाम पर एक पैसा भी नहीं लूँगा। जो कुछ मुझसे बन सकेगा, वह शादी में बहन को भेंट में दूँगा।"

नीलिमा ने भी सब लोगों के सामने इस बात को स्वीकार किया कि वसन्त उसका धर्म-भाई है। उसकी माँ मालती उसकी धर्म-माँ है। दोनों माँ-बेटा ने उसके साथ अपना जैसा व्यवहार किया है। उनको पैसे का लालच नहीं है। वे सच्चे इन्सान हैं। उनमें पूरी-पूरी मानवता है।

कर्नल बंसीलाल और तुलसी खुशी-खुशी पुत्री को घर लाए। उनके साथ वसन्त भी आया था। उस दिन उनके आँगन में शहनाई बजी। घर खूब सजाया गया। भगवान् की कथा सुनी गई। लोगों को प्रसाद बाँटा गया।

दूसरे दिन कंगलों को भोजन मिला। यमुना तट पर जाकर तुलसी ने खूब खैरात बाँटी।

वसन्त को कर्नल बंसीलाल ने देहली नहीं जाने दिया। उनका कहना था कि जब तक नीलिमा का ब्याह नहीं हो जाता है, वसन्त पटना में ही रहेगा। वह घर नहीं जाएगा।

तुलसी ने नीलिमा को समझाया। उससे जोर देकर कहा कि वह मालती को तार कर दे, ताकि मालती भी पटना आ जायें। उसका आना बहुत जरूरी है क्योंकि वह उसकी धर्म-माँ है।

इस पर मालती को तार भेज दिया गया। उसने जब तार पढ़वाया, तो चौंकी और मन-ही-मन सोचने लगी कि आखिर नीलिमा ने उसे पटना क्यों बुलाया है।

तार में लिखा था कि तार पाते ही फौरन पटना चली आओ, माँ! इसके अलावा और कुछ भी स्पष्ट नहीं था कि तार क्यों दिया गया है। इसीलिए मालती बेचैन थी और वह कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रही थी कि उसे क्या करना चाहिए।

पहले मालती ने सोचा कि उसी दिन पटना के लिए रवाना हो जाए,

लेकिन फिर वह सोचकर ही रह गई। दूसरे दिन वसन्त का तार मिला। जिसमें लिखा था कि माँ, तुम पटना आ जाओ। तुम्हें नीलिमा के माँ-बाप ने जोर देकर बुलाया है।

अब परिस्थिति पहले से अधिक स्पष्ट हो गई थी। इसीलिए मालती जाने की तैयारी करने लगी। उसने दूसरे दिन पटना जाने की योजना बना ली।

जब मालती तैयार होकर घर से जा रही थी, ठीक तभी तीसरा तार उसके हाथ में आया, जिसमें लिखा था कि हम लोग तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। तुम फौरन ही पटना आ जाओ, माँ। तुम्हारा आना बहुत जरूरी है।

तार भेजने वाली नीलिमा थी। मालती मुस्करा दी। वह मन-ही-मन उसे आशीर्वाद देने लगी।

मालती जब ट्रेन पर सवार हुई, तो उसका हृदय खुशी के कारण बल्लियों उछल रहा था। उसका मन कहता कि राह इतनी जल्दी तय हो जाए कि मैं पलक मारते ही नीलिमा के पास पहुँच जाऊँ। मेरी बेटी ने मुझे याद किया है। मुझे जरूर जाना चाहिए।

मालती का मन हवा में उड़ रहा था। प्रसन्नता उसमें समाती नहीं, फूटी पड़ रही थी। वह एक क्षण के लिए पलकें बंद कर लेती, तो उसे लगने लगता कि नीलिमा सामने खड़ी है। वसन्त मुस्करा रहा है। दोनों में प्यार की लड़ाई हो रही है।

ट्रेन आगे बढ़ रही थी। मालती को न भूख लगी और न प्यास। वह अकेले में ही मग्न थी। उसके होंठों पर मुस्कराहट थी।

सफर पूरे बीस घण्टे का था। जब हावड़ा-देहली एक्सप्रेस पटना स्टेशन पर आकर रुकी, तो मालती उतरकर प्लेटफॉर्म पर आई। कुली ने सामान नीचे उतारा। उसके पास कर्नल बंसीलाल के घर का पता था। वह सीधी वहाँ पहुँची।

मालती के आते ही बंसीलाल के घर में खुशियों का दौर चलने लगा। जिसे देखो, वही हँसता हुआ नजर आता।

तुलसी ने मालती को गले से लगा लिया। वह खुशी के आँसू बहाती

हुई गद्गद कण्ठ से बोली—"देखो, नीलिमा की माँ तुम हो, मालती बहन। तुम्हें इसीलिए पटना बुलाया गया है कि सबसे पहले कन्यादान तुम लोगी। उसके बाद हम लोगों का नम्बर आयेगा। मैं नीलिमा को दौलत दे सकती हूँ, लेकिन तुम्हारे जैसा स्नेह और प्यार नहीं।"

मालती भी रोने लगी। वह अपनत्व की भावना से ओत-प्रोत हो आई। उसने रुँधे गले से तुलसी को जवाब दिया। वह बोली—"मैं जानती थी कि मुझे इसीलिए बुलाया गया है, लेकिन मुझे एक बात का बहुत ज्यादा अफसोस है, बहन।"

"क्या ?"

"मेरी बेटी का ब्याह था। मुझे केवल सूचना देनी चाहिए थी। मैं नाक के बल दौड़ी चली आती। क्योंकि मुझे कन्यादान लेना था। मुझे तार दिया गया और उसमें यह भी नहीं लिखा गया कि मेरी बेटी दुल्हन बनने जा रही है।"

इस पर तुलसी हँस पड़ी और हँसते-हँसते बोली—"अबअपना कर्त्तव्य पूरा कर लो। जो गलती हम लोगों से हो गई है, उसके लिए मैं क्षमा चाहती हूँ।"

कर्नल बंसीलाल पास ही खड़े थे। उन्हें जोर की हँसी आ गई। उन्होंने कुछ कहने के लिए अभी मुँह खोला ही था कि तब तक मालती बोल उठी—"क्षमा तो मुझे ही माँगनी चाहिए। गलती मेरी है, क्योंकि मैं अपनी बेटी के ब्याह पर बुलाने पर आई। मेरा फर्ज था कि मैं बिना बुलाए आती।"

मालती की इस बात ने तुलसी और कर्नल बंसीलाल को ही नहीं हँसाया, बल्कि बसन्त और नीलिमा भी जोर से खिलखिलाकर हँस पड़े।

खुशियों का दौर ऐसा चला, ऐसा चला कि सारा-का-सारा वातावरण अपने में मुखरित हो उठा।

× × ×

बाबू रामधन को जब इस बात का पता चला कि नीलिमा आ गई है, तो वे सीता से कहने लगे—"कर्नल बंसीलाल की बेटी आ गई है। उसका अनूप के साथ ब्याह हो रहा है। मैं तो उन लोगों का दुश्मन हो गया।

शायद निमन्त्रण भी नहीं दिया जायेगा।"

"तुम यह कहते हो और मैंने सोच लिया है कि शादी पर न तो नीलिमा के घर जाऊँगी और न बाबू ईश्वरलाल का ही निमन्त्रण स्वीकार करूँगी। मेरा दोनों में खर्चा है। हम लोगों को दोनों तरफ से शामिल होना पड़ता। और भी कुछ न देते तो अनूप को एक अंगूठी, जिस पर हीरा जड़ा होता, जरूर देनी पड़ती।"

रामधन पत्नी के समर्थन में फौरन ही बोल उठे—"नीलिमा को हार भी पहनाना पड़ता। अब कोई व्यवहार नहीं। मेरी बेटी मनोरमा की इन लोगों ने खूब बुराई की। वह सब जगह बदनाम हो गई कि दो तलाक दे कर उसने तीसरा ब्याह किया है।

पति को जवाब देने के लिए अभी सीता ने मुँह खोला ही था, तब तक कालबैल जोर से घनघनाकर बज उठी। एक नौकर बाहर गया। वह हाथ में लिफाफा लेकर लौट आया। चिट्ठी आगरे से आई थी। भेजने वाले बाबू दीनानाथ थे।

सीता ने लिफाफा खोला। वह प्रसन्नता से खिल उठी और मग्न हो कर पति से कहने लगी—"यह चिट्ठी मेरे समधी दीनानाथ की है। पढ़ो, देखो, क्या लिखा है। मनोरमा तो हम लोगों को भूल ही गई। एक चिट्ठी भी नहीं लिखती।"

बाबू रामधन पढ़ने लगे। पत्र में लिखा था—"मुझे बहुत दुःख के साथ लिखना पढ़ रहा है कि आपकी बेटी मनोरमा ने मेरे बेटे को भी तलाक दे दिया और चौथी शादी कर ली। आजकल वह देहली में है। उसने फाइनेन्स कम्पनी खोल रक्खी है। उसने मुझ पर झूठा दावा किया। मुझे दस लाख रुपया डिग्री में देना पड़ा। आप खामोश रहे। मैंने भी आपको कोई पत्र नहीं लिखा, लेकिन मुझे यह बिलकुल सहन नहीं है, जो मनोरमा ने चौथा ब्याह कर लिया।"

सीता चिट्ठी सुन रही थी। उसे ऐसा लगने लगा कि अगर मनोरमा सामने होती, तो वह उसके गोली मार देती।

रामधन का भी बुरा हाल था। वे गुस्से से काँप रहे थे। तनिक खाँस-कर उन्होंने गला साफ किया और आगे फिर पढ़ने लगे—"दरद ऐसा

नादान नहीं था। वह दूध-पीता बच्चा नहीं था। अगर उसे मालूम हो जाता कि उससे पहले मनोरमा दो पतियों को तलाक दे चुकी है, तो वह शादी कभी नहीं करता। तुम्हारी बेटी चलती-पुर्जा थी। उसने मेरे भोले-भाले लड़के को ठग लिया। चिट्ठी आपको इस लिए लिख दी है कि आप सावधान हो जाएँ। शरद बहुत गुस्से में है। उसका कहना है कि वह मनोरमा और उसके नए पति दोनों की ही हत्या कर देगा। खुद भी फांसी पर चढ़ जाएगा। इसका उसे बिलकुल डर नहीं है। मेरा फर्ज था। मैंने आपकी आँखें खोल दीं। बात कानों में डाल दी। अब आप जानें और आपका काम। अगर कोई नेक-बद बात हो गई तो मैं जिम्मेदार नहीं कहलाऊँगा।"

चिट्ठी रामधन ने एक तरफ रख दी। फिर सीता से बोले—"मनोरमा ने यह क्या किया! उसने हम लोगों को खबर भी नहीं दी।"

सीता घबरा गई थी। वह जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में पति से कहने लगी—"मेरी बात मानो, तुम आज ही आगरे के लिए रवाना हो जाओ। बाबू दीनानाथ से मिलो। दुनियादारी के नाते उनकी खुशामद कर लो। हाथ जोड़ लो। बाकी तुम्हें यह पता लगाना है कि देहली में मनोरमा आजकल कहाँ रह रही है। उसका पता क्या है।"

पत्नी की बातें बाबू रामधन को बहुत पसंद आई। वे तत्क्षण ही कहने लगे—"मैं अकेला नहीं जाऊँगा। तुम भी साथ चलो। मनोरमा की माँ, एक से दो भले होते हैं। यह बुजुर्गों ने कहा है।"

"अच्छा, मैं भी चलूंगी और देखो, एक काम और करना है।"

"क्या?"

"किसी को भी यह बात मालूम नहीं होनी चाहिए कि तुम्हारे पास दीनानाथ की चिट्ठी आई है।"

"मैं ऐसा पागल नहीं हूँ, मनोरमा की माँ।"

दम्पति जाने की तैयारी करने लगे। उनकी बातों का अन्त ही नहीं हो रहा था। जब वे आगरे के लिए रवाना हुए, तो बाबू रामधन का अन्तःकरण कह रहा था कि ईश्वर ऐसी लड़की दुश्मन को भी न दे। ऐसी औलाद से तो आदमी निःसंतान ही अच्छा था।

और सीता का मन दुःख रहा था। आत्मा कलप रही थी। वह अपने

में फूट रही थी और भीतर-ही-भीतर कह रही थी कि मनोरमा ने एक गलती और की। पता नहीं, यह लड़की क्या चाहती है और क्या होने वाला है।"

१९

बाबू दीनानाथ ने जब रामधन को देखा, तो उन्होंने उनके सामने शिकायतों का भण्डार खोल दिया। उनके पास शिकायतें ही शिकायतें थीं।

रामधन शर्मिंदा हो गए। उनसे कुछ भी बोलते नहीं बना। वे खुशामद करते रहे। हाथ जोड़ते रहे। उनकी सारी बातों का मतलब केवल एक ही था कि उन्हें मनोरमा का पता पूछना था।

राधा ने सीता को बतलाया कि उसने मनोरमा को बेटी की तरह रक्खा था। उसे नहीं मालूम था कि सोने के घड़े में जहर भरा है। सीता ने चुपचाप राधा की बातें सुन लीं। उसे कुछ भी जवाब नहीं दिया।

शरद ने भी सास-ससुर को खूब धिक्कारा। उसने धमकी दी। उसने वही बात कही कि मनोरमा का खून कर देगा। उसे अपनी जान की तनिक भी परवाह नहीं है।

किसी तरह रामधन को मनोरमा का पता मालूम हो पाया। दम्पति आगरे से देहली आए। वे सीधे नया बाजार पहुँचे, जहाँ श्याम का घर था।

सुधा ने दम्पति को देखा, तो मनोरमा से पूछने लगी कि यह लोग कौन हैं।

मनोरमा को सपने में भी यह आशा नहीं थी कि उसके माँ-बाप वहाँ आ जायेंगे। श्याम भी घर में मौजूद था। वह सन्नाटे में आ गया।

रामधन ने मनोरमा को टोका। वे बोले—"मनोरमा! मैं तुमसे बहुत ज्यादा नाराज हूँ। जी चाहता है कि दोनों हाथों से तुम्हारा गला घोंट दूँ।"

मनोरमा को क्रोध आ गया। वह बाप को मुँह-तोड़ जवाब देने ही वाली थी। तब तक माँ सीता पास आ गई और उसका कन्धा पकड़,

झकझोरती हुई तेज गले से बोली—"क्यों बेटी साहब ! तुमने हम लोगों को परेशान क्यों कर रखा है ? मैं तुम्हारा खून पी लूंगी, मनोरमा । मैंने तुम्हें पैदा किया है । मैं तुम्हारी माँ हूँ ।"

अभी सीता की बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि मनोरमा ने खींचकर उसके गाल पर एक थप्पड़ दिया और फिर सास की ओर उन्मुख हो, जल्दी-जल्दी क्रोध-भरे स्वर में व्यस्त होकर कहने लगी—"माँ, मैं इस औरत को नहीं पहचानती। वह जबरदस्ती घर में घुस आई है। नौकरों को बुलवाओ। इसे धक्के देकर बाहर निकाल दें ।"

सुधा ने बहू की बातें सुनीं, तो उसे भी गुस्सा आ गया । उसने फौरन ही आवाज दी । दो नौकर आ गए। उसने उन्हें आदेश दिया कि वे दोनों इन अजनबी लोगों को घर से निकाल दें ।

रामधन को यह बरदाश्त नहीं हुआ । वे आवेश से काँपते हुए आगे बढ़े । उन्होंने मनोरमा के मुँह पर लगातार कई थप्पड़ दिए और क्रोध से फूत्कार करते हुए बोले—"नालायक लड़की, अपने माँ-बाप को भी भूल गई। तू इतनी गिर गई। इतनी अधिक पतित हो गई। तेरा धर्म और ईमान कुछ नहीं रहा। तुझे शर्म नहीं आई, माँ के मुँह पर तूने थप्पड़ मारा। तू बेटी नहीं। मेरी दुश्मन है, सबसे पहले तूने दिवाकर को तलाक दी । तब मैं खामोश रहा। मैंने कुछ भी नहीं कहा। उसके बाद अनूप को भी तूने धोखा दिया। वह तेरा दूसरा पति था । अनूप को तलाक देकर तूने शरद से ब्याह किया। और अब यह श्याम चौथा है। धिक्कार है तेरी जिन्दगी का ! चुल्लू-भर पानी में डूब मर। मुझे ऐसी औलाद नहीं चाहिए ।"

रामधन की इन बातों ने सुधा को चौंकाया। श्याम भी भौंचक्का-सा रह गया।

लेकिन मनोरमा तनिक भी विचलित नहीं हुई । वह श्याम से कहने लगी—"मेरा मुंह क्या देख रहे हो ? यह ठग लोग घर में घुस आए हैं। कोई बाप बन रहा है और कोई माँ। वह मेरे कोई नहीं है। मैं इन्हें बिल्कुल नहीं पहचानती। इनकी खूब पिटाई करो और घर से निकाल दो।"

श्याम को एकदम गुस्सा आ गया । वह रामधन से बोला—"शराफत इसी में है कि आप लोग यहाँ से चले जाइए। नहीं तो तुम्हारी बेइज्जती

हो जाएगी। नौकर तुम्हें पीटेंगे और धक्के देकर फाटक से बाहर निकाल देंगे।"

"अरे श्याम बाबू, तुम इस लड़की की बातों में पड़े हो! यह मेरी औलाद है, लेकिन मुझे इससे नफरत हो गई। यह···।"

अभी बाबू रामधन इतना ही कह पाये थे कि उनके गाल पर तड़ाक से श्याम का एक भरपूर थप्पड़ पड़ा। वे बुरी तरह तिलमिला गए। उन्होंने गाल पर हाथ रख लिया। तभी उनके कानों में श्याम की यह आवाज पड़ी—"अरे सोनू। अरे दीपू। तुम लोग पूरे काठ के उल्लू हो। यह लोग कोई बदमाश हैं। न जाने क्या-क्या बक रहे हैं! इन्हें खींचकर बाहर निकाल आओ।"

यह सुनते ही नौकर रामधन और सीता को धकेलते हुए बाहर ले चले। दम्पति धक्के खाते चले जा रहे थे। वे कह रहे थे कि मनोरमा हमारी बेटी है। हम उसके माँ-बाप हैं। हम पटना में रहते हैं। हम वहाँ से आए हैं।

और मनोरमा हँसती हुई सास से कह रही थी—"माँ, देखो, बुढ़िया कैसा नाटक खेल रही है! कैसी माँ बनकर आई थी! तभी तो मैंने उसके गाल पर एक थप्पड़ दिया। वह बुड्ढा बाप बन रहा है और कहता है कि मैं पटना से आया हूँ। अरे इन लोगों को तो पुलिस में देना चाहिए था। आज-कल ऐसी ठग-विद्या बहुत चल रही है। जब रामधन और सीता को फाटक से बाहर निकल दिया गया, तो श्याम ने संतोष की साँस ली। वह मनोरमा से कहने लगा, वाकई में यह लोग अजीब थे, मेरी समझ में नहीं आया।"

सुधा पास ही खड़ी थी। वह अपनी बहू मनोरमा की बलाएँ लेने लगी और गद्‌गद कण्ठ से बोली—"मैं भी चौंक गई कि मेरी बहू के मैके में कोई भी नहीं है; फिर यह माँ-बाप कहाँ से आ गए। दोनों बहुरूपिया थे। बहुत बढ़िया कहानी गढ़कर लाए थे।"

इस तरह देर तक घर में यही चर्चा चलती रही। मनोरमा को सबसे बड़ा सन्तोष यह था कि आपत्ति आई और आकर चली गई। वह मन ही मन ईश्वर को धन्यवाद देती थी। उसका शुक्रिया अदा कर रही थी।

× × ×

बाबू रामधन और सीता अब भी गुस्से से पागल हो रहे थे। वे यह सोचकर देहली नहीं आए थे कि मनोरमा उनकी बेइज्जती करेगी। उन्हें जलील करके अपने घर से निकालेगी। बेटी ने माँ पर हाथ छोड़ा। दामाद ने ससुर को पीटा। यही कलियुग है और यही है दुर्भाग्य। दम्पति को बहुत बुरा लगा। वे आपे से बाहर हो रहे थे।

जब किसी तरह भी दम्पति के चित्त को शान्ति नहीं मिली, तो वे यमुना तट पर आए। यमुना-स्नान किया। फिर वहीं घाट के बुर्ज पर बैठ गए। दोनों में परामर्श हुआ। देर तक विचार-विमर्श होता रहा।

सीता ने जोर दिया। वह पति से बोली—"अब मुझे भी मनोरमा का तनिक मोह नहीं रह गया। वह इतनी बदल जाएगी, यह मैंने सपने में भी नहीं सोचा था। उसने गलतियों पर गलतियाँ की। मैं हमेशा माफ करती चली आई। आज उसने मेरे थप्पड़ मारा। यह मेरी जिन्दा ही मौत हो गई। मेरी बात मानो, घर लौट चलो। अब यहाँ रुकने से कोई फायदा नहीं है।"

बाबू रामधन ने पत्नी की यह बातें सुनीं, तो उन्होंने एक लम्बी साँस ली। वे गहरे सोच में डूब गए और निराशा-भरे स्वर में धीरे-धीरे कहने लगे—"तुम ठीक कहती हो, मनोरमा की माँ। घर तो चलना ही पड़ेगा। और फिर हम लोग जायेंगे कहाँ मुझे दुःख इस बात का है कि श्याम ने असलियत को नहीं समझा। उसने मेरा अपमान किया। मेरी तकदीर में यह भी बदा था! बस यह सोचकर सन्तोष कर लिया कि कोई बात नहीं। घर चलो और हमेशा-हमेशा के लिए यह भूल जाओ।"

"क्या?"

"यही कि मनोरमा हमारी बेटी है। वह तो पिछले जन्म की कोई दुश्मन है।"

"मैंने यही समझ लिया है। पहले तुम कहते थे और अब मैं चाहती हूँ, घर चलकर अपनी चल और अचल सम्पत्ति किसी धार्मिक संस्था को दान कर दो। हमारा कोई नहीं है। वसीयतनामा उसी संस्था के नाम लिख दो, ताकि मनोरमा का कोई हक न रहे और उसे एक तिनका भी न मिले।"

"यही होगा, मनोरमा की माँ! अब मैं यही करूँगा।"

"तुम बार-बार उसका नाम लेते हो और मेरे बदन में आग-सी लग जाती है। मैं बाँझ हूँ। मैंने किसी बेटी को जन्म नहीं दिया। मैं अब उसका नाम भी सुनना नहीं चाहती। मेरे लिए मनोरमा मर गई।"

उसी दिन दोनों पटना के लिए चल दिये। वे कई दिन तक उदासी में डूबे रहे। उन्होंने किसी को भी नहीं बतलाया कि वे कहाँ गये थे और उनके साथ क्या हुआ।

इधर रामधन की यह स्थिति थी और उधर दिवाकर रोज अनूप से मिलने आता। एक दिन बाबू ईश्वरलाल और लीला दम्पति उससे कहने लगे कि अब उसे भी व्याह कर लेना चाहिए।

इस पर दिवाकर ने जवाब दिया। वह बोला, "मैंने शादी के लिए कभी सोचा ही नहीं। जब मनोरमा से मेरा व्याह हुआ था, तो मैं जानता था कि अब जिन्दगी की राह मैं आसानी से तय कर सकूँगा। मेरे लिए दुनिया का वह आठवाँ आश्चर्य था, जब मनोरमा ने मुझे तलाक दिया। बस उसी दिन से मुझे नारी जाति से घृणा हो गई है। अब मैं शादी कभी नहीं करूँगा। मैंने संकल्प कर लिया है।"

"जिन्दगी बहुत बड़ी है, दिवाकर बेटा! यह सफर बिना साथी के तय नहीं हो पाता और अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है। मनोरमा को भूल जाओ। एक मछली पूरे तालाब का पानी गन्दा कर देती है।"

बाबू ईश्वरलाल ने यह बातें सहानुभूति और स्नेह के वशीभूत होकर कही थी। सुनते ही दिवाकर श्रद्धाविभोर हो गया। उसने एक दीर्घ उच्छ्वास की और फिर गम्भीर स्वर में कहने लगा, "मेरे मन में बदले की भावना बलवती होकर भर रही है। मैं मर्द हूँ और मर्द को औरत से कभी बदला नहीं लेना चाहिए, लेकिन मजबूर हूँ। सोचता हूँ और सोचकर रह जाता हूँ।"

"क्या?"

"कि मनोरमा की हत्या कर दूँ। सारा झगड़ा अपने आप ही खत्म हो जायेगा।"

बाबू ईश्वरलाल ने यह सुना, तो उन्होंने दिवाकर के सिर पर हाथ रख दिया और स्नेह-भरे स्वर में जल्दी-जल्दी व्यस्त होकर कहने लगे, "ऐसा

मत सोचो। ऐसा मत करो। जो दुश्मन को माफ कर देता है, दुनिया में सबसे बड़ा वही है। मनोरमा को उसके हाल पर छोड़ दो। वह आग खा रही है। एक दिन अंगारे उगलेगी।"

लीला ने भी दिवाकर को बहुत समझाया। उसे पूरी-पूरी सांत्वना दी। दम्पति का कहना यही था कि दिवाकर को अपनी जिद्द छोड़ देनी चाहिए। व्यर्थ के झंझट में क्या रक्खा है। वह शादी करे। अपनी नई दुनिया बसाये और मनोरमा को हमेशा-हमेशा के लिए भूल जाये।

लेकिन दिवाकर की समझ में कुछ भी नहीं आया। उसके मन में प्रतिशोध की आग बराबर जलती ही रही।

वह उठकर अनूप के कमरे में चला आया। तब टेलीफोन पर अनूप की बातें नीलिमा से हो रही थी।

दिवाकर को देखते ही अनूप ने टेलीफोन रख दिया। हँसकर उसका स्वागत किया और अपने पास सोफे पर बैठा लिया।

पहले इधर-उधर की बातें होती रहीं। फिर उसी बातचीत के सिल-सिले में अनूप ने हँसकर धीरे से पूछ लिया। वह बोला, "अच्छा, मुझे यह बतला दो, दिवाकर, कि तुम मुझे शादी पर तोहफा क्या दोगे?"

दिवाकर मुस्कराया। उसकी मुस्कराहट होंठों के बीच कैद होकर रह गई। उसने मित्र के चेहरे पर दृष्टि टिकाई और फिर धीरे से बोला, "भेंट में जो कुछ भी दिया जाता है, वह पहले नहीं बतलाया जाता। इसलिए तुम्हारी बात का कुछ भी जवाब नहीं दूँगा। हाँ, कोई दूसरा सवाल करोगे, उसका उत्तर अवश्य मिलेगा।"

दिवाकर की यह बातें सुनकर अनूप जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ा। और हँसते-हँसते बोला, "अब मैं दूसरा सवाल नहीं करूँगा, क्योंकि बहस में तुमसे जीत नहीं सकता।"

दोनों मित्रों में कुछ देर तक मनोरंजन होता रहा। फिर जिक्र मन्सूरी का चल पड़ा। उसी में मनोरमा का भी प्रसंग आया।

मनोरमा का नाम सुनते ही दिवाकर का चेहरा गम्भीर हो गया। उसने ऊबकर एक लम्बी साँस ली और अनूप से कहने लगा, "अब उस तूफान की याद मत दिलाओ, अनूप बाबू, जिसने मुझे पूरी तरह बर्बाद

कर दिया। वह औरत नहीं, एक चिनगारी थी। मैं ऐसा जानता, तो उससे पहले ही शोला बन जाता। मगर मैं बाजी हार गया, जीत उसकी हुई। मेरे सामने यह प्रसंग मत चलाया करो, अनूप। मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ।"

अब अनूप के चेहरे की हँसी भी विलीन हो गई। उसे भी वे दिन याद आने लगे, जब मनोरमा का जादू उस पर चल रहा था। उसे भी अपनी मजबूरी याद आई और उसके मुँह से एक दीर्घ उच्छ्वास निकल गई।

इस तरह मनोरमा के नाम से दोनों दोस्त खिन्न हो गये। उन्हें उसके नाम से चिढ़ थी। दोनों ही दूध के जले थे। इसीलिए मट्ठा भी फूंक-फूंककर पी रहे थे।

अनूप जब दिवाकर को बाहर तक पहुँचाकर वापस लौटा, तो वह आते ही बिस्तर पर धम्म से गिरा। तकिये में मुंह छिपा लिया। वह अतीत की दुनिया में लौट गया। उसकी आँखों के आगे अतीत के चल-चित्र एक-एक करके आने लगे। उसे मनोरमा से घृणा हो गई और घृणा के भाव उसके चेहरे पर छाकर रह गये।

× × ×

सुधा से मनोरमा की जो बातें हुईं, उनका निष्कर्ष यह निकला कि कुछ लोग आवारा औरतों-मर्दों की सोसायटी के थे। उन्होंने जाल फेंका। उनकी कोशिश कामयाब नहीं हुई, तभी आकर चले गये।

मनोरमा की बातों पर श्याम ने पूरा-पूरा विश्वास कर लिया; लेकिन सुधा को कुछ संतोष नहीं हुआ। वह कुछ सोचने लगी। उसने पहले भी सुना था कि अनूप मनोरमा का पति है जिसे उसने तलाक दे दी है, लेकिन उसने ध्यान इसलिये नहीं दिया था। वह मोह में अंधी जो थी। लेकिन अब आँखें खुल चुकी थीं।

सुधा ने उस दिन लाल किले में अनूप का नाम सुना था। फिर उसने बाबू रामधन के मुँह से भी वही नाम सुना। वह कुछ चौंकी और गहराई के साथ विचार करने लगी। उसके अन्तःकरण ने कहा कि इस तरह आदमी की हिम्मत नहीं पड़ सकती, जो किसी के घर में घुस जाय

किसी की वहू-वेटी को अपनी वेटी वतलाने लगे। जरूर दाल में कुछ काला है। वह आदमी कह रहा था कि उसका नाम रामधन है। वह पटना से आया है।

सुधा सोच-विचार करती रही। उसका सन्देह अधिकाधिक पुष्ट होता चला गया।

जव सुधा के मन में वात नहीं पची, तो उसने श्याम को वतलाया। श्याम को यकीन नहीं हुआ। उसने माँ से यही कहा, "माँ, तुम्हें बेकार का वहम हो गया है कि मनोरमा के वे लोग कोई थे।"

लेकिन सुधा के चित्त को शान्ति नहीं मिली। उसने यह जानने की कोशिश की कि वावू रामधन पटना में कहाँ रहते हैं। मजवूरी थी कि उसे उनका पता नहीं मालूम था।

दिन पर दिन वीतते जा रहे थे। सुधा को मनोरमा पर शक हो गया था। वह वहुत कोशिश करती कि उसके मन से यह सन्देह दूर हो जाय। मगर सन्देह टलता नहीं था वह और गहरा हुआ जा रहा था।

दोपहर की वेला थी। मनोरमा अपनी फाइनेन्स कम्पनी गई हुई थी। श्याम मोटर-पार्ट्स की दुकान पर था। वाहर पोस्टमेन ने आवाज दी। नौकर जाकर चिट्ठी ले आया।

सुधा ने जव वह लिफाफा खोला, तो देखा कि पत्र पटना से आया है। लिफाफे पर मनोरमा का नाम लिखा था और पता उसके घर का था।

सुधा ने पढ़ा। चिट्ठी में लिखा था—"मनोरमा! अव मैं तुम्हारा वाप नहीं हूँ। मैं तुम्हारे लिये मर गया। तुमने मेरी वेइज्जती श्याम से करवाई। खुद भी की। इसका मुझे वहुत वड़ा दुःख है और मैं इस अपमान को कभी भूल नहीं पाऊँगा।"

सुधा की समझ में आने लगा कि हो न हो यह व्यक्ति मनोरमा का पिता ही है। दूसरे आदमी को कौन-सी गरज पड़ी थी, जो इस तरह का पत्र लिखता।

सुधा ने आगे पढ़ना आरम्भ किया। वह गम्भीर हो गई थी। उसने पढ़ा, "मेरे लिये तुम मर गई। तुम्हारी माँ का भी यही कहना है। पत्र इसलिये लिख रहा हूँ, ताकि तुम भविष्य के लिये आगाह हो जाओ। मैं

अपना उत्तराधिकारी तुम्हें नहीं बनाऊँगा। अपनी चल और अचल सम्पत्ति को किसी धार्मिक संस्था को लिख दूँगा। तुम्हें फूटी कौड़ी नहीं दूँगा। यह मैं वसीयतनामा में लिख जाऊँगा। खबरदार, भूलकर भी पटना मत आना। मेरे घर के दरवाजे तुम्हारे लिये हमेशा-हमेशा को बन्द हो चुके हैं। हम दोनों प्राणियों ने संकल्प कर लिया है, अब जिन्दगी में कभी तुम्हारा मुँह नहीं देखेंगे।"

सुधा ने पत्र रख दिया। वह सन्नाटे में आ गई। अब उसकी समझ में आया कि मनोरमा ने एक तो सबसे चोरी की, दूसरे सीनाजोरी भी। वह एक झूठ छिपाने के लिये सौ झूठ बोलती रही। बड़ी कुशल अभिनेत्री है। इतना अच्छा अभिनय करती है कि सच और झूठ में कोई भेद नहीं रह जाता।

सुधा ने पत्र उठा लिया। उसने उसे फिर पढ़ा। बगल में बाबू रामधन का पता लिखा था। उसने वह तिजोरी में बन्द कर दिया। किसी को भी नहीं बतलाया। रात को जब मनोरमा और श्याम दोनों घर आये, तो डिनर लेने के बाद वह श्याम से कहने लगी, "मैं सोचती हूँ कि गया चलूँ। बहुत दिनों से विचार कर रही हूँ, मगर जाना नहीं हो पाता। वहाँ तुम्हारे पिता का श्राद्ध कर दूँगी। तुम भी पिण्डदान कर देना। यह बहुत जरूरी है। मैंने यह जाने कब से सोच रखा है।"

श्याम कुछ नहीं बोला। माँ की आज्ञा टालना उसने सीखा ही नहीं था।

सुधा फिर कहने लगी, "पटना विहार की राजधानी है। सुना है, वह शहर बहुत खूबसूरत है। पहले हम लोग पटना चलेंगे। कुछ दिन उस शहर की सैर करेंगे वहाँ से गया थोड़ी ही दूर है।"

"जरूर चलो, माँ। तुमने बहुत ठीक सोचा है। इसी बहाने मैं भी पटना देख लूँगा।"

"हाँ, गया से लौटते वक्त हम लोग भागलपुर चलेंगे। वह शहर भी विहार का दूसरे नम्बर का नगर है। वहाँ की साड़ियाँ बहुत मशहूर हैं।"

मनोरमा सास और पति की बातें सुन रही थी। वह बीच में बोलना चाहती थी; मगर उसने दखल नहीं दिया। उसने सोच लिया था कि जब

दोनों माँ और बेटा घर से पटना जाने के लिये रवाना होंगे, तो वह कोई-न-कोई बहाना कर लेगी, उनके साथ नहीं जायेगी ! उसकर पटना जाना खतरे से खाली नहीं है। माँ-बाप उसके दुश्मन हो गये हैं। अनूप भी उसे अच्छी निगाह से नहीं देखेगा।

दूसरे दिन पटना जाने की तैयारी हो गई। योजना यह थी कि प्रातः आठ बजे कालका मेल से सब लोग रवाना हो जायेंगे।

टिकट मँगवा लिये गये। छह बजे ही सुधा ने घर से निकलने की तैयारी की। कार पर सामान लादा जाने लगा। तभी मनोरमा ने जोर-जोर से चिल्लाना शुरू कर दिया। वह कह रही थी, "हाय, मैं मरी ! मेरी जान चली !"

श्याम घबराकर मनोरमा के पास आया और चिन्तित हो, जल्दी-जल्दी पूछने लगा, "क्या हो गया, मनोरमा ?"

"मेरे पेट में बहुत तेजी का दर्द है। तुम लोग जाओ, मैं नहीं जा पाऊँगी। दर्द ने मुझे परेशान कर रक्खा है। अब तुम लोगों का जाना नहीं रोकूंगी। तुम लोगों के जाने के बाद ही मैं डॉक्टर के यहाँ जाऊँगी।"

सुधा भी मनोरमा का चिल्लाना सुनकर दौड़ आई थी। उसने उसकी बातें सुनीं। फिर उसके चेहरे की रंगत देखी जो बराबर रंग बदल रही थी। उसने उसके माथे पर हाथ रख दिया और फिर झूठा स्नेह प्रदर्शित करती हुई बोली, "मैं शर्मा डॉक्टर बुलाती हूँ, बहू ! तुम अभी ठीक होती हो। तुम चिन्ता क्यों करती हो ? अरे श्याम ! खड़ा-खड़ा मेरा मुँह क्या देख रहा है ? जल्दी से जाकर टेलीफोन कर दे।"

जब श्याम टेलीफोन करने चला गया, तो सुधा मनोरमा से कहने लगी—"तुम्हारे बगैर हम लोग गया कैसे जा सकते हैं, बहू ? तुम्हारे ससुर का जो श्राद्ध होगा, उसमें तुम्हें भी भाग लेना पड़ेगा। अब आज का प्रोग्राम कैन्सिल करती हूँ। जब तुम ठीक हो जाओगी, तभी चलेंगे।"

मनोरमा ने जब यह सुना, तो उसका चेहरा एकदम सफेद पड़ गया। उस पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। वह व्यस्त स्वर में जल्दी-जल्दी कहने लगी, "टिकट बेकार हो जायेंगे, माँ। तुम लोग जाओ। मेरे पीछे अपना जाना क्यों रोक रही हो ?"

"टिकट वापस हो जायेंगे। तुम्हारा जाना जरूरी है, बहू। मैं अकेले कैसे जा सकती हूँ?"

मनोरमा ने जब यह सुना, तो वह मजबूर हो गई और फिर कराहने लगी। वह चिल्ला-चिल्लाकर कह रही थी—"कोई मेरा पेट चीर रहा है। अब पीड़ा सही नहीं जाती। मैं मर जाऊँगी।"

थोड़ी देर में डॉक्टर आ गया। उसने मनोरमा का पेट टटोला। आला लगाकर भी देखा। उसने कहा—"कोई खास तकलीफ नहीं है। मामूली-सा वायु का प्रकोप हो गया है। मैं इन्जेक्शन लगाता हूँ, पर्चा लिखे देता हूँ। ये अभी ठीक हो जायेंगी।"

श्याम टिकटें वापस कर आया। पटना जाने की तैयारियाँ रुक गईं। मनोरमा का यह दाव नहीं चला। वह बाजी हार गई। इसका परिणाम यह हुआ कि सुधा पहले से ज्यादा चौंक गई।

अब वह मनोरमा को जब भी देखती, तो संदेह की निगाह से। उसे उससे घृणा हो गई थी। वह उसे फूटी आँखों नहीं देख पाती।

एक सप्ताह बीत गया। उसके बाद सुधा ने फिर जाने की योजना बनाई। मनोरमा कोई भी चालाकी नहीं खेल पाई। उसे साथ जाना पड़ा।

२०

जब सब लोग पटना स्टेशन के प्लेटफॉर्म पर उतरे, तो श्याम ने एक टैक्सी की। तीनों एक होटल में जाकर ठहरे। सुधा को बाबू रामधन का जो पत्र मिला था, वह उनका छपा हुआ लेटर हेड था। उसी पर उन्होंने चिट्ठी लिखी थी। उसमें टेलीफोन नम्बर भी लिखा था।

सुधा ने लड़के और बहू को कमरे में छोड़ा। वह नीचे होटल के हाल में आई, जिसमें पब्लिक टेलीफोन लगा था। उसने बाबू रामधन को फोन किया और उस पर बोली—"मैं सुधा बोल रही हूँ, [illegible]। हम लोग देहली से पटना अभी-अभी आये हैं। मैं बहुत [illegible] मेरे घर [illegible] में आपका जो अपमान हुआ, उसके लिये मैं क्षमा —

देर के लिये होटल चले आइये। मैंने असलियत को समझ लिया है कि मनोरमा आपकी बेटी है। आपसे एक बहुत जरूरी काम है। अगर आप होटल न आये, तो मैं समझूंगी कि आपने मुझे माफ नहीं किया।"

बाबू रामधन सन्नाटे में आ गये। उन्होंने फोन पर जवाब दिया। वे बोले—"सुबह का भूला अगर शाम को घर आ जाता है, श्याम की माँ, तो वह भूला नहीं कहा जाता। मुझे इस बात की खुशी है कि आपको असलियत का पता चल गया। मैं होटल नहीं आना चाहता हूँ, क्योंकि वहाँ पर मनोरमा है और मैंने यह तय कर रखा है कि जीवन में अब मनोरमा का मुँह कभी नहीं देखूँगा। मुझे क्षमा कर दीजिये, मैं आपके हाथ जोड़ता हूँ।"

उधर से जवाब मिला—"अच्छा, अगर आप नहीं आ रहे, तो मैं लड़के और बहू को लेकर आती हूँ। मैं चाहती हूँ कि एक बार सबके सामने यह स्थिति स्पष्ट हो जाय कि मनोरमा आपकी बेटी है और श्याम से शादी करने के पहले वह अपने तीन पतियों को तलाक दे चुकी है।"

"आप आ रही हैं तो आपका स्वागत है। मगर मैं उस नालायक लड़की का मुँह नहीं देखना चाहता हूँ कोई बात नहीं, आप आइये। हम लोग आपकी प्रतीक्षा करेंगे।"

जब बाबू रामधन ने रिसीवर का चोंगा रख दिया, तो वे सीता से बोले—"मनोरमा की सास, सुधा पटना आई है। उसने मुझे होटल में बुलाया था, लेकिन मैंने जाने से इन्कार कर दिया। वह श्याम और मनोरमा दोनों को लेकर यहाँ आ रही है।"

सीता चौंक गई। दम्पति उसी विषय में बातें करते रहे। इधर ये लोग सुधा की राह देख रहे थे।

और उधर सुधा लड़के-बहू दोनों से बोली, "चलो, हम लोग शहर घूमने चलें।"

मनोरमा इन्कार नहीं कर पाई। वह जानती थी कि अगर वह नहीं गई, तो उसके पीछे सबका जाना रुक जायेगा।

थोड़ी देर तक ये लोग घूमते रहे कि सुधा ने कहा—"यहाँ तुम्हारे पिता के एक मिलने वाले रहते हैं, श्याम। उनका पता यह है।"

यह कहने के साथ सुधा ने श्याम को कागज का पुर्जा पकड़ा दिया, जिस पर बाबू रामधन का पता लिखा था। यह पता उसने खुद नोट किया था।

मनोरमा को यह मालूम नहीं हो पाया कि सब लोग कहाँ जा रहे हैं। वह भी साथ-साथ चल दी और मन-ही-मन सोचती रही कि न जाने ये लोग कहाँ जा रहे हैं, मुझे कहाँ ले जायेंगे।

जब सुधा की टैक्सी बाबू रामधन के दरवाजे पर जाकर रुकी, तो मनोरमा के काटो तो बदन में लहू नहीं।

उसने सुना, सुधा श्याम से कह रही थी—"पिछले चौराहे पर यही मकान बतलाया था, नीचे उतरकर देख लो, नम्बर वही है न ?"

श्याम नीचे उतरा, मकान का नम्बर वही था उसने माँ को बतलाया। सुधा जल्दी से उतर पड़ी; लेकिन मनोरमा टैक्सी में बैठी रही। वह नीचे नहीं आई। तब सुधा ने पीछे की खिड़की खोली और हाथ पकड़कर मनोरमा को नीचे खींच लिया। वह लाल-पीली होकर बोली—"अब पीहर आ गया है, तभी तू नीचे नहीं उतर रही है। तूने एक नाटक खेला था, जिसे देखकर मेरा लड़का तुझ पर मुग्ध हो गया। तूने ब्याह कर लिया और मेरी बहू बन गई और मैंने भी तेरे साथ नाटक खेला। यह देख, तेरे बाप ने तुझे चिट्ठी लिखी थी। मैंने किसी को नहीं बतलाया।"

यह कहने के साथ सुधा ने रामधन का पत्र मनोरमा को दिखलाया।

मनोरमा ने तीर की तरह हाथ लपकाया कि चिट्ठी उसके हाथ में आ जाय और वह उसे फेंक दे।

लेकिन मनोरमा सफल नहीं हो पाई। पत्र उसके हाथ में नहीं आया। सुधा ने जल्दी से अपना हाथ खींच लिया। दूसरे हाथ से उसने मनोरमा के गाल पर एक थप्पड़ दिया और फिर दाँत पीसकर बोली—"तू डाल-डाल है और मैं पात-पात हूँ। अगर यह चिट्ठी न आती तो मुझे यहाँ का पता ही नहीं मालूम होता। कुलटा, चुड़ैल। तीन मर्दों को तलाक देने के बाद मेरे लड़के को उल्लू बनाया। उस पर डोरे डाले। उसके साथ ब्याह कर लिया। अब मैं तुझे अपने साथ नहीं ले जाऊँगी। मेरी यही योजना थी। मैं पटना तुझे छोड़ने आई थी। चल, अन्दर चल। मैं तेरे बाप को

टेलीफोन कर चुकी हूँ।"

यह कहकर सुधा मनोरमा के दोनों हाथ पकड़ उसे घसीटने लगी मनोरमा ने भी अपनी पूरी ताकत लगा दी। सुधा उसे आगे खींचती औ वह पीछे लौट आती।

श्याम को अब माँ से कुछ भी पूछने की जरूरत नहीं रह गई थी। उसे भी मनोरमा के ऊपर क्रोध आने लगा। उसने खींचकर एक लात मारी और फिर आग-बबूला होकर बोला—"घर के अंदर क्यों नहीं चलती है ? क्या तुझे शर्म लगती है ? शर्म तब नहीं आई थी, जब तलाक-पर-तलाक देती रही।"

उधर सुधा खींच रही थी, इधर श्याम भी उसे लातों-लातों पीटने लगा। मनोरमा खिचती चली गई। सुधा ने उसे आँगन में लाकर छोड़ दिया।

रामधन और सीता ने मनोरमा की यह हालत देखी, तो उन्होंने अपना-अपना मुँह घुमा लिया।

सुधा ने मनोरमा से चिल्लाकर कहा, "अब तू मेरे साथ नहीं जायेगी। तुझे लाकर यहाँ छोड़ दिया है। अब तू जाने और तेरे माँ-बाप। श्याम से मैं तुझे तलाक दिलवा दूंगी। उसका दूसरा ब्याह करूँगी। मुझे ऐसी बहू नहीं चाहिए, जो ससुराल आने से पहले तीन-तीन घर बसा चुकी हो।"

मनोरमा में स्वाभिमान था। अब वह अपनी बेइज्जती बर्दाश्त नहीं कर पाई। उसने सुधा को कुछ भी जवाब नहीं दिया, घूमकर वहाँ से चल दी।

मनोरमा को घर से बाहर जाते देख, श्याम ने उसे टोका। वह तेज ले से बोला—"कहाँ जा रही हो मनोरमा, अब तुम्हें यहीं रहना है।"

"मैं किसी की गुलाम नहीं। मेरा जहाँ मन होगा, वहाँ जाऊँगी। तुम ाक बाद में दोगे, मैं अभी जाकर देती हूँ।"

यह कहकर मनोरमा ने जैसे ही जाने का आयोजन किया, ठीक तभी के गाल पर श्याम का एक थप्पड़ पड़ा। उसने उसकी राह रोक ली कर्कश स्वर में बोला—"अच्छा, तो अब पाँचवीं शादी करने का र है। मैं भूल गया, मनोरमा ! पिस्तौल नहीं लाया, नहीं तो तुम्हें

अभी गोली का निशाना बना देता। अब परिस्थिति यह कह रही है कि तुम्हें जहर खाकर आत्म-हत्या कर लेनी चाहिए।"

"खबरदार, जो मुझ पर हाथ उठाया। तुम मेरे कोई नहीं हो। मैं तुम्हें तलाक दे दूंगी। तुम मेरे मतलब के नहीं हो।"

"उलटा चोर कोतवाल को डाँटे! एक तो चोरी और उस पर सीना-जोरी। लोग कहते हैं कि सूप बोले तो ठीक, छलनी बेचारी क्या करेगी, जिसमें बहत्तर सौ छेद होते हैं।"

"जबान सँभालकर बात करो, श्याम! तुमने मुझे समझ क्या रखा है। मुझे किसी की परवाह नहीं है। मैंने दस लाख रुपया लगाकर फाइनेंस कम्पनी खोली है। मैं अपने पैरों पर खड़ी हूँ। मुझे किसी के भी सहारे की जरूरत नहीं।"

इस पर श्याम का हाथ फिर छूट गया। उसने तड़ातड़ कई थप्पड़ मनोरमा के गाल पर लगा दिये।

अब मनोरमा बुरी तरह खिसिया गई। वह भूखी शेरनी की तरह श्याम पर टूट पड़ी। वह भी दोनों हाथों से उस पर प्रहार करने लगी।

जब मनोरमा को दरवाजे से घसीटकर घर के अन्दर लाया जा रहा था, तभी उधर से गुजर रहा था दिवाकर। उसकी निगाह मनोरमा पर पड़ गई। वह सुधा और श्याम को नहीं पहचानता था।

टैक्सी चली गई। दिवाकर दरवाजे पर खड़ा रहा। अन्दर शोर मच रहा था। सभी लोग जोर-जोर से तड़प रहे थे।

श्याम ने जब देखा कि मनोरमा उस पर हावी हो गई है, वह उसे पीट रही है, तो उसने उसे ढकेल दिया। उसके कई लातें मारीं। ऐसे ही अवसर पर दिवाकर ने घर में प्रवेश किया। वह घटना-स्थल पर पहुँचा और श्याम से कहने लगा—"तुम चौथे पति हो। तभी मनोरमा से जीत नहीं पाते। मैं इस औरत का पहला मर्द हूँ। इसने हिन्दुस्तान को इंग्लैंड और अमेरिका बना दिया। तलाक लेना और तलाक देना इसके लिये एक मामूली-सी बात है। मैं तो यही कहूँगा कि यह औरत नहीं, दुनिया का आठवाँ आश्चर्य है।"

मनोरमा ने जब दिवाकर को देखा, तो उसे बुरा भला कहने लगी।

उसने उसे जलील किया और दुत्कारती हुई बोली—"हाँ, मैंने तुझे तलाक दिया। मैं इसे तलाक देने जा रही हूँ। तुम लोग मेरा कुछ नहीं कर सकते। जो आदमी मेरा गुलाम रह चुका है, वह मुझसे बातें क्या करेगा ? अगर तुम दोनों सच्चे मर्द होते, तो मैं तुम्हें तलाक कभी नहीं देती। हटो, मुझे जाने दो। यहाँ मेरा दम घुट रहा है।"

दिवाकर ने मनोरमा के मुँह पर एक थप्पड़ दिया। उसने उसे धक्का देकर फर्श पर गिरा दिया और फिर गुस्से से काँपता हुआ बोला—"मैंने तेरी गुलामी कभी नहीं की। तू मुझे गुलाम कहती है। अब तू कहीं नहीं जा सकती। तेरे काम मर्दों पर डोरे डालना और तरकीब से सिविल मैरिज कर लेना है। मैं तेरी तलाश में था। शिकार अपने आप ही सामने आ गया। बस, समझ ले, कुलटा, आज तेरी खैर नहीं।"

यह कहकर दिवाकर ने मनोरमा को श्याम के सुपुर्द किया। वह उससे बोला—"मैं अभी टेलीफोन करके आता हूँ। तब तक इसका ध्यान रखो। यह कहीं जाने न पाये। मैं इसके तीसरे पति को बुलाता हूँ। अभी हम दो हैं, तीसरा भी अभी आता है। चौथा आगरे है। तनिक उसकी जबानी सुन लो कि यह श्रीमती जी कितनी अच्छी हैं।"

बाबू रामधन का घर दिवाकर की ससुराल था। वह निःसंकोच दूसरे कमरे में चला गया। उसने टेलीफोन का चोंगा उठाकर कान से लगा लिया; फिर नम्बर डायल करने लगा।

अनूप को जब दिवाकर का टेलीफोन मिला, तो दिवाकर ने उसे फोन पर बतलाया कि वह इस समय बाबू रामधन के घर में है। टेलीफोन पर कुछ भी नहीं बतलाया जा सकता। मामला बहुत संगीन है। वह फौरन ही चला आए। घर में किसी को भी नहीं बतलाये। हाँ, जब आए, तो अपना पिस्तौल लाना न भूले। ऐसी शंका तो नहीं है, लेकिन उसकी जरूरत पड़ सकती है।

अनूप ने टेलीफोन रख दिया। उसने पीछे घूमकर देखा तो लीला खड़ी थी। टेलीफोन पर दिवाकर बहुत जोर-जोर से बोल रहा था, लीला ने भी उसकी सारी बातें सुन लीं। उसने जब अनूप को अपने कमरे से जाते देखा तो पीछे दौड़ी। उसने उसे मना किया कि रामधन के घर मत जाओ,

अनूप। जाओ भी, तो पिस्तौल मत ले जाना। वहाँ जरूर कोई घटना घटी है। तभी तुम्हें दिवाकर ने बुलाया है।

लेकिन अनूप ने माँ को कुछ भी जवाब नहीं दिया। उसने जल्दी से मेज की दराज खोली और पिस्तौल निकाली। उसने आव देखा न ताव, फौरन ही घर से वाहर निकल गया।

लीला हाय-हाय करने लगी। उसने पति को बुलाया और बाबू ईश्वर-लाल को सारा हाल बतलाया। दम्पति फौरन ही रामधन के घर की ओर रवाना हो गए।

जब बाबू ईश्वरलाल कार में बैठ रहे थे, ठीक तभी कर्नल वंसीलाल की जीप उनके घर के सामने आकर रुक गई। उनके साथ तुलसी थी और नीलिमा। तीनों अनूप के घर आ रहे थे।

ईश्वरलाल ने आगन्तुकों को सारा हाल बतलाया। यही कारण था कि कर्नल वंसीलाल भी उनके साथ चल दिये।

नीलिमा की समझ में नहीं आ रहा था कि दिवाकर ने अनूप से पिस्तौल क्यों मँगवाया है। उसे वहाँ पहुँचने की जल्दी हो रही थी। वह अपने में बुरी तरह परेशान हो उठी।

× × ×

जिस समय अनूप बाबू रामधन के घर पहुँचा, तो वहाँ संघर्ष हो रहा था। दिवाकर मनोरमा को पीट रहा था। श्याम भी उसे बुरा-भला कहने में जुटा था। तनिक भी देर नहीं लगी; अनूप की समझ में सारी परि-स्थिति आ गई। दिवाकर ने थोड़े में ही उसे सब कुछ बतला दिया।

अनूप ने पिस्तौल दिवाकर के हवाले कर दिया। कर्नल वंसीलाल, नीलिमा और तुलसी तीनों कमरे में आ गए। उनके पीछे-पीछे लीला चली आ रही थी। उसके साथ बाबू ईश्वरलाल भी थे।

बाबू रामधन जड़ बने खड़े थे। ऐसा लग रहा था कि मनोरमा उनकी बेटी नहीं, कोई दुश्मन है। वे न तो उसकी तरफ देखते और न उनके मुँह से कोई शब्द ही निकलता।

ठीक यही हालत सीता की थी। उसने भी बेटी की ओर से मुँह फेर लिया था। उसे तनिक भी मोह नहीं रह गया था।

जितने भी लोग आए, दिवाकर ने सबको वास्तविकता बता दी। नीलिमा ने भी देखा कि श्याम मनोरमा का चौथा पति है। उसने दाँतों के बीच में उँगली दबा ली और विस्मय-विस्फारित नेत्रों से अपनी सहेली मनोरमा को देखने लगी। उसे उसके हाल पर तरस आ रहा था। यही कारण था कि उसकी आँखों में आँसू आ गए और वह उन्हें आँचल से पोंछने लगी।

दिवाकर ने पिस्तौल हाथ में साध लिया। उसने मनोरमा को एक धक्का देकर दूर धकेला और फिर तेज गले से बोला—"मरने के लिए तैयार हो जाओ, मनोरमा! अब मैं तुम्हें जिन्दा नहीं रखूंगा। तुम्हारे पीछे मेरी जिन्दगी बरबाद हुई। मैंने शादी नहीं की। बहुत दिनों से सोच रहा था कि जब तक तुमसे बदला नहीं ले लूंगा, मेरे कलेजे की आग ठंडी नहीं होगी।

मनोरमा ने यह सुना, तो वह भयभीत हो गई। उसके मुँह से जोर की चीख निकली। लोग सन्नाटे में आ गए। लीला हाय-हाय करने लगीं। बाबू ईश्वरलाल ने दिवाकर को मना किया।

कर्नल बंसीलाल भी चिल्लाये। उनके मुँह से निकला—"दिवाकर, ऐसी नादानी मत करना। मनोरमा को उसके हाल पर छोड़ दो। उसे यहाँ से जाने दो।"

लेकिन दिवाकर गुस्से से पागल हो रहा था। उसने निशाना मनोरमा की ओर साध रखा था। उसने कहा—"हाथ ऊपर उठा लो, मनोरमा, और मरने के लिए तैयार हो जाओ। तुम्हें गोली का निशाना बनाकर खुद ही पुलिस-स्टेशन पहुँच जाऊँगा। मुझे फाँसी होगी। उसका मुझे कोई गम नहीं।"

मनोरमा का वदन पत्ते की तरह थर-थर काँप रहा था। भय के चिह्न उसके चेहरे पर स्पष्ट दिखलाई पड़ रहे थे। वह भयभीत हिरणी की तरह दिवाकर की ओर देख रहीथी।

नीलिमा रोने लगी और रोते-रोते दिवाकर से बोली—"तुम्हें मेरी सौगन्ध है, दिवाकर बाबू, मनोरमा पर गोली मत चलाना।"

मगर दिवाकर ने जैसे कुछ सुना ही नहीं। उसके मुँह से निकला—

"एक···दो···।"

अनूप की यह कोशिश थी कि वह दिवाकर के हाथ से पिस्तौल छीन ले। लेकिन तभी दिवाकर के मुँह से तीन निकला और ठाँय की एक भयानक आवाज हुई। मनोरमा चीख मारकर फर्श पर लुढ़कने लगी।

गोली मनोरमा के सीने पर लगी थी। उसकी छाती से खून का फव्वारा छूट पड़ा। वह फर्श पर कबूतर की तरह फड़फड़ाने लगी।

नीलिमा चीख मारकर रो पड़ी। रोते-रोते वह जैसे ही सहेली पर गिरी, ठीक तभी मनोरमा के प्राण-पखेरू उड़ गए। उसकी गर्दन दाहिनी ओर को झूल गई।

अब बाबू रामधन खड़े नहीं रह सके। गश खाकर गिर पड़े। सीता ने अपना माथा फोड़ डाला। वह छाती धुनने और सिर पीटने लगी। किसी ने भी नहीं जाना। दिवाकर ने पुलिस-स्टेशन को टेलीफोन कर दिया था।

मनोरमा का शव फर्श पर पड़ा था। पूरे का पूरा फर्श खून से लाल हो गया। उसके मुंह पर मक्खियाँ बैठने लगी। लीला से वह देखा नहीं गया। उसने मनोरमा की मुर्दा देह पर सफेद चादर डाल दी।

दिवाकर मुस्करा रहा था। वह पुलिस के आने का इन्तज़ार कर रहा था।

नीलिमा धीर-अधीर होकर रो रही थी। अनूप ने उसे उठाया और समझाता हुआ कहने लगा—"अब किसके लिए रो रही हो, नीलिमा ? पक्षी उड़ गया। पिंजरा खाली पड़ा है। मुझे मनोरमा की मौत का बहुत सदमा है।"

पुलिस की रेडियो पेट्रोल कार आ गई। दारोगा ने मामले की पूरी-पूरी तहक़ीकात की। दिवाकर के हाथों में हथकड़ियाँ पहना दी गईं। लाश पोस्ट मार्टम के लिए भेजी गईं।

जब पुलिस की गाड़ी बंदी दिवाकर को लेकर चली, तो अनूप अपने को रोक नहीं पाया। वह खड़े से गिर पड़ा। उसका माथा फूट गया।

श्याम ने उसे फौरन ही उठाया। तब तक रेडियो पेट्रोल कार सबकी नज़रों से ओझल हो चुकी थी।